प्रकाश पण्डित

द्वारा

अनुवादित और सम्पादित

मूल्य	:	साढ़े तीन रुपए
आवरण	:	सुशील मजूमदार
प्रथम संस्करण	:	फरवरी, १९५८
प्रकाशक	.	राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली
मुद्रक	:	युगान्तर प्रेस, डफरिन पुल, दिल्ली

क्रम

कृष्णचन्द्र



"मेरे जीवन मे ऐसी कोई बात नही जिसका मै विशेषरूप से जिक्र कर सकूं, फिर भी कुछ विवरण दिये देता हूँ।

२६ नवम्बर, १९१४ ई० के दिन मेरा जन्म हुआ। आयु का अधिकांश भाग कशमीर मे गुजार दिया। कशमीर की सुन्दरता और निर्धनता से बहुत प्रभावित हुआ हूं और सामूहिक रूप से 'सुन्दरता को पा लेने और निर्धनता को खो देने' को ही मानव और मानवता की आधारभूत समस्याए समझता हू और प्रायः इन्ही के सम्बन्ध मे लिखना पसंद करता हूं।

शिक्षा . १९३४ में फारमन क्रिश्चियन कालेज लाहौर से अंग्रेजी साहित्य मे एम० ए० किया; इसके बाद एक वर्ष तक पीलिया और हृदय-कंपन के रोगो में ग्रस्त रहा। फिर लॉ कालेज लाहौर में दाखिल हुआ और १९३७ ई० मे एल०-एल० बी० की परीक्षा पास की लेकिन वकालत की प्रैक्टिस कभी नहीं की।

१९३५ ई० के अन्त मे या १९३६ ई० के आरंभ मे उर्दू मे लिखना शुरू किया। अब तक लगभग तीन दर्जन पुस्तकें लिख चुका हूं जिनमे कहानी संग्रह भी हैं, उपन्यास भी, व्यग्यात्मक लेख भी और नाटक भी। जिनमे से

कई एक भारतीय भाषाओं के अतिरिक्त रूसी, अंग्रेजी, चीनी, चैक, पोलिश, हंगेरियन इत्यादि विदेशी भाषाओ मे भी अनूदित हो चुकी है।

आदतें . अधिक अच्छी नही। थूकता बहुत हूं, बातें कम करता हूं। भरसक प्रयत्न करने पर भी शरीर के वस्त्र साफ नहीं रहते। कभी-कभी नशा भी कर लेता हू (इसमे भांग और चरस का नशा शामिल नही)।"

कन्हैयालाल कपूर के कथनानुसार कभी 'फरियादी' था लेकिन अब 'धर्म योद्धा' और राजनीति, साहित्य और सस्कृति के विशाल अध्ययन का मालिक है। विषय-वस्तु के सम्बन्ध मे उर्दू का एकमात्र लेखक है जिसने सदैव परिस्थितियो की नब्ज पर हाथ रखा और वर्णन-शैली मे इतने नये प्रयोग किये कि आज उर्दू के कथा-साहित्य मे 'कृष्णचन्द्र स्टाइल' नाम से एक अलग स्टाइल चल रहा है और नई पीढ़ी के बहुत-से कहानीकार उससे प्रभावित हो रहे हैं।

वह किसी एक वर्ग, एक दल अथवा एक जाति का लेखक नही, पूरी मानवता का लेखक है। संसार में जहां कहीं अत्याचार होता है, कृष्णचन्द्र तुरन्त उसके विरुद्ध पीडित-जनो के मनोभाव व्यक्त करता है। जहाँ कहीं आजादी और इन्साफ की लडाई लड़ी जाती है, कृष्णचन्द्र उसका पक्ष ही नहीं लेता, मन-मस्तिष्क से उसमे अपना भरपूर योग भी देता है। उसकी क़लम प्रेयसी के केशो के स्तुतिगान के लिये नहीं, हृदय-रक्त मे डूबकर उन जीवित और आगे बढती हुई शक्तियो का इतिहास लिखने को बनी है जो पूरे विश्व को मानवता के क़दमो पर झुका देना चाहती हैं।

कलम मे तलवार की-सी काट और विचारो मे लहरो का-सा प्रवाह रखने वाले इस महान कलाकार पर उर्दू साहित्य ही को नहीं, समस्त भारत को यथोचित गौरव है।

वेक्सीनेटर

"जब मैं एफ० ए० मे फेल होकर इस गाँव मे वेक्सीनेटर बनकर आया, तो वह चीज़, जिसने सबसे अधिक मुझे अपनी ओर आकर्षित किया, रेशमाँ थी। रेशमाँ की सुन्दरता की चर्चा तो मै इससे पहले भी बहुतो से सुन चुका था। विशेष कर रास्ते मे एक पुलिस सार्जेण्ट ने, जब उसे मालूम हुआ कि मैं पिंडोर के गाँव मे वेक्सीनेटर बनकर जा रहा हूँ, मुझे बताया—"पिंडोर की मनोहर घाटी मे तो बहुत-सी चीजे और स्थान देखने योग्य है—लक्ष्मण कुण्ड जिसकी गहराई का पता आज तक अंग्रेज भी न लगा सका! जागीरदार साहब का पुराना महल, जिसके चौकोर बुर्ज धूप मे सोने की तरह चमकते है, और जो आजकल उजाड़ पडा है और केवल उसी समय काम मे लाया जाता है, जब जागीरदार साहब या उनके मेहमान या लड़के-वाले कभी पिंडोर की घाटी मे शिकार खेलने के उद्देश्य से आते है। खट्टे अनारो का जगल, जो पिंडोर की पश्चिमी पहाड़ियो पर फैला हुआ है और जहाँ जगली सेब, आलूचे और अमलूक के पेड भी पाये जाते हैं, जहाँ जगली गुलाब की बेलें किसी प्रेमी की बाहो की भाँति उन फलदार वृक्षो से हर समय लिपटी रहती है और जिनकी गोद मे बनफशे के फूल प्रतिक्षण मुस्कराते और शरमाते है। हाँ, पिंडोर की घाटी मे बहुत-सी चीजे दर्शनीय है। लेकिन अगर वहाँ तुमने रेशमाँ को न देखा, तो

समझ लेना कि तुमने पिंडोर मे कुछ भी नही देखा।"

"सचमुच ?" मैंने धीरे से पूछा।

"खुदा की कसम !"—पुलिस सार्जेण्ट ने एक लम्बी आह भरकर कहा, और घोडे पर सवार होकर चला गया।

यद्यपि मुझे विश्वास तो अब भी न हुआ, लेकिन रेशमाँ को देखने का चाव दिल मे घर कर गया। आखिर वह भी ऐसी क्या हसीन परी होगी ? इन पुलिस वालो की बातो पर विश्वास कम ही करना चाहिये। और फिर औरतो के विषय मे तो उनका यह विश्वास है कि हर औरत सुन्दर होती है, चाहे वह मिट्टी ही की क्यो न हो !

अब तो मेरी हालत उस बूढे मुर्गे की-सी है जो जवानी चली जाने पर भी अपने को जवान समझता है। लेकिन उन दिनो जब मैं नया-नया वेक्सीनेटर बनकर यहाँ आया था, तो मेरा रग-रूप बहुत से लोगो के लिए ईर्ष्या का कारण था। इसमे भी सदेह नही कि उन दिनो गाँव भर मे मैं ही अपने ढग का सजीला जवान था और फिर एण्ट्रेन्स पास और सफेद लट्ठे की शलवारे पहनने वाला ! ग्यारह रुपये वेतन था, कुलाह पर तुर्रेदार पगडी, पाँव मे कामदार जूते और चेहरे पर मूँछे साइकिल के हैंडिल की तरह मुडी हुई। हाँ, वह जमाना था मेरे बाँकपन था। अब तो यौवन का वसन्त पतझड मे बदल चुका है।

आह दोस्त, वे भी क्या दिन थे ! काश, तुमने मुझे जवानी मे देखा होता। गालिब के दीवान मे एक शेर मुझे बहुत पसन्द है, वह है···वह है·· आह, इस समय कमबख्त मुझे याद नही आ रहा है, दिमाग चकरा···ज़बान पर आ रहा है, लेकिन·· अच्छा···

हाँ, तो मैं रेशमाँ के विषय मे कह रहा था, लेकिन मैं रेशमाँ के विषय मे क्या कहूँ ?

रेशमाँ की आँखे, उन नीली पुतलियो की अथाह गहराइयाँ, वे आँखें उन दो स्वच्छ व पवित्र झीलो की भाँति थी, जो किसी ऊँचे पर्वत की चोटी पर स्थित हो, जहाँ किसी मनुष्य के कदम भी न पहुँचे हो। रेशमाँ के

कोमल होठ, शरमाये और लजाये-से होठ—मानो वे अपनी सुन्दरता पर स्वयं लजा रहे हो। उसके कोमल हाथ, सफेद अँगुलियो की पोरें जगली गुलाब की कलियो की तरह सुन्दर थी। उसकी चाल—जैसे वसन्त की देवी अपनी समस्त मनोहरता और सौदर्य को लिये वायु के झोको पर इठलाती हुई आ गई हो। उसकी आवाज सनोबर के जगलो मे घूमते हुए गडरिये की बाँसुरी की भाँति मधुर, और शीतल झरनो के स्वर की भाँति लोचदार। उसका कद—फारसी का एक शेर है, एक बहुत ही उपयुक्त शेर है, लेकिन'''कमबख्त याद ही नही आ रहा है, बिल्कुल जबान पर फिर रहा है, आह! क्या खूब शेर था, नजीरी का शेर, नही, इरफी का, आह! अब स्मरण-शक्ति कितनी कमजोर हो गई है! कुछ याद नही रहता—कुछ याद नही रहता। मुझे अब तो अपनी कवितायें भी याद नही। आश्चर्य है, उन दिनो मेरी स्मरण-शक्ति कितनी प्रबल थी!

तो यह थी रेशमाँ, पिंडोर की सुन्दर घाटी की सुन्दरी! निस्सन्देह वह एक दुर्लभ चीज थी और लोग दूर-दूर से उसे देखने के लिये आया करते थे। उसके बाप के पास प्रतिदिन रेशमाँ के सम्बन्ध के लिये सदेश आया करते। कोई पाँच सौ रुपये, कोई एक हजार, कोई डेढ हजार, और कोई मनचला तीन हजार रुपये तक देने को तैयार था, लेकिन उसका बाप शायद जवाब मे इकार करना ही जानता था। कम से कम मैंने तो उसे किसी से हामी भरते नही देखा, न सुना—खुदा जाने उसके मन मे क्या था! शायद वह अपनी लडकी को किसी बादशाह के साथ ब्याहना चाहता था, और यो रेशमाँ भी तो किसी बादशाह के घर के ही योग्य थी!

लेकिन, जैसा कि मैंने कहा, जवानी बुरी बला है, और जवानी का प्रेम उससे भी अधिक खतरनाक! मैंने रेशमाँ को देखते ही समझ लिया कि दुनिया मे रेशमाँ केवल मेरे लिये है, और मैं उसके लिये। और यह ठान लिया कि चाहे उसके बाप को जान ही से क्यो न मार डालना पड़े, लेकिन अगर विवाह करूँगा, तो केवल रेशमाँ से, नही तो जान पर खेल जाऊँगा। उसके सारे घर की हत्या कर डालूँगा, सारे गाँव को आग लगा दूँगा, उसके सामने पहाडी पर से नीचे नाले मे कूद कर मर जाऊँगा, लेकिन यह कभी न होगा कि मेरे जीते

जी मेरी रेशमाँ को कोई और व्यक्ति, चाहे वह जागीरदार का बेटा ही क्यो न हो, ब्याह कर ले जाय। जवानी मे आदमी कैसी-कैसी विचित्र बाते सोचा करता है—मूर्खता की बाते—फिजूल, खतरनाक, अदूरदर्शिता की बाते!

तो साहब! मैंने रेशमाँ के प्रेम मे सिर-धड की बाजी लगा दी। लोगो को टीका-वीका लगाना कैसा? हर समय रेशमाँ के पीछे-पीछे फिरने लगा, पागल कुत्ते की तरह। वह झरने पर पानी भरने जाती तो मुझे पहिले ही मौजूद पाती। चरवाहो के साथ जगल जाती, तो मै भी अपनी तोडेदार बदूक लिए हुए जगल मे पहुँच जाता। मै उन दिनो गाना भी बहुत अच्छा गाता था, मेरा मतलब हे कि मैं माहिया बहुत बढिया गाया करता था, और बहुधा लोग मेरे माहिया गाने पर बहुत प्रसन्न होते थे। कहते थे कि कोई मीरासी भी इतना अच्छा माहिया नही गा सकता। लेकिन अब वह दिन कहाँ? अब तो दिन मे मुझे दस बार खाँसी की शिकायत होती हे। तुम शहर मे रहते हो, कभी कोई अच्छी सी दवा ही भेज दिया करो। नही तो तुम्हारे शहर मे रहने से हमे क्या फायदा?

खैर!...एक दिन की बात है—मै किसी निकट के गाँव से चेचक के टीके लगा कर वापस आ रहा था। शाम हो चुकी थी और पश्चिम से हल्की-हल्की हवा चल रही थी। मैं बहुत दुखी था, क्योकि दिन भर मैं गाँव से बाहर रहने के कारण रेशमाँ के दर्शन से वचित रहा था, अत बहुत ही करुण स्वर मे धीरे-धीरे—'फ़िराके जानाँ मे हमने साकी लहू पिया है शराब करके।'—गाता हुआ चला आ रहा था। मैं उस समय बहुत उदास था। मेरी आँखो मे शायद उस समय आँसू छलक रहे थे और मुझे अपने आप पर बहुत क्रोध आ रहा था। गांव की सीमा मे दाखिल होने से पहले रास्ते मे एक खूबानी का वृक्ष आता है, अत. जब मैं उस खूबानी के वृक्ष के निकट पहुँचा, तो क्या देखता हूँ कि तने का सहारा लिये अपने सुनहरी काकुलो को अपने कोमल कन्धो पर बिखराये रेशमाँ खड़ी मेरी राह देख रही है। मैं ठिठककर खडा हो गया।

कुछ क्षण सदियो की तरह बीते। फिर रेशमाँ बोली, अपने कोमल और मधुर स्वर मे—"जी, आप मुझे क्यो तग करते हैं?"

मैंने कहा—"इसलिये कि मै तुम्हे चाहता हूँ, और तुम्हे देखे विना जिन्दा नही रह सकता।"

रेशमाँ वोली—"जी, मुझे सव सहेलियाँ ताने देती है और फिर आपका इस तरह मेरे पीछे-पीछे फिरना ठीक भी तो नही ! मैं आपको गालियाँ दूँगी, तो फिर आप..."

मैंने कहा—"तो मैने कव मना किया है ? आप शौक से गालियाँ दे। मैं उन्हे सुनता जाऊँगा और फिर इकट्ठा कर लूँगा, फिर फूलो की तरह उनका हार वनाकर अपने गले मे पहन लूँगा।"

रेशमाँ वोली—"हम ठहरी अनपढ ! भला हमे आपकी तरह वाते वनाना कहाँ आता है ? लेकिन मैं आपसे फिर कहती हूँ, खुदा के लिए आप मेरा पीछा करना छोड दे। अव्वा आपकी जान के गाहक हो रहे है। कहते थे—अगर वह लडका न माना तो उसे कत्ल कर डालेगे।"

मैंने सिर झुकाकर कहा—"यह सर हाज़िर है। अभी गरदन उडा दीजिये। अगर उफ भी कर जाऊँ तो..."

रेशमाँ ने एक अजीव अदा से सिर हिलाकर कहा—"हाय, मैं यह कव कहती हूँ कि आप मर जायँ, लेकिन आखिर 'आप चाहते क्या हे ?"

"मैं कुछ नही चाहता।" मैंने अपना हाथ अपने कलेजे पर रख कर कहा—"हाँ, सिर्फ यह चाहता हूँ, कि जव तुम यहाँ से चली जाओ तो तुम्हारे प्यारे चरणो की धूल अपने माथे पर लगा लूँ, और तुम्हारा नाम लेता हुआ इसी दम इस ससार मे विदा हो जाऊँ।"

रेशमाँ मुस्कराई। एक वालिका की तरह नही, वल्कि एक स्त्री की तरह मुस्कराई। उसने पलके उठाकर एक क्षण के लिए मुझे देखा, फिर वे पलके गुलाव के फूलो की तरह सुन्दर और कोमल कपोलो पर झुक गई। दूसरे क्षण वह हँसती हुई वहाँ से भाग गई। भागती जाती थी और मुड-मुडकर मेरी ओर देखती जाती थी।

कुछ क्षण तो मैं चुपचाप पत्थर की मूर्ति की भाँति निश्चल खडा रहा, फिर मैंने भी रेशमाँ के पीछे तेजी से भागना शुरु किया। वह एक हिरणी के

समान तेज भाग रही थी। उसके मुँह से हँसी की चीखे निकल रही थी। धीरे-धीरे, लेकिन विश्वस्त रूप से, हम दोनो के बीच का अन्तर कम हो रहा था।

अब मैं उसके बिल्कुल निकट आ गया था, लेकिन अभी उसे छू नही सका था।

वह अब अधिक तेजी से भागने लगी।

लेकिन मैं अब और भी निकट आ गया था और हमारे बीच बिल्कुल थोडा-सा अन्तर रह गया था।

"देखो, हमे 'हमारा पीछा मत करो'' मै कहती हूँ, यह अच्छा नही।"

एक छलाँग लगाकर मैने उसे जा दबोचा और गोद मे उठा लिया।

"अब किधर जाओगी ?" मैने कहा।

"मुझे छोड दो'''मुझे छोड़ दो'' मै घर जाऊँगी।" उसने धीमे स्वर मे कहा।

मै एक चनार के वृक्ष के निकट जाकर रुक गया और उसे हरी घास पर धीरे से गिरा दिया, और फिर उसके पास ही सुस्ताने के लिए बैठ गया।

"देखा तुमने ? तुम मुझसे भागकर कही नही जा सकती।" मैंने हँसकर कहा।

वह चुप बैठी रही और अपने बिखरे बाल ठीक करती रही।

हम गाँव से बहुत दूर निकल आये थे। सध्या की लाली गायब हो चुकी थी, लेकिन फिर भी नदी का पानी एक चाँदी के तार की भाँति चमक रहा था। हाँ, पहाडो पर अब जगल नही दिखाई देते थे—अधकार की कालिमा मे लुप्त हो चुके थे। कही-कही तारे भी निकल आए थे।

मैंने रेशमाँ से पूछा—"तुम मुझसे विवाह कब करोगी ?"

"कभी नही।"

"क्यो ?"

"तुम तेली हो, हम मुगल हैं।" रेशमाँ ने शोखी से कहा।

"इससे क्या होता हे ?" मैंने रेशमाँ का हाथ अपने हाथ मे लेकर कहा

"क्या तुम्हे मुझसे प्रेम नही है ?"

"कभी नही।"

"तो फिर तुम मेरे पास क्यो बैठी हो ?"

जवाब मे रेशमाँ ने मुझे प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखा, फिर सहसा वह कुछ सोचकर काँप उठी और धीरे से कहने लगी—"मै आज खूब पिटूँगी। अब्बा मुझे ढूँढ रहे होगे। लेकिन यह कह तो आई थी कि मै मौसी के यहाँ जा रही हूँ, मगर अब देर भी तो बहुत···"

मैने बात काटकर कहा—"तुम जैसी नटखट लडकियाँ इसी योग्य है कि उन्हे खूब पीटा जाय।"

रेशमाँ बोली—"मै जानती हूँ कि तुम मुझे कभी नही पीटोगे।"

मैंने कहा—"हाँ, क्योकि मै एक तेली हूँ और तुम मुगलजादी हो।"

रेशमाँ ने अपना कोमल हाथ मेरे कन्धे से लगाया, फिर एकदम अपना सिर मेरी छाती पर रख दिया—"तुम कितने नासमझ हो !" उसने एक आह भर कर कहा।

और मुझे ऐसा जान पडा कि एकाएक आकाश के सितारे खिलखिला कर हंस पडे है और चन्द्रमा के प्रकाश मे सफेद-सफेद बादलो की काँपती हुई कोमल परछाइयाँ किसी अज्ञात प्रसन्नता के कारण नाचने लगी है और पछुआ वायु के झोके चनार के पत्तो मे छिप-छिपकर अमर जीवन के गीत गा रहे है। मैने रेशमाँ की लम्बी-लम्बी लटो मे उँगलियाँ फेरते हुए महसूस किया कि यह प्रसन्नता मेरे लिए असहनीय होगी। और जब मैने विवश होकर उसके होठो पर अपने होठ रख दिए, तो मुझे प्रतीत हुआ कि उन होठो मे पहाडी मधु की-सी मधुरता है और धधकते हुए अगारो की-सी गरमी और जलन ! दोनो ही विलक्षण अनुभव थे—एक कष्टप्रद प्रसन्नता और एक आनन्ददायक कष्ट !

इसके बाद आठ-दस दिनो का हाल मैं तुम्हे अच्छी तरह नही बता सकता। कुछ याद नही आता। जीवन एक सुखमय स्वप्न की भाँति बीत रहा था, जिसमे मै और रेशमाँ ही थे। कुछ विचित्र-सी हालत थी। शराब का-सा नशा, मनोहर सगीत की-सी मस्ती, सारा गाँव स्वर्ग-सा दीख पड़ता था और दूर से

जागीरदार साहब के पुराने महल के बुर्ज सोने के कलसो की भाँति चमकते थे--विचित्र और रहस्यमय ! मुझे ऐसा लगता था मानो यह समस्त संसार, प्रकृति की सुन्दरता, पक्षियो का कलरव, बेफिक्र गडरियो के ठहाके हमारे ही लिए पैदा किये गये हैं--मेरे और रेशमाँ के लिए, ताकि शाम के झुटपुटे मे हम दोनो छिप कर और बाहो मे बाहे डालकर गाँव से बाहर किसी नन्हे से उपवन मे जा बैठे और इन दृश्यो का आनन्द उठाये ।

मगर यह सब कुछ आठ-दस दिन के लिए था । इसके बाद एक क्रूर हाथ ने एक जोरदार झटके के साथ मेरे मनोहर स्वप्न को बिखेर दिया । ठीक उस दिन जब हम दोनो ने गाँव से भाग जाने की सलाह की थी, रेशमाँ के जालिम बाप ने उसे जागीरदार साहब के बडे लडके के हवाले कर दिया । यह तो मुझे बाद मे मालूम हुआ कि बहुत दिनो से गुप्त रूप से सलाह हो रही थी । जागीरदार साहब का बडा लडका बडा दुराचारी है । जिस तरह बडे आदमियो की आदत होती है, वह रेशमाँ पर लट्टू था । कही शिकार खेलते, आते-जाते देख लिया होगा, बस रेशमाँ के बाप पर डोरे डालने शुरू कर दिए । इधर मेरी लापरवाही का यह हाल कि मुझे उस समय पता चला, जब रेशमाँ शहर मे जागीरदार साहब के महल मे पहुँचाई जा चुकी थी ।

यह चोट इतनी गहरी और अचानक थी कि मैं अपने हवास ठीक न रख सका । लोग कहते हैं कि इस घटना के बाद दो वर्ष तक मैं पागल-सा रहा, सूख कर बिल्कुल काँटा हो गया था, दर-दर घूमता था और लोगो से कहता था--"मुझे बचाओ, मुझे बचाओ, वह मुझे काटने को आ रही है ।" बस यही शब्द थे, जो हर समय मेरी ज़बान पर रहते थे । सुना है कि एक दिन जब मैं जागीरदार साहब के शहर मे घूम रहा था, उन्होने मुझे कही देख लिया और जब किसी मुसाहिब से उन्होने मेरी राम-कहानी सुनी, तो मुझ पर बहुत तरस खाया और इलाज के लिए शिकारपुर के पागलखाने मे भेज दिया । हाँ, जब मैं दो वर्ष के बाद स्वस्थ हो गया, तो मुझे फिर अपने पुराने स्थान पर उसी घाटी मे नियुक्त करा दिया लेकिन इस गाँव मे नही, बल्कि दूर के गाँव मे, जो यहाँ से दस मील दूर था ।"

इतना कहकर वेक्सीनेटर चुप हो गया, और हुक्का गुडगुडाने लगा। रशीद ने धीरे से पूछा—"और रेशमाँ ?" "तुमने उसे फिर कभी देखा ?"

"रेशमाँ जागीरदार साहब के बडे लडके के महल मे है। यद्यपि वहाँ स्त्रियाँ बहुत है, लेकिन रेशमाँ को अपने स्वामी की चहेती होने का गर्व जरूर हासिल है। उसके दो लडके भी है'''मैंने उसे आठ-नौ वर्ष हुए, उसके बाप के घर इसी गाँव मे देखा था, जब वह अपने भाई के विवाह के अवसर पर यहाँ आई थी। उसका बाप, अब क्या यह भी बताने की जरूरत है, कि इस गाँव का नम्बरदार है और इलाके का जिलेदार। उसका मकान पत्थरो से बना है। तुमने रास्ते मे देखा तो होगा, वह जिस पर टीन की छत है और जिसके पीछे एक बडा-सा बगीचा है। मैंने उसे बगीचे मे देखा था। वह सुन्दर रेशमी वस्त्र पहने टहल रही थी। उसके साथ उसके दोनो छोटे-छोटे लडके थे। वह अब बेहद सुन्दर थी। उसकी चाल राजकुमारियो जैसी थी। मै देर तक बाडे की ओट मे खडा उसे देखता रहा। रेशमाँ, जो कभी मेरी पत्नी होती, रेशमी कपडो के बजाय वह लाल धारी की भारी कमीज और छीट की कमीज पहनकर मेरे अपने बच्चो को लेकर यूँ टहलती, यह सोचकर मेरी आँखो मे आँसू भर आये और उन्हे पोछने की कोशिश किये बिना ही मैं बाडे की ओट से बाहर निकल आया और उसे गालियाँ दी। उसके सारे खानदान को जी भरकर और चिल्लाकर कोसा और उस समय तक वहाँ से न टला, जब तक लोग मुझे वहाँ से खीचकर और घसीटकर दूर न ले गये।

"और रेशमाँ ने तुम्हे कुछ न कहा ?" रशीद ने पूछा।

"नही, मुझे देखकर वह ठिठककर खडी हो गई। फिर उसने गर्दन झुकाली और चुप-चाप गालियाँ सुनती रही। उसकी आँखो की नीली झीलो मे आँसुओ के स्रोत बह निकले और उसने अपने काँपते हुए हाथो से अपने दोनो लडको को अपने साथ चिपटा लिया। बाद मे जब वह अपने गाँव से चली गई, तो उसकी एक पुरानी सहेली ने मुझे बताया कि उसके इस सवाल पर कि तुमने वहाँ बगीचे मे खडी रहकर उसकी गालियाँ क्यो सुनी, रेशमाँ ने जवाब दिया—"उस समय वह अगर मुझे पीट डालता या जान से भी मार डालता, तो भी

मैं वहाँ से न हिलती ।" फिर उसने कहा—"मेरी प्यारी सखी ! वे गालियाँ नही थी, फूल थे—मेरे प्रेमी के, जिन्हे मैंने चुन-चुनकर अपने आँसुओ के तार मे पिरो लिया और अपने हृदय की समाधि पर चढा दिया, ताकि प्रेम की समाधि सूनी न रहे' ।"

"लेकिन," वेक्सीनेटर ने करुण स्वर मे अपनी कहानी समाप्त करते हुए कहा—"मुझे अब किसी पर क्रोध नही, किसी से प्रेम नही, मैं अब किसी का लिहाज़ नही करता । पहले चेचक के टीके मुफ्त लगाता था, अब दो आने लिये बिना किसी के बाज़ू को हाथ तक नही लगाता । मुझे किसी की परवाह नही। मैं अपना रुपया ड्यौढे सूद पर उधार देता हूँ । इस गाँव मे सिवाय रेशमाँ के बाप के सब मेरे ऋणी हैं । वे मुझे कजूस और जालिम कहते है, लेकिन उन्होने कब मेरा भला चाहा ? उनका बस चले, तो मुझे आज मार डाले, लेकिन मुझे किसी की परवाह नही, किसी से प्रेम नहीं, मेरे पास रुपया है, जमीन है, बाल-बच्चे है, तीन निकाह कर चुका हूँ, मुझे किसी की परवाह नही, किसी से प्रेम नही, किसी पर गुस्सा नही । मैं जागीरदार साहब की वफादार प्रजा हूँ, उनका गुलाम हूँ ।"

"क्या सचमुच तुम्हे किसी पर गुस्सा नही आता ?" रशीद ने तीक्ष्ण दृष्टि से वेक्सीनेटर की ओर देखकर पूछा ।

वेक्सीनेटर घबरा-सा गया। आँखे नीची करके बोला—"नही, हरगिज़ नही । मेरा दिल साफ हे, लेकिन दोस्त . . ." अब वेक्सीनेटर ने अपनी निगाहें ऊपर उठा ली और रशीद की ओर लज्जित-सी दृष्टि से देखकर कहने लगा "मैं एक बात तुमसे कहना चाहता हूँ । उसे कहते समय मेरा सीना फटा जाता है, और मैं तुमसे यह बात कहे बिना नही रह सकता । वह बात जागीरदार साहब के इस पुराने महल के बुर्जो के विषय मे है । मैं इन्हे धूप मे सोने की तरह चमकते हुए देखकर पागल हो जाता हूँ । मुझे ऐसा लगता है, मानो वे मुझ पर हँस रहे हैं, मुझे चिढा रहे हैं । मैं उन्हे साफ कहते हुए सुनता हूँ—'तुम हमे नही जानते । हम अब भी तुम्हारी दुनिया को बरबाद कर सकते है, तुम्हारे सुख और शान्ति को धल मे मिला सकते हैं, तुम्हारे जीवन के उल्लासो को

पाँव-तले रौंद सकते है। तुम हमे नही पहचानते। हा! हा! हा!"

"और मै पागल हो जाता हूँ, और सोचता हूँ कि जब तक ये चमकते हुए बुर्ज मौजूद है, मेरे मन को शाति नही प्राप्त हो सकती। बहुधा मेरे मन मे विचार उठता है कि एक-दो रुपये की बारूद लेकर मैं रात के समय इस पुराने महल के निकट जाऊँ और बारूद लगाकर भक से इन बुर्जों को उडा दूं, तो ''तो'''लेकिन मैने हर बार इस विचार को मन मे जोर से दबा दिया है।"

और वेक्सीनेटर ने रहस्यमय लहजे मे रशीद की ओर झुककर कहा—"लेकिन एक दिन मै इस काम को अवश्य पूरा करके छोडूंगा'''।"

राजेन्द्रसिंह बेदी



मैं राजेन्द्रसिंह बेदी पहली सितम्बर १९१५ को लाहौर छावनी मे उत्पन्न हुआ। बाल्यकाल का पहला भाग गाँव में और शेष शहर लाहौर मे गुजरा। एफ० ए० तक शिक्षा पाई। गणित मे सदा उतना ही कमजोर रहा जितना आर्ट्‌स मे अच्छा।

अग्रेजी और पंजाबी मे लिखना शुरू किया, लेकिन अपने पढने वालो की सख्या बढ़ाने के विचार से उर्दू मे लिखने लगा। पहली प्रसिद्ध कहानी 'भोला' थी जो 'अदबी दुनिया' (मासिक पत्रिका) के वार्पिकाक मे प्रकाशित हुई। उसके बाद 'गरम कोट' 'हमदोश' 'पान शाप' आदि थीं। फिर कहानी-सग्रह 'दाना-ओ-दाम' प्रकाशित होकर प्रसिद्ध हुआ—इतना प्रसिद्ध कि उर्दू की असंख्य पुस्तको की तरह तीन साल मे उसका एक हजार का सस्करण भी न बिक सका।

मैं केवल कहानियाँ ही नहीं लिखता मेरे बीवी बच्चे भी हैं, हालाँकि साहित्य मेरा पहला प्रेम है। जी चाहता है कोई धनाढ्य विधवा मुझ से दूसरा विवाह करने पर तैयार हो जाए या कोई धनाढ्य व्यक्ति मुझे अपना दत्तक पुत्र बना ले तो आराम से बैठा लिखा करूँ।

अब तक तीन कहानी-संग्रह 'दाना-ओ-दाम' 'ग्रहन' और 'कोखजली' और नाटको का एक संग्रह 'सातखेल' के नाम से प्रकाशित हो चुके हैं।

पता—१८, सोसाइटी बिल्डिङ्ग, मटूंगा, बम्बई—१९।

"शेक्सपीयर बड़ा है या मै ?" यह प्रश्न बर्नार्डशा ने किया था और स्वयं ही उसका उत्तर देते हुए लिखा था कि मै शेक्सपीयर से बड़ा हूँ।

दो बड़े लेखको मे से किसी एक को दूसरे से प्रधानता देना कोई सरल काम नहीं है। अतएव आज जहाँ कही यह विवाद उठता है कि कृष्णचन्द्र बड़ा कहानी लेखक है या राजेन्द्रसिह बेदी तो प्रायः यह विवाद इस बात पर समाप्त हो जाता है कि दोनो न केवल बडे वरन् महान् कहानी लेखक हैं। लेकिन इस बात पर लगभग सब सहमत हो जाते हैं कि कृष्णचन्द्र के यहा विषयो की विभिन्नता तथा शैली का सौन्दर्य है, जो पाठक के मस्तिष्क को तुरन्त पकड़ मे ले लेता है और बेदी के यहाँ प्रेक्षण की गहराई, विषय और रूप का सुन्दर समावेश और मानव अन्तरात्मा तक पहुँचने की सामर्थ्य अधिक है।

बेदी कोई दूर की कौडी नहीं लाता, बल्कि भारत की प्राचीन परपराओं की नींव पर खड़े होकर नई परम्पराओ की नींव रखता है। उसके पात्र समाज के स्वस्थ पात्रो के रूप मे सामाजिक उत्तरदायित्व का इतना बड़ा बोझ उठाते हुये नजर आते है कि एक साथ उनके प्रति सहानुभूति भी उत्पन्न होती हे और उनकी महानता को भी स्वीकार करना पडता है। बेदी ने उर्दू कथा साहित्य को कुछ ऐसी कहानियाँ दी हैं जिन पर न केवल उर्दू साहित्य को बल्कि पूरे भारत को गर्व हे और जिन्हे आधुनिक काल की किसी भी उन्नत भाषा की कहानियो के मुकाबले मे पेश किया जा सकता है।

बेदी नि.सन्देह उर्दू साहित्य का वह प्रशंसनीय कलाकार है जिसने वास्तविक रूप मे प्रेमचन्द की परम्पराओं को आगे बढाया है।

राजेन्द्रसिंह बेदी

टर्मिनस

जेजो—या यों कहिये कि जेजो दुआवा, उस लाइन का अन्तिम स्टेशन था और गाडी उसकी ओर बेतहाशा भागी जा रही थी। जिस प्रकार बुझने से पहले दीपक में एक तेज़ लौ पैदा हो जाती है, उसी प्रकार गाडी की गति में भी एक तीव्र लौ सी पैदा हो रही थी। दायें-बायें शिवालिक की पहाडियाँ दो लम्बी-लम्बी बाहो के रूप में खुल रही थी और उस विस्तृत गोद के भीतर छोटे-छोटे टीले, 'गैंग हट', साधारण झाडियाँ और झोपडियाँ गाडी के आखरी डिब्बे को पकडने के लिए पीछे की ओर भागी जा रही थी। दूर कहीं पिट्ठू और पशु गोफिये में पडे हुए ककरो की तरह एक बडे दायरे में घूमते दिखाई देते थे।

इस समय वर्षा थमी हुई थी, लेकिन कचनार और आम के पेडो की काली छाल से अनुमान होता था कि दिन और रात के चार पहरो में पानी बहुत ज़ोर का पड गया है। सूरज वर्षा ऋतु की सन्ध्या के चचल अन्तरिक्ष के बीच बादल के शुतरमुर्ग के एक टुकडे में उलझा हुआ, झेंपता दिखाई देता था। एक लम्बी बरसात के बाद उसकी सुन्दरता उदासीनता उत्पन्न कर रही थी और धरती पर यहाँ-वहाँ बिखरा हुआ पानी यों दिखाई देता था जैसे कोई बहुत बडा शीशा आकाश से धरती पर गिरकर टुकडे-टुकडे हो गया है।

कभी एकाएक ऐसा अनुभव होने लगता, जैसे बाहर दिखाई देने वाला प्रत्येक दृश्य हमारे ही किसी भीतरी दृश्य का कठोर प्रतिबिम्ब है—जयराम उदास था और उसे वातावरण मे उदासी ही उदासी भरी हुई दिखाई देती थी। वह गाडी मे खिडकी के पास बैठा, अपनी विह्वलता मे नथनो के बाल उखाडता हुआ जेजो दोआवा टर्मिनस की प्रतीक्षा कर रहा था। कभी वह पीडावश अपनी सीट पर उछल जाता और कभी सामने चोटियो पर धुंधली-सी दिखाई देने वाली बर्फ को देखकर उसकी उँगलियाँ उसके सफेद बालो मे धस जाती और वह सोचता—जिस तरह गाडी एक धुन के साथ अपने अन्तिम लक्ष्य की ओर भागी जा रही है, उसी प्रकार शायद मैं भी अपने अन्तिम लक्ष्य की ओर लपका चला जा रहा हूँ।

एकाएक उसे नथनो के बाल उखाडने से अधिक दिलचस्प व्यवस्था याद आ गई। उसने सामने की सीट पर पडी हुई बुढिया को झझोडते हुए कहा—'भोली माई, उठ—देख तेरा जेजो आ रहा है।"

माई हडबडा कर उठ बैठी। उसके चेहरे का तेज, जो चालीस वर्षीय रडापे और उत्तराधिकार-हीनता का सूचक था, और जो एक दीर्घ, अर्थहीन स्वप्न के कारण धीमा पड गया था, उग्र हो उठा और वह एक बच्चे की तरह प्रसन्न होकर बोली—'आ गया जेजो—बस यहाँ से सात कोस परे रहते है मेरी बेटी और जमाई—मेरी सीता राम की जोडी।"

बाहर से एक नन्ही-सी ककडी उटी और जयराम की आँख मे पड गई। कुछ देर के लिए उसकी आँखे भीतर को सिमट गई। पुतलियाँ कुछ फैली और वास्तविकता की चुभन के बावजूद उसे बीते समय के भयानक स्वप्न दिखाई दिये। परिश्रमी किन्तु परिश्रात जयराम ने अपने अतीत मे झाका तो उसे अपने आनन्द-रहित फीके पचास वर्षो मे एक जीवन-वर्धक क्षण दीख पडा। उस समय जब कि जयराम जीवन की बीसवी पतझड देख रहा था—करतारपुर स्टेशन की प्याऊ पर एक लडकी उसकी ओर देखकर मुस्कराई थी और जयराम का मन, प्रेम के गोफिये मे पडा रहा था।

ककरी के निकलते ही एक बखान सा लगा और पास के शोर-गुल मे पता

चल। कि गाडी जेजो दोआबा टर्मिनस के अहाते मे दाखिल होकर खडी हो गई है। भोली माई और उसके साथ दूसरे यात्री उतरे और बाहर निकलने के लिए फाटक की ओर बढे। उस समय सन्ध्या क्षणो की सूली पर तडप रही थी और अधकार की लम्बी-लम्बी लटें ऊँचे-ऊँचे खम्बो, पुल और शैड की सहायता से दिन के कधो पर बिखर रही थी। जयराम भी दुख और कपड़ो की गठरियाँ उठाये फाटक की ओर बढा, लेकिन रुक गया। उस समय ठठर गाँव जाने का उसे कोई ढग दिखाई नही दे रहा था।

सहसा जयराम के मन मे एक ख्याल आया जो उसने अभी तक सोचा ही नहीं था—अब उसे ठठर गाँव मे पहचानेगा कौन? वह 'खुट्टो' के एक बडे कुल से सम्बन्ध रखता था, लेकिन खुट कुछ जेजो और कुछ होशियारपुर और उसके आस-पास के गाँवो मे जा बसे थे और अपने पेडों के कारण जेजो मे एक विशेष ख्याति पाए हुए थे। ठठर मे केवल एक ताया बापू की खबर मिलती थी लेकिन वे तो जयराम के बचपन मे ही बुढापे और झुकी हुई कमर से यो दिखाई देते थे जैसे कब्र की तलाश कर रहे हो। इस समय उनका उपस्थित होना एक असभव-सी बात थी। उनकी चार-पाँच लडकियाँ थी जो एक साथ विवाह के बाद सतोखगढ, ऊना, गढशकर और इधर-उधर कुछ इस प्रकार बिखर गई थी जैसे बारूद भरे अनार की चिगारियाँ छूटते ही चारो ओर बिखर जाती हैं और जयराम प्लेटफार्म पर पड़े हुए बैंच की ओर लौटा और निराशा-पूर्वक इधर-उधर देखने लगा।

जेजो दोआबा एक अच्छा बडा स्टेशन था। कभी जेजो एक बडी मडी हुआ करती थी, जिसके लिए स्टेशन पर एक यार्ड बनाया गया था, जो इन दिनो सूना पडा था। लाइन पर बिछाने के लिए पत्थर तो अभी तक भेजे जाते थे। साईडिंग मे एक जगह बडा-सा क्रेन दूर से यो लगता था जैसे कोई मुर्ग हो जिसे भूनने के लिए उसके पख नोच लिए गये हों। उस क्रेन से परे हटकर एक दो मालगाडियो की तश्तरियाँ-सी रखी थी जिनमे वर्षा के गदले पानी और पत्थरो की भाजी पडी थी। साईडिंग के उत्तर मे रेल पर कुछ ठोकरें थी। एक ठोकर अन्य की अपेक्षा काफी फासले पर थी और उसे केवल इसलिए दूर बनाया

गया था कि इजन को शट करने मे सुविधा हो। या अगर गाडी तेजी मे आगे निकल जाये तो उसके पटरी पर से उतरने या टकराने का खतरा न रहे। और लोहे की ये बडी-बडी मजबूत ठोकरे जयराम को भयभीत करने लगी। जयराम ने सोचा, काश! ये रेले एक दम उन ठोकरो पर रुक जाने की बजाय सामने दिखाई देने वाली पहाडी मे गायब हो जाती' '

जयराम ने उठकर अपने शरीर को एक जीर्ण और पेवद लगे कम्बल मे अच्छी तरह लपेटा और बडे रहस्यमय ढग से स्टेशन के जगले के साथ-साथ घूमने लगा। जगले के निकट, अन्धे कुएँ पर पीपल का एक तना बढा हुआ था और एक लगूर अपनी लम्बी-सी पूँछ को तने पर बल देकर कुएँ मे औधा लटका हुआ था। उसके काले-कलूटे चेहरे की धूल मे भूरी आँखो के दो कोयले दमक रहे थे। घाटियो के पीछे पानी बडे जोर-शोर से बह रहा था और उस बरसाती नाले के शोर मे जेजो के कस्बे का सब शोर डूब रहा था। स्टेशन का वातावरण मौन तथा उदासीन था। जिधर से जयराम आया था, उधर-पटरियो का एक जाल बिछा हुआ था। ये पटरियाँ इतनी थी जितनी जयराम के शरीर मे नाडियाँ। वहाँ सैकडो ही खलासी, कुली और यार्डमैन थे जो आती-जाती गाडियो के बीच बेखटके, मतलब-बे-मतलब घूमा करते थे। कभी-कभी कोई इजन एकाएक दनदनाता हुआ शैड के नरक से सुरमा उडाता हुआ मानव सतान मे से किसी को झपट मे ले लेता। लेकिन प्रभात से पूर्व ही उसकी स्थान-पूर्ति के लिए सर्वजननी एक और बच्चा जन देती। जयराम ने सोचा, यहाँ जेजो की किसी पटरी पर कोई चुपचाप अपना सिर रख दे और सो रहे।

जब से जयराम आया था, किसी ने उससे टिकट भी तो नही पूछा था एक साहब जो रग-ढग से स्टेशन-मास्टर और वस्त्रो से नाई मालूम होते थे कुर्त्ता और तहबद पहने, हाथ मे छोटा-सा हुक्का सँभाले, खडाउओ से खट-खट करते एक टूटे हुए लैम्प के पास खडे होकर काटे वालो को ताबडतोड गालियाँ सुना रहे थे। काटे वाले पूर्ववत्, गालियो से निश्चिन्त, दूर खडे लाल और हरी बत्तियो की परेड कर रहे थे। स्टेशन के स्टाफ ने यहाँ वर्दी पहनने की भी आवश्यकता नही समझी थी। कही साल मे एक-आध बार ट्रैफिक इन्स्पैक्टर

आ निकलता तो उसका भाग चुपके से हाथ मे थमा दिया जाता और फिर उसे धोती कुर्त्ते मे ही दफ्तर वाली नीली सर्ज दिखाई देने लगती। बहुत होता तो वह बड़े प्रेम से स्टेशन मास्टर से कह देता—"मर जाओगे, माधोलाल—मर जाओगे, सर्दी मे तुम लोग।"

इन्स्पैक्टर पैसो की गर्मी और स्टेशन-मास्टर जेजो की सर्दी से परिचित हो चुका था। "मर जाओगे तुम लोग" का उत्तर एक सक्षिप्त-सी "हूँ" के सिवा और कुछ न होता। जयराम घूम-फिरकर फिर अधे कुएँ के पास जा खड़ा हुआ और उसकी तह मे टूटे हुए ढकने, पीपल के पत्ते, पत्थर और पानी को देखने लगा। लगूर इस समय तक कही भाग गया था, उसकी जगह कुछेक छोटे-छोटे बन्दर कलाबाजियाँ लगा रहे थे। एक नन्हा-सा बन्दर, अपनी माँ के पेट के साथ चिमटा हुआ नीचे, मानो मौत को देखकर, मुँह चिढा रहा था। जयराम ने कुएँ मे छलाँग लगाकर जीवन की इस बेहूदा नकल को समाप्त करने की ठानी। लेकिन वह इस शुभ कार्य के लिए बहुत बूढा हो चुका था। जैसे ऊपर बन्दरिया का बच्चा मौत का मुँह चिढा रहा था, उसी प्रकार मौत जयराम का मुँह चिढा रही थी।

दूर घाटियो पर कुछ रोशनियाँ एक ओर जाती हुई दिखाई दी। जयराम इस तीस वर्ष की अवधि मे बहुत कुछ भूल चुका था, परन्तु उसे यह दृश्य कुछ जाना-पहचाना-सा मालूम हुआ। जगले से परे हटते हुए वह स्टेशन-मास्टर के निकट पहुँचकर बोला "ये रोशनियाँ कैसी हैं, बाबू!"

स्टेशन-मास्टर ने मूँछो की एक बड़ी-सी झालर उठाई और बड़ी भर्रा-सी आवाज मे बोला—"ये लोग गाँव जा रहे हैं।"

"कौन से गाँव मे ?"

"यही ठठर—सन्तोखगढ बेगर—"

जयराम चुप हो गया। इस विचार से उसे किंचित सन्तोष हुआ कि जेजो दुआबे से परे भी हजारो पगडडियाँ शिवालक के चारो ओर बल खाती चली जाती थीं। इन पगडडियो को देखकर शरीर और आत्मा मे कम्पन उत्पन्न कर देने वाली रेलो की ठोकरे जयराम के लिए अर्थहीन-सी हो गई थी। जेजो

दोश्रावा एक व्राच लाइन का टर्मिनस हो तो हो परन्तु मानव की यात्रा के चिह्नो से वनी हुई पगडडियो का अन्त नही।

स्टेशन-मास्टर ने फिर मूँछे उठाई और घृणायुक्त स्वर मे वोला, "तुम कौन हो?"

जयराम ने एक ठडा सास भरकर कहा—"मैं कौन हूँ! मैं एक मुसाफिर हूँ वावा!"

'मुसाफिर' का शव्द हम लोगो के शव्दकोष मे एक विशेष अर्थ रखता है। एक विशेष स्वर मे 'मुसाफिर' कहने से सुनने और कहने वाले एक और ही ससार मे पहुँच जाते है—ऐसे ससार मे जहाँ टिकट पूछने की जरूरत ही महसूस नही होती और इस अत्यन्त भावनापूर्ण और परम्पराओ की पृष्ठ-भूमि लिए हुए इस शव्द से वातचीत कुछ और ही रूप धारण कर लेती है। स्टेशन-मास्टर जिसके परदादा को लकवे का रोग था, कुछ तुतलाया और उसने अपना हाथ जाँघ पर मारकर एक ठडा साँस भरने के वाद, इजन की तरह भाप छोडते हुए कहा—"हो वावा! हर चीज मुसाफिर, हर चीज राही"। और फिर टर्मिनस स्टेशन वालो के लिए 'मुसाफिर' शव्द एक विशेष फैलाव और सीमायें रखता है। स्टेशन-मास्टर ने अपनी वात को जारी रखते हुए एक घिसा-पिटा वाक्य दोहराया—"अपनी-अपनी वोलियाँ सव वोलकर उड जायेंगे।" और यह वाक्य स्टेशन-मास्टर ने किसी कवि के कविता-सग्रह की वजाय लारी के एक तख्ते पर भगवान के हिन्दू, सिख और मुसलमान नामो के वीच घिरा हुआ पडा था। एकाएक स्टेशन-मास्टर को पता चला कि इस वाक्य के दोहराने से वह एकाएक अपनी सत्ता-सीमा से परे क्षुद्र लारियो और पक्षियों की दुनिया मे चला गया है। उसने वात का रुख वदलते हुए सूरदास की एक चोपाई पढी और वोला, "हाँ वावा—यह दुनिया मुसाफिरखाना है, हर इक ने आना-जाना है। यह संसार मिथ्या माया है, कोई अपना है न पराया है—"

इस वात के वाद जयराम को ऐसा लगा मानो उसके और स्टेशन-मास्टर के वीच का अन्तर मिट गया है। वह उसके पास लाठी टेककर वैठ गया। इस

प्रसङ्ग मे कुछ देर तक सलग्न रहने के बाद रस्मी बाते होने लगी। स्टेशन-मास्टर ने पूछा—"आपका दौलतखाना कहाँ है ?"

जयराम ने मुस्कराते हुए अपनी ऊबड-खाबड बतीसी दिखाई और बडी नम्रता से बोला, "मेरा गरीबखाना ठठर है। और आपका ?"

"मैं हमीरपुरिया ठाकुर हूँ।"

'सेवक' के स्थान पर 'मैं' का शब्द आ जाने से जयराम को अचम्भा हुआ, लेकिन स्टेशन-मास्टर सच्चा था। ठाकुर सेवक नही होते। यह तो बहुत हुआ कि वे 'मैं' हो गये, अन्यथा साधारणतया वे अपने लिए बहुवचन से कम शब्दो का प्रयोग नही करते। जयराम कुछ झेंप गया। एकाएक उसे ख्याल आया कि ठाकुर ठठर गाँव के जमाई भी हैं, और यदि मनुष्य आडे समय मे गधे ऐसे अप्रिय जानवर को अपना बाप बना लेता है तो स्टेशन-मास्टर को अपना जमाई समझ लेने मे क्या हानि है! जयराम ने अपनी बाहे खिलाते हुए प्रशसायुक्त स्वर मे कहा, "हो, ठाकुरे! ठाकुरो के यहाँ हमारे ठठर की भी एक लडकी है।"

"हाँ, हाँ।" स्टेशन-मास्टर ने मूँछो पर ताव देते हुए कहा, "मेरे बडे भाई की पत्नी ठठरानी है, ठठर की रहने वाली।"

जयराम लकडी छोडकर खडा हो गया और कम्बल मे अपनी बाहे फैला दी और यो दिखाई देने लगा जैसे कोई गरुड उडने के लिए पर तोल रहा हो।

आँखो को सिकोडकर उसने एक बार फिर स्टेशन-मास्टर की ओर ध्यान से देखा और बोला, "तुम केदारे के छोटे भाई हो? बैजू बावरे! है-है-है—बैजू बावरे······!" और जयराम फिर हँसने लगा।

स्टेशन-मास्टर ने इधर-उधर देखा जैसे कोई एकाएक नगा हो जाने पर इधर-उधर देखता है। एक मुसल्ली (छोटी जाति का मुसलमान) पास खडा उस विचित्र नाम को सुनकर मुस्करा रहा था। स्टेशन-मास्टर ने राज़दारी मे जयराम को आँख मारी और सिर को एक झटका दिया, मानो कह रहा हो—'हूँ तो मैं बैजू बावरा! लेकिन चुप रहो प्यारे! यहाँ जरा इज्जत बनी हुई है और माधोलाल के नाम के अतिरिक्त मुझे और कोई किसी नाम से नही

जानता।' जयराम ने दोनो हाथो से स्टेशन-मास्टर का हाथ भीच लिया। फिर वाहे जैसे कलोल के लिए उसके गले मे डाल दी और कुछ और भी ऊँचे स्वर मे वोला, "छोडो यार, लोगो के लिए तुम होगे माधो-वाधो, पर जयराम के लिए तुम वैजू वावरे हो, उफ—उफ ! कितने दिनो के वाद तुम्हे पाया है और यह नाम हमने भारतवर्ष के एक प्रसिद्ध गायक के नाम पर तुम्हे दिया था। याद है तुमने टीकरे चिन्तपुरनी पर एक वहुत ही भद्दी आवाज मे मालकोस की धुन अलापी थी ? तब से · हो · हो"

स्टेशन-मास्टर को सव कुछ याद था, लेकिन वह उसे भूलने मे ही अपना लाभ समझता था। इस समय एक वन्दर ने छलाँग लगाई और माधोलाल के कधे पर आ वैठा। माधोलाल ने उधर ध्यान दिये विना एक हल्की-सी त्योरी चढाई और उसे एक ओर हटा दिया, मानो केवल चिडिया की वीट उसकी कमीज पर पड गई हो। जयराम वोला—

"वैजू वावरे, तुम्हारे यहा कितने वन्दर है ?"

"कभी वहुत थे। अव तो दिन-प्रतिदिन कम होते जा रहे है।" माधो लाल ने उत्तर दिया और एक जानकारी की वात वताने का गौरव प्राप्त करते हुए वोला, "यह वन्दर वहुत लाभकारी जीव हे। सुनते हैं कोई डाक्टर वार-नाफ है, जिसके अनुसधानो के लिये यहाँ के वन्दर पकडकर ले जाये जा रहे हैं।"

"डाक्टर वारनाफ ?"

"हाँ !"

"कोई मद्रासी डाक्टर हे ? और क्या करता है वह वन्दरो का ?"

माधोलाल ने उसी दम वैजू वावरे का वदला चुकाते हुए कहा, "जब कोई व्यक्ति तुम सा वूढा हो जाता है और किसी योग्य नही रहता तो उसमे वन्दरो के फेफडे डाल दिये जाते है और वह नये सिरे से जवान हो जाता है ·····"

शायद जयराम के मस्तिष्क मे शहर का कोई विज्ञापन चक्कर लगाने लगा, "यह विज्ञान कैसा ऊट-पटाग है !" जयराम ने कहा और मुस्करा दिया। पुरुष अपनी शक्ति के सम्बन्ध मे कोई ऐसी-वैसी वात नही सुनना चाहता,

इसलिए जयराम ने अपनी बात को जारी रखते हुए कहा, "इन सफेद बालो से बूढा न समझ लेना, बैजू बावरे !"

और दोनो देर तक हँसते रहे। जयराम बोला, "इन नये फेफडो से बन्दर की सी फुरती भी पैदा हो जाती होगी ?"

"यह तो नही कह सकते," माधोलाल बोला, 'लेकिन भाई, डाक्टर वारनाफ का यह अनुसधान है खूब, और उन्हे अपने अनुसधान के लिए बन्दर भी हरिद्वार और चिन्तपुरनी से मिलते हैं। ये लोग दर्पण मे अपना मुँह नही देखते, नही तो उन्हे भारत की ओर न देखना पडे। कई बरसो से ये बन्दर पकडे जा रहे है। स्टेशन के चार बाबुओ, तीन कुलियो, पांच खलासियो और जेजो के पुजारियो ने एक अपील वाइसराय साहब को तार द्वारा भेजी है—लेकिन दोस्त ! यह तो मैं भूल ही गया था, मैंने तुम्हे पहचाना नही, शकल बहुत बदली हुई मालूम होती है, कही खुफिया पुलिस मे तो नही........"

"हो हो हो ‥ ‥" जयराम ने अपने विशेष ढग से हँसते हुए कहा, "मैं आतो खुट का बेटा हूँ, मझला बेटा—पहचाना ? जिसके बडे और छोटे, दोनो भाई लाहौर के पागलखाने मे है।"

इस मामूली से इशारे से माधोलाल को सब कुछ याद आ गया। हमारा ससार होशियारो की अपेक्षा पागलो को अधिक याद रखता है और जीवित लोगो की अपेक्षा मरे हुए लोगो के अपराध तुरन्त क्षमा कर देता है। माधोलाल बोला, "मैं आतो खुट के सब बेटो को अच्छी तरह से जानता हूँ। बचपन मे हमने ऐसी शरारतें की हैं जिनकी याद आती है तो लज्जा से गरदन झुक जाती है, लेकिन वह बचपन था न ? कहो आखिर तुम इतने दिन रहे किधर ?"

इस समय अँधेरा पूरी तरह छा चुका था। आकाश पर सितारे और शैड मे चिमगादड एक दूसरे का पीछा करते हुए थक चुके थे और इमली के वृक्ष की शाखाओ मे या लोहे के गार्डर के एक किनारे पर लटक गये थे। ऊपर जाने वाली रोशनियाँ एक आकाश-गगा सी बनकर रह गई थी। जयराम ने दार्शनिको की तरह अपनी ठोडी थामते हुए कहा—"मेरी क्या पूछते हो बाबा ? बहुत से खेल खेले हैं, बहुत चोटे खाई हैं। आखिर मैं एक बड़े वकील का मुंशी रहा,

उससे पहले कचहरी मे रीडर था। कानून तो मेरी उगलियो की पोरो मे है—"

"यह बात है ?" माधोलाल ने हाथ मिलाने के लिए हाथ बढाते हुए कहा, "मेरा एक सम्बन्धी तीन सौ दो मे धर लिया गया था, आतो—क्या नाम है तुम्हारा ?"

"जयराम !"

"जयराम—अच्छा, तुम अपनी कह लो, फिर मैं उस मुकदमे की बात कहूँगा।"

"नही, नही, तुम कहो," जयराम ने माधो को थपकते हुए कहा और फिर स्वय ही बोलने लगा, "किसी के सामने अपनी मूँछ नीची नही होने दी, यह अपना धर्म नही। नही तो आज एक पूरे जिले का मजिस्ट्रेट होता।"

माधोलाल ने पलटकर अपने सामने उस तुच्छ से व्यक्ति को देखा जो अपनी लकडी से जमीन पर रेखाये बना रहा था और एक तीखी अदाब दृष्टि से उसे घूर रहा था। उस दृष्टि को सहन न कर माधोलाल ने दूसरी ओर मुँह फेर लिया। उस तुच्छ व्यक्ति के बात करने के ढग मे कुछ ऐसी निष्कपटता थी कि सुनने वाला प्रभावित हुए बिना नही रह सकता था। जयराम ने एक ठढा सास लिया और नाक के गाढे लुआब को कम्बल के एक कोने मे पोछते हुए कहने लगा—"लादी का बैल जब भागेगा, घूम फिर कर फिर लादी के पास आ खडा होगा। बडे मजिस्ट्रेट से लडाई हुई तो रीडरी छोडकर वकील का मुशी हो गया। यह मेरा आखरी पेशा है। इससे पहले बीस एक पेशे अपना चुका हूँ।"

माधोलाल ने बात काटते हुए कहा, "तुम्हे भूख तो लगी होगी, जयराम ?"

जयराम ने किसी उत्सुकता के बिना पेट को सहलाया और बोला, "हाँ ! है तो। भूख से पेट मे एक खलबली मची हुई है।"

"अच्छा तो चलते हैं—उठो।" और माधोलाल ने अपने पूरबी खलासी को आवाज देते हुए कहा—"ऐ, सखोली ! बन्दरिया के नन्दोई !"

एक काला भुजग आदमी जिसकी आँखे मशाल की तरह जल रही थी और यूँ मालूम होता था जैसे अधे कुए पर वही लटक रहा था और यूँ भी लगूर वन्दरिया का नन्दोई होता है। सखोई लैम्प रूम से हाथ मे मिट्टी के तेल और राख से अटा हुआ एक चीथडा लिए हुए आ खडा हुआ और बोला "हुकुम सरकार !'

"देखो, लाला की गठरी उठा लो, फैंक दो इस चीथडे को।"

सखोई ने उसके सामान की गठरी उठाली। उसके दुखो की गठरी मानो माधोलाल ने उठा ली थी और जयराम स्वय को कुछ हल्का सा अनुभव करता हुआ साथ हो लिया। रास्ते मे बहुत देर तक चुप्पी रही। कभी-कभी अधेरे मे पत्थरो से ठोकर खाने पर 'ओह' की आवाज उत्पन्न होती। आखिर जयराम बोला, "वास्तव मे मेरा मन ससार से बहुत उचाट है, बावरे, बहुत उचाट। इसलिए मैं इधर भाग आया हूँ। मैंने बहुत धन नष्ट किया है लेकिन कुछ बन नही सका। मेरे स्वभाव मे कुछ ऐसे दोप उत्पन्न हो गए है जिन्हे मैं कोशिश करने पर भी ठीक नही कर सका।"

माधोलाल सुनता गया। जयराम बोलता गया, "एक पवित्र ग्रन्थ मे लिखा है कि अनगिनत यौवन है जो प्रेम के बिना मुर्झा जाते हैं। और वास्तव में मेरे स्वभाव, मेरी अनियमितता, मेरे नशे सब का कारण यही है कि मेरे साथ किसी ने प्रेम नही किया। मैं नही जानता, आज तक नही जानता, प्रेम किसे कहते हैं—करतारपुर मे तीस साल पहले एक घटना हुई थी। एक नौजवान लड़की मेरी ओर देखकर मुस्कराई थी। लेकिन छोडो इस बात को बावरे—अब तक तो वह आठ-दस बच्चो की माँ भी बन चुकी होगी और क्या मालूम अब वह करतारपुर मे हो ही नही।"

उस निस्सीम अन्धकार मे कुछ रेखाएँ उभरने लगी और सखोई स्वय ही एक जगह पर जाकर रुक गया। यह कमरा पत्थरो से बने हुए एक सुन्दर क्वार्टर का बेकार भाग, परिशिष्ट मात्र था, जिसका एक दरवाजा गायब था। दूसरा दरवाजा खुलने पर सीलन और मिट्टी की दुर्गन्ध बाहर लपकी। इस कमरे का दूसरा दरवाजा स्टेशन-मास्टर के क्वार्टर में खुलता था। और एक

छिद्र में से प्रकाश की एक घुटी हुई किरण दरवाजे के पास मिट्टी के परमाणुओं को तैरता हुआ दिखा रही थी। दूसरी ओर से बावरे की नौजवान लड़कियों की गुटर-गूँ भी सुनाई दे रही थी। कमरे के एक ओर एक पयाल बिछी हुई थी। यहाँ माधोलाल अपनी गाय बाँधा करता था जो इन दिनों ब्याने के लिए भेज दी गई थी। सखोई ने संकेत पाकर जयराम का बिस्तर पयाल पर पटक दिया और जयराम बिस्तर खोलने लगा।

जयराम के हृदय को ठेस लगी। काश! उसे भी घर ही का एक प्राणी समझा जाता और घर में ही किसी नरम-गरम कोने में उसे जगह दी जाती। लेकिन आतिथ्य भी पद के तलुवे चाटता है, और वह चुप रहा। थोड़ी देर के बाद खाना और खाट आ गई। जयराम को अपनी हालत पर दया आने लगी। उसके मस्तिष्क में महानता थी जिसने पयाल के संसार का शून्य पाट दिया था। बावरे ने भी खाना खाया और डकार लेते हुए बोला "बस दाल-फुलका ही है—" जिसका मतलब था कि आतिथ्य की बार-बार चर्चा की जाये और धन्यवाद भी दिया जाये। लेकिन प्रशंसा आदि के सम्बन्ध में जयराम किसी लालच से प्रभावित नहीं होता था। बावरा और भी नम्रतापूर्वक बोला "बस तुम्हारे पैरों के बलिहारी, भगवान ने सभी कुछ दिया है। दूध है, पूत है, भाग्यवान पत्नी है···"

जयराम के लिए यह बात आनन्ददायक नहीं हो सकती थी। उसे जीवन में ये सब न्यामतें या तो सिरे से प्राप्त ही न हुई थीं और जो हुईं तो वे धोखा दे गईं। वह दूसरों की खुशी में खुश नहीं हो सकता था। यह उसके बस की बात नहीं थी। उसने डिबिया निकालकर कुछ फाका और अपनी बेचैनी को दूर करने के लिए बात बदलते हुए बोला, "कुछ कार-व्यापार की कहो, बावरे।" माधोलाल यदि ऋणी होता तो उसके मन को एक प्रकार का संतोष मिलता, लेकिन माधोलाल बोला, "मैं यहाँ ए० क्लास का स्टेशन-मास्टर हूँ, कुछ महीनों में बी० क्लास का हो जाऊँगा और एक बड़ा जंकशन स्टेशन मिलेगा। यहाँ करीब दो एक स्टेशन के लिए कोशिश कर रहा हूँ जहाँ से पूरे

पजाव मे स्लीपर जाते है और मूँगफली। एक स्लीपर पर चार आने और एक वोरी मूँगफली पर दो आने मिलते है।"

जयराम ने घबराकर वात काट दी, "अभी तुम्हारी नौकरी काफी होगी ?"

माधोलाल वोला "अभी वहुत काफी है। मुझे आशा है कि रिटायर होने से पहले जरूर सी० क्लास के स्टेशन पर स्टेशन-मास्टर हो जाऊँगा।"

उसके बाद माधोलाल उठकर चला गया। जयराम की भी यही इच्छा थी। वह पहले ही अपना मुँह छिपाने के लिए विस्तर टटोल रहा था। सोने की कोशिश के बावजूद जयराम को नीद न आई। उसे माधोलाल से ईर्ष्या उत्पन्न हो गई थी। उसे अपना ससार उस लता-सा दीखने लगा जो वड के एक वडे से वृक्ष पर चढती है, वढती है लेकिन पुरवा या पछवा के पहले ही झोंके मे सड जाती है।

गीली पयाल की सडाघ से जयराम वहुत परेशान हुआ। सवेरे ज़रा आँख लगी तो मुर्गियो की गुटर-गूँ ने जगा दिया। जयराम उठा और दरवाजे के निकट खडे होकर उसने वाहर झाँका। दूर क्रेन पत्थरो का दाना-दुनका चुग रहा था और उसके चारो ओर मजदूर यो चिमटे हुये थे जैसे हड्डी के चारो ओर चीटियाँ चिमट जाती है। कुछ वन्दर घने पीपल से मुसाफिरखाने की छत पर उतर आये थे और उसे डाक्टर वारनाफ की अनुसधानशाला वना दिया था। नीचे मुसाफिर स्टेशन के भीतर घुसने के लिए एक दूसरे से उलझ रहे थे। कोई विशेष भीड़ नही थी। परन्तु यह हलचल मुसाफिरो के जीवन का एक आवश्यक अङ्ग है। माधोलाल के सामने ही किसी ने एक गँवार को धक्का देकर लाते और घूँसे जडे, लेकिन वह व्यक्ति फिर से साफा वाँध, आँखें झप-काता हुआ, उसी स्थान पर आ खडा हुआ, जैसे कुछ हुआ ही नहीं था ''।

जयराम के मस्तिष्क मे एक वार फिर वावरे का सन्तुष्ट ससार और उसका सुनहला भविष्य उभर आया। एकदम घुटन-सी महसूस करते हुए जयराम उठा और अपने कपड़े-लत्ते समेट वाहर निकल आया। इस जल्दी में उसने अपने मेजवान का धन्यवाद तक करने की प्रतीक्षा न की।

वाहर निकलकर वह कुछ गन्दे लेकिन स्वस्थ पिट्ठुओ के पास पहुँचा और वोला—"क्यो भई ठठर चलोगे ?"

पाँच-छ पिट्ठू जयराम के वोझ के लिए दौडे और फिर एक साथ उस पर हाथ डालते हुए आपस मे लडने लगे। लेकिन एक और व्यक्ति ठठर जाने के लिए दिखाई दिया तो सव के सव जयराम का वोझा रखकर उसकी ओर भागे और फिर वहाँ भी वही हाथा-पाई शुरू हो गई। जयराम पिट्ठुओ की इस हरकत से यह अनुमान न लगा सका कि क्यो उसकी गठरी पहले थामी और फिर एकाएक फेंक दी गई। थोडी देर वाद उसे कारण का पता चला। पिट्ठू अकेले ही दो मुसाफिरो का वोझा उठाना चाहते थे। एक शारीरिक शक्ति मे सव से तगडा था, दूसरे मुसाफिर की गठरी लेकर जव वह जयराम के वोझे के लिए लपका तो जयराम ने ललकारा—"खवरदार ! अगर किसी ने इसे हाथ लगाया तो . . ."

सव के सव इस विचित्र व्यक्ति की ओर देखने लगे जो अव गठरी पर धरना मारे मुँह मे गन्दी गालियाँ मिनमिना रहा था। दूसरा मुसाफिर जानता था कि जव तव पिट्ठू दूसरे के वोझे से लद नही जायेगा, यहाँ से नही हिलेगा। उसने जयराम को सम्वोधित करते हुए कहा "लाला ! देदो वोझा अपना—देते क्यो नही ? आओ चले।"

जयराम ने उस नये मुसाफिर की ओर क्रोध भरी नज़रें उठाई और फिर यह जानकर कि यह मेरे ही गाँव का आदमी है, चुप हो गया। अन्यथा झपट हो जाती। नया मुसाफिर जिगर का रोगी था, उसकी आँखो के नीचे वडे-वडे थैले थे और आँखो के भीतर कुकरो की सुर्खी दिखाई देती थी। कुकरो की खुजली से मुक्ति पाने के लिए वह वार-वार अपने वेहद गदे कोट के कफो को वारी-वारी आँखो पर रगड रहा था। होठ वसूर कर और आँखें फैला कर वह फिर वोला, "चलो ना ! थूक दो गुस्सा।"

जयराम ने कहा, "लाला ! अगर आदमी हो तो इन वन्दरो को सवक सिखाने के लिए वोझा यहाँ रख दो, फिर एक साथ चलेंगे।"

लाला ने मान लिया और दोनो इकट्ठे बैठ गये। जयराम बोला, "ठठर मे तुम्हारा कौन होता है ?"

"मैं बीस साल से ठठर मे रहता हूँ। हालाँकि जेजो मे मेरे तीन मकान है, जिनका किराया आता है, फिर भी मैं ठठर मे रहना पसद करता हूँ। वहाँ का पानी आँखो के लिए अच्छा है···।"

"क्या काम करते हो ?"

"अमावट बेचता हूँ। जब आमो की फसल होती है तो सैकडो मन आम एक बडे अहाते मे सफो पर बिछा दिये जाते हैं। पिट्ठू लोग पाँव धोकर उनमे घूमते है और अपने पाँव से उनका मलीदा बना देते है और फिर उस मलीदे को साफ करके और सुखा कर अमावट बनाया जाता है।"

जयराम ने दूर इजन को पानी पीकर ठोकर के निकट पहुँचते देखा। उसे ख्याल आया कि इजन ठोकर से टकरा कर या तो स्वय उलट जायेगा और नही तो ठोकर के टुकडे-टुकडे कर देगा। जयराम का अन्दर का सास अन्दर और बाहर का बाहर रुक गया और वह अपनी गठरी पर से उठकर लकडी के सहारे खडा हो गया और इजन की ओर देखने लगा। ठोकर के निकट इजन के खडे हो जाने से जयराम ने सन्तोष का सास लिया और वापस अपने बोझे पर बैठते हुए बोला, "अमावट का व्यापार करने वाले तुम्हारे सब लोगो को जानता हूँ—"

"कैसे जानते हो ?" लाला ने फिर कफो से आँखे मलते हुए पूछा।

"मै ठठर ही का रहने वाला हूँ—आतो खुट का बेटा—छोटा और बडा भाई पागलखाने मे है।"

लाला उठ खडा हुआ और आतो खुट के बेटे से जोर-जोर से हाथ मिलाने लगा। कुछ क्षणो तक दोनो एक-दूसरे की ओर देखते रहे और मुस्कराते रहे। लाला अपना सिर भी धीरे-धीरे हिलाता रहा मानो उसे किसी मानसिक समस्या का हल मिल रहा हो। जयराम ने चुप्पी को भग करते हुए कहा, "लेकिन लाला, तुम्हारे खानदान के सब लोगो मे अमावट की तुर्शी होती है, लेकिन तुम मे तो तुर्शी नाम को नही।"

लाला हँस दिया। जयराम ने जेब मे से एक थैली निकाली और उसमे

से तम्बाकू निकाल कर हथेली पर मसला और फाँक गया। इतने में सूरज निकल आया। धुंध के कारण सूरज अपनी तीव्र चमक खोकर काँसी का एक थाल दिखाई दे रहा था। लाला की रुग्ण आँखों के लिए यह प्रकाश भी अधिक था। उसने माथे पर हाथ रख लिया और जयराम के कुरेदने पर बोला—"घी और अमावट के सब व्यापारी गंदे रहते हैं। उनके आस-पास चारों ओर मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं—यह ठीक है, लेकिन इस अमावट की बदौलत मैंने तीन चार मकान बना लिए हैं और यहाँ से कई मन अमावट हर साल शहर लाहौर को ले जाता हूँ। कल ही वापस जाकर तीन बीस कम दो हजार की वसूली करने जा रहा हूँ।"

जयराम ने एकदम लाला की बातों में दिलचस्पी खत्म कर दी और ऊपर जाने का इरादा छोड़ दिया और बोला, "लाहौर?—लाहौर बहुत बड़ा शहर है। वहाँ सब कुछ बिक जाता है। अमावट, गन्दगी सभी कुछ बिक जाते हैं।"

पिट्ठू कुछ दूर खड़े बेचैनी से उन दोनों की बातें सुन रहे थे। कुछ निराश होकर चले गये और कुछ अपने टोकरों के सहारे खड़े रहे। दूर से एक और सवारी दिखाई दी और सब के सब उसकी ओर लपके। जयराम ने सिर हिलाते हुए कहा, "चच, चच, लाला! तुम बहुत धनी हो गये हो लेकिन धन का लाभ ही क्या है? तुम्हारा अपना पहरावा—यह देखो! कमाई तो बाज़ारू औरतों की भी बहुत होती है लेकिन पेशे-पेशे में फर्क है ना'...।"

लाला ने आँखों पर हाथ से रोक बनाते हुए इस बात की पुष्टि की कि यह आतो खुट का बेटा बोल रहा है और फिर अपने कपड़ों की ओर देखते हुए बोला, "तुम चाहते हो तुम्हें मारी भी मिले और चुपड़ी भी—यह दोनों बातें असम्भव हैं।"

इसी बीच में एक पिट्ठू तीसरे ग्राहक से भी निराश होकर लौटा। लाला ने जल्दी से उसे अपना बोझा उठवा दिया। कुछ दूर जाकर, तनिक रुककर वह पीछे की ओर घूमा और एक पूरा पंजा और एक उंगली दिखाते हुए बोला, "इस फसल में छः सौ मन अमावट शहर ले जाऊँगा, हो सका तो एक हज़ार ...और एक हजार कहते हुए उसने अपने दोनों पंजे पूरी तरह फैला दिये। वह

फिर घाटी की ओर बढने लगा। जयराम उसके गायब होने तक लाला का बाजू कभी एक ओर से नीचे और कभी दूसरी ओर से ऊपर होते हुए देखता रहा और मुँह मे कुछ बडबडाता रहा, यहाँ तक कि लाला एक चट्टान के पीछे ओझल हो गया।

उस समय इजन वापस लाइनो के जाल मे उलझने के लिए जेजो दोआबा टर्मिनस छोडने के लिए तैयार था। वह उस ओर मुँह किए खडा था जिधर सैंकडो जक्शन स्टेशन और सी० क्लास के स्टेशन-मास्टर थे और हर साल हज़ारो मन थमावट की खपत थी। इजन एक खुश बिल्ली की तरह खुर-खुर कर रहा था। उसका स्वर कभी ऊँचा और कभी मद्धम हो जाता। कभी एक ऊँची सीटी बाज़ार मे खेलने वाले बच्चो को डरा देती या खलासियो, सिगनल-मैनो के निडर बच्चे इजन की नकल मे सीटियाँ बजाने लगते और एक-दूसरे की कमीज़ पकडकर एक हाथ को आगे-पीछे चलाते हुए चलने लगते।

जयराम ने इस परेशानी की हालत मे गठरी उठाई और मुसाफिरखाने की ओर चल दिया। ससार कितना विस्तृत और असीम था। लेकिन उस पर उसकी दया कितनी सीमित हो गई थी। मुसाफिरखाने मे भीड छट रही थी। कुछ देर बाद एक सजीला युवक सामने आया और बोला, "मैं टिकट लेना चाहता हूँ बूढे! क्या मेरे इस अटैची और बिस्तर का ध्यान रखोगे?"

जयराम ने उस सुन्दर छोकरे की ओर देखा और इससे पहले कि वह हामी भरे, युवक अपना सामान रखकर जा चुका था। जयराम एक ताबेदार सेवक की तरह उन चीज़ो के पास खडा हो गया। वह युवक कुछ समय के बाद टिकट लेकर लौटा और जयराम ने पूछा, "साहब बहादुर! किधर जा रहे है, आप?"

युवक ने यह उपाधि पसंद की और प्रसन्न होकर एक सिग्रेट सुलगाया। एक अदा से दियासलाई बुझाकर पाँव तले मसलते हुए, वह लगभग पूरे का पूरा घूम गया और बोला, "मैं बहुत दूर जा रहा हूँ, बूढे! बहुत दूर।"

"दूर?"

"हाँ, दूर—तुम्हारी कल्पना से भी परे—"

"क्या सानफ्रासिसको जा रहे हो आखिर ?"

युवक ने आश्चर्य से जयराम की ओर देखा और मन ही मन मे बूढे के भौगोलिक-ज्ञान से प्रभावित होते हुए बोला, "बम्बई जा रहा हूँ, बाबा !"

"बम्बई ?—है तो दूर ही ।" जयराम सोचते हुए बोला, "सैर करने का इरादा है ?"

"मैं एक फिल्म-कम्पनी मे एक्टर भरती कर लिया गया हूँ, बाबा ! अभी मुझे विलेन का पार्ट मिला है, विलेन समझते हो ना ? वह छोकरा जो प्रेमी और प्रेमिका के बीच अडचन बन जाता है और जिसकी लातो और घूँसो से मरम्मत होती है । लेकिन मुझे इन लातो और घूँसो की कोई परवा नही —विलेन के बाद अगला कदम हीरो है, हीरो—मैं कुछ बनूँगा बाबा ! तुम्हारा आशीर्वाद चाहिये ।"

जयराम ने आशीर्वाद का एक शब्द भी मुँह से न निकाला, उसकी आँखो मे भय छा गया । उसने जगला पकडने के लिए हाथ बढाया । वह काप रहा था । नौजवान ने अपना अटैची, ट्रक और बिस्तर एक पिट्ठू से उठवाया और फाटक के पीछे गायब हो गया । कुछ देर बाद पुल पर उसकी टाँगे चलती हुई दिखाई दी । जयराम कुछ क्षणो तक अवाक् सा खडा रहा, फिर एकाएक किसी विचार के आजाने से उसका चेहरा प्रफुल्लित हो उठा—उसी समय गाडी छूटने की घटी बजी । जयराम भागा और टिकट-घर के सामने जा खड़ा हुआ और बहुत से पैसे निकाल कर खिडकी मे बखेर दिये ।

"किधर जाओगे बूढे ?"

"करतारपुर—करतारपुर—"जयराम ने दोहराया और गाडी छूटने से कुछ ही क्षण पहले गाडी पर सवार हो गया । उस समय, जब ठोकरें, यह अकेला फ़ोन और बैंजूबावरा उसकी नज़रो से ओझल हुए, उसे जीवन काफी मनोरजक दिखाई देने लगा—!

मुमताज़ मुफ़्ती



मेरा जन्म १६०६ मे बटाला जिला गुरदासपुर मे हुआ। बचपन से मेरे स्वभाव मे कई तरह के भय थे। उदाहरणतया मैं ऊँचाइयों से डरता था। तग जगहो मे मेरा दम घुटता था। महफिल से घबराना और लोगो के सामने बुरी तरह झेंपना। स्कूल और फिर कालेज से भी मुझे कभी दिलचस्पी न हुई क्योकि वहाँ आँखो के इतने जोडे मेरी ओर उठते थे कि मैं परेशान हो जाता था और चूँकि घर मे भी मेरे व्यक्तित्व का स्वीकार न किया जाता था इसलिए उलझन और परेशानी और फिर सोच-विचार ने मुझे अपनी आयु की अपेक्षा अधिक प्रौढ़ बना दिया।

सन् १६२६ मे मैंने डिग्री प्राप्त करने के बाद शार्टहैंड और टाइप सीखा, लेकिन उन दिनों ऐसा मालूम होता था कि किसी पुरुष स्टेनोग्राफर की कहीं मांग न थी। विवश होकर मुझे ट्रेनिंग लेकर अध्यापक बनना पड़ा। कुछ समय तक मैं विभिन्न विद्यालयों मे पढाता रहा।

सन् १६३४ मे नून० मीम० राशिद ने मुझे लिखने के लिए प्रेरित किया। मेरे पहले दो लेख 'नख्लिस्तान' मे छपे और फिर १६३६ मे पहली कहानी 'झुकी-झुकी आंखें' के शीर्षक से 'अदबी दुनिया' मे प्रकाशित हुई। उस समय

से अब तक बराबर लिख रहा हूँ। अब तक पाँच कहानी-संग्रह 'चुप', 'गुब्बारे', 'गहमागहमी', 'अनकही' और 'इस्मारायें' के नाम से प्रकाशित हो चुके है।

मेरे लेखक होने का कारण या बहाना केवल यह है कि मैंने डाक्टर फ्रायड, एडलर आदि मनोविज्ञान-विशारदो की रचनायें बडे ध्यान से पढी हैं और अपनी कहानियो द्वारा मै अचेतन मन की बातो को चेतन मन मे लाना चाहता हूँ—जो अनिवार्य रूप से मेरी कहानियो का चरम-बिन्दु होता है।

आजकल मै पाकिस्तान रेडियो (लाहौर) मे हूँ।

जहाँ तक कहानी की कला और विषय की विशेषताओं का सम्बन्ध है मुमताज मुफ़्ती एक विशेष दृष्टिकोण का मालिक है। साहित्य की काम सम्बन्धी मनोवैज्ञानिक धारा को उर्दू मे लाकर उसने उर्दू साहित्य मे एक उल्लेखनीय स्थान प्राप्त कर लिया है। काम···काम··· काम···फ्रायड के सिद्धान्तो का पक्षपाती होने से उसे चारो ओर काम ही काम नज़र आता है और ऐसी मनोवैज्ञानिक उलझनें कि जिनसे, उसके विचार मे, मनुष्य कभी बाहर नहीं निकल सकेगा।

उसकी प्रत्येक कहानी चेतन तथा अचेतन मन के संघर्ष—मन की बात और मुँह की बात के टकराव—पर आधारित होती है। उसके कामासक्त, तथा भीतर ही भीतर सुलगने, विह्वल और परेशान होने वाले पात्र बहुधा ऐसी अजीब हरकते कर बैठते हैं कि आश्चर्य भी होता है और दुःख भी। आश्चर्य इसलिए कि दिन-रात हमारे साथ रहने पर भी हम उन्हे पहचान नहीं पाते और दुःख इसलिए कि इन्हे पहचानकर हमारे मन मे एक ऐसा विष घुस जाता है कि मानव पर से हमारा विश्वास उठने की संभावना हो जाती है।

मुमताज़ मुफ़्ती

माथे का तिल

"मैं आ गया भाभी !" सईद ने कमरे मे प्रवेश करते हुए कहा, "सलाम-अलेकम ! तबियत तो अच्छी है ना ?"

"ओह ! तुम हो सईद," भाभी ने नज़रें उठाकर कहा। "कैसे आये हो ?"

"बस आ गया हूँ। दो दिन की छुट्टियाँ थी, मैंने कहा चलो भाभी से मिल आऊँ। भाई साहब कहाँ है ?"

"दफ्तर गये हैं। कहो मौसी का क्या हाल है ?"

"बहुत-बहुत प्यार देती थीं, कहती थी, किसी दिन हम सब मिलने को आयेंगे।"

"वहाँ कोई तकलीफ तो नही होती तुम्हे ?"

"तकलीफ ? ओह क्या बताऊँ भाभी ! बडी तकलीफ हुई मुझे।" सईद दीवार की ओर मुंह करके मुस्करा दिया।

भाभी मशीन चलाते-चलाते रुक गई। "तकलीफ है तो वहाँ रहने की क्या जरूरत है ? वापस बोर्डिंग मे चले जाओ। मैं तो पहले ही कहती थी कि उनके घर मे इतने लोग है और इतना-सा मकान। फिर तुम्हारा आखरी साल हुआ। तुम्हे एक अलग कमरा चाहिये।"

"अजीब मुसीबत है" सईद ने मुंह फुलाकर कहा और एक ठंडा साँस भरा ।

"आखिर हुआ क्या ? मैं भी तो सुनूं ।"

"नहीं, तुम खफा होगी ।"

"तुम कहो तो ।"

"वचन दो कि तुम नाराज़ नही होगी ।"

"हाँ—अब बताओ ।"

वह उठ बैठा और बड़ी अधीरता से इधर-उधर घूमने लगा । "यानी बिलकुल ही बता दूं—क्यो भाभी ?"

"कुछ बताओगे भी या नही—कैसी अजीब आदत है तुम्हारी !" भाभी चिढकर बोली ।

"कह तो रहा हूं, तुम खाहम्खाह नाराज़ होती हो । मुझ जैसे आज्ञाकारी से नाराज़ होना—अच्छी भाभी ! बात यह है—यानी मुझे—अपनी होने वाली बीवी मिल गई है ।"

"क्या कहा, कौन मिल गई है ?"

"मेरी बीवी ! यानी मुझ पर शासन करने वाली ।"

"बस तुम्हे तो हर घड़ी मज़ाक ही सूझता है," भाभी मुस्कराते हुए बोली ।

"ईमान से भाभी, मज़ाक नही । तुम्हारी कसम ।"

"कौन है वह ?"

"तसलीम ।" सईद ने झुककर सलाम करते हुए कहा ।

"कौन तसलीम ? मौसी की लड़की ? पर यह भी जानते हो कि मौसी ने सुन लिया तो जूते मार-मार कर घर से निकाल देंगी !"

"तभी तो कहता हूं, अजीब मुसीबत है ।"

"पर वह तो अभी बच्ची है । जब मैंने उसे देखा था, बिल्कुल छोटी सी थी ।"

"अब तो वह बहुत बड़ी हो गई है—बस तुम्हारे ही जितना क़द होगा ।

जब मैं नया-नया वहाँ गया तो एक अजीब घटना घटी। पहले-पहल तो मैं साधारणतया बैठक ही मे रहता था, हा, छोटा मानी और जाजी अक्सर मेरे पास आ जाया करते थे। मानी तो दो दिन मे ही मेरा दोस्त बन गया। बडा तेज लडका है वह। दूसरे दिन मौसी आ गई। कहने लगी, चलो बेटा, अन्दर चलो ना। तुम तो बैठक ही के हो रहे। तुम्हारा अपना घर है। तुमसे क्या पर्दा करेगा कोई। उस दिन तो मैं पाच-चार मिनट अन्दर बैठा, बाहर आगया, लेकिन अगले दिन मौसी ने फिर मुझे बुला भेजा। कौलू, मानी और जाजी भी आ गये। मौसी भी बैठी रही। बडी बाते हुई उस दिन। फिर जब मैं बैठक की ओर जा रहा था तो वह मेज़ के पास खडी बाल बना रही थी। बिल्कुल इसी तरह, ज़रा सी बाई ओर को झुकी हुई। ऐसे ही लम्बे भूरे बाल तुम्हारे जैसे। परमात्मा की सौगध, मैं तो चकित रह गया। मैं समझा शायद भाभी आगई है, और जैसे मेरी आदत है, मैंने निकट जाकर कहा 'आखिर हमने पहचान ही लिया ना, क्यो भाभी ?' उसने जो पलट कर देखा तो मैं खडे का खडा रह गया। वह तो कुशल हुई कि उस समय कमरे मे कोई नही था, नही तो बुरी होती। पर भाभी, आश्चर्य है कि उसकी शक्ल बिल्कुल ही तुम्हारे जैसी है। ऐसा ही चौडा माथा—और—और यानी बिल्कुल ही तुम्हारे जैसी। बस इतना अन्तर है कि तुम्हारे माथे पर काला तिल है उसके माथे पर नही। बाकी हू-ब-हू तुम ही हो!"

"बडी गप्पें हाँकनी आती है तुम्हे। छोडो अब ये कहानियाँ, और जाकर नहा लो। मालूम होता है कि सफर की थकान मे तुम्हारा दिमाग ठिकाने नही रहा।"

"ओह भाभी! तुम तो बस मेरी हर बात को मजाक ही समझती हो।" भाभी चुपचाप मशीन चलाती रही।

"अब तो मेरी बस एक ही अभिलाषा है भाभी! दुनिया मे एक तुम ही हो जिनके लिए मेरे दिल मे सम्मान है, और एक वह है जिसने मुझे "वह" है। केवल यह अभिलाषा है कि तुम, मैं और वह इकट्ठे रहे।"

"[illegible] ख़ाहमख़ाह !" भाभी [illegible]

"[illegible] रही हो। देखो [illegible] तो था [illegible] तुम [illegible] प्राप्त [illegible] आँख [illegible] और [illegible] यह [illegible] याद [illegible]?"

"हाँ, याद है। उन दिनों तुम [illegible] बड़े हो गये हो।"

"पर तुम्हारे लिए तो इतना सा ही हूँ।"

"अब तो बड़े शैतान हो गये हो तुम।"

"यह क्या नई बात है, बच्चे तो होते ही [illegible] भाभी ?"

"अच्छा छोड़ो उन दिनों को। जाओ [illegible] हो नाश्ता भी [illegible] नहीं करने दिया तुमने !"

"अच्छा भाभी ! जैसे तुम कहो !" [illegible] किया और फिर [illegible] कमरे में जाकर कपड़े [illegible] वहीं से [illegible], "एक बात याद आ गई भाभी !"

"क्या है ?" भाभी [illegible] कहा। [illegible] की [illegible] पर था।

"[illegible] गया। [illegible]

कहने को भेजा हो उसे। बस जी वह आई, झुककर मेरे चेहरे पर से चादर हटाई, मेरी आँख खुल गई। उसका बडा-सा चेहरा अपने ऊपर झुका हुआ देख कर एकदम मेरे मुँह से निकला, 'क्यो भाभी ?' और मैं उठकर बैठ गया। इस बात पर बडा मजा रहा। उसका मुँह लाल हो गया। और वह भागी। उधर मौसी ने सुना तो हँस-हँसकर लोट-पोट हो गई। अन्दर मानो चीखने लगा 'अम्मा, देखो तो बहन जी को क्या हुआ है। अलमारी मे मुंह डालकर आप-ही-आप हँस रही है। जरूर मेरा गेंद छुपा दिया होगा इसने।' कीछू भागी-भागी मेरे पास आई—एक विलक्षण ढग से गाती हुई। फिर हाथ फैलाकर घूमने लगी 'बहुत बुरी हुई भाई जान से।' मौसी तो हँसी के मारे मुँह मे पल्लू ठोस रही थी। सचमुच बडी बुरी बात हुई हम से, उस दिन।"

"अच्छा ! अब बाते ही बनाते रहोगे या नहाओगे भी।" भाभी अपने माथे पर एक न घूरने वाली त्यौरी चढाकर बोली।

"अच्छा तो लो चले जाते है हम" और वह "गैर के पाँव पड़ गया बेखुदी-ए-नियाज मे" गुनगुनाता हुआ नहाने चला गया।

भाभी काम करते हुए आप ही आप कहने लगी "मैं कहती हूँ तसलीम की तो सगाई भी हो चुकी है—न जाने मैंने कहाँ से सुना था," और उसने जोर से सईद को आवाज दी—"सईद !"

"मुझ से कहा है कुछ ?" सईद ने स्नानालय से शोर मचाया।

"कह रही हूँ कि तसलीम की तो मगनी भी हो चुकी है।"

"सच ?" सईद ने घबराकर पूछा, "नही मुझे बना रही हो भाभी।"

"धर्म से, सच कहती हूँ। जाने किसने बताया था मुझे। हाँ, तुम्हारे भाई कह रहे थे। जब वे बम्बई से आये थे। उन दिनो मौसी मौसा जी बम्बई मे काम करते थे ना, और तुम्हारे भाई उन्ही के यहाँ रहते थे।"

"मुझे तो मालूम नही—मुझ से तो उन्होंने यह बात नही की।"

"शायद फिर बात बनी ही न हो। हमने भी उड़ती-उड़ती-सी सुनी थी।"

"मैं जानता हूँ" सईद हँसते हुए कहने लगा, "तुम बडी वह हो भाभी।"

"बड़े उद्दंड हो गये हो तुम ! आ जाए तुम्हारे भाई, उनसे बहतर पिटवाऊँगी ।"

"ओह, वे अवश्य मानेंगे तुम्हारी बात !"

"उन्हें बताऊँगी ना !" उसने मुस्कराते हुए कहा "कि छोटे मियां लाहौर में एक अपनी 'वह' बना आये हैं ।"

"परमात्मा के लिए यह न कहना उनसे। बड़ी अच्छी है भाभी हमारी।"

सईद नहाते हुए भाभी की मिन्नतें कर रहा था और वह चुपचाप बैठी मुस्कराती रही।

नहाकर वह सीधा भाभी के पास आया। "बड़ी अच्छी है हमारी भाभी ! जरा रोब गाठती है, वैसे बड़ी अच्छी है।"

"ऊँहूँ ! मैं तो जरूर कहूँगी, उनसे !" भाभी ने मुंह फुलाकर कहा।

"नहीं, परमात्मा के लिए।" सईद हाथ जोड़कर खड़ा हो गया। वह हँस पड़ी। "यह लड़का तो अपने आप से भी जाता रहा।"

"यही तो मुसीबत है।" सईद ने सिर पर हाथ फेरते हुए कहा।

"लेकिन सईद ! उसे भी पता है या केवल तुम ही मजनूं हो रहे हो ?"

"तुम्हें क्या पता भाभी कि उसे क्या मालूम है" बस न पूछो" वह उठकर बेचैनी से इधर-उधर टहलने लगा।

"मैं भी तो सुनूं !" भाभी मशीन चलाते हुए बोली।

"अच्छा सुनो, कल ही की बात है" उसने भाभी के सामने बैठते हुए कहा, "मेरे जी में आई कि कोई शरारत करूं। वह बाहर धूप में बैठी पढ़ रही थी। जाजी और मानी भी पास बैठे थे। कौसू कुछ बुन रही थी और मौसी अन्दर बरामदे में तख्तपोश पर बैठी नमाज पढ़ रही थी। मैंने नब की स्याही उंगली पर लगाई और उनके पास जा खड़ा हुआ 'यह तुम्हारे माथे पर क्या लगा है ?' मैंने कहा और इससे पहले कि वह कुछ कहती मैंने उसे पोंछने के बहाने उसके माथे के बीच में उंगली से काला टीका लगा दिया। यह देखकर मानी चिल्लाया, 'बहन जी हिन्दू, बहन जी हिन्दू !' कौसू और जाजी हँसने लगे। बाहर आकर मैं दरवाजे से देखता रहा। मौसी ने नमाज से निपट उसकी तरफ देखा

और लगी मुस्कराने। फिर मानी को डाँटकर बोली "क्या शोर मचाया है तुमने ?"

मानी बोला, "अम्माँ देखो तो बहन जी के माथे पर !"

"क्या है उसके माथे पर ?" मौसी ने मुँह फुलाकर कहा "कुछ भी तो नहीं है। बेकार ' "

"फिर शाम को जो मैं अन्दर गया तो वह बैठी रोटियाँ पका रही थी। उस ने मेरी तरफ देखा और मुस्कराकर आँखे नीची कर ली। माथे पर वह काला टीका ज्यो का त्यो लगा था। इतने मे मानी दौडता हुआ आया "भाई जान मुझे भी हिन्दू बनाओ, मैं भी हिन्दू बनूंगा।"

"हिन्दू बनाऊँ !" मैंने बनावटी आश्चर्य से कहा, "वह कैसे ?"

वह माथे पर उगली रखकर कहने लगा "यहाँ लगा दो, वह जैसे बहन जी को लगाया था।"

उसने नीची नजरो से घूर कर मानी की तरफ देखा और फिर आँखे झुका कर यो बैठ गई कि टीका साफ दिखाई दे। उस रोज वह सारा दिन वैसे ही फिरती रही। सारे घर वाले उस पर हँसते रहे लेकिन उसने वह टीका न मिटाया। कैसे मिटाती वह—मेरे हाथ का लगा हुआ टीका।" और वह खिलखिला कर हँस पडा। "अब बोलो भाभी। मिजाज कैसे है ?"

"रहने दो ये गप्पे। जानती हूँ मैं तुम्हारी बातो को।"

"अच्छा तो और सुनो" सईद ने भाभी की बात अनसुनी करके कहा। "एक दिन मानी भागता हुआ आया और कहने लगा, "भाई जान, बहन जी चूडियाँ पहन रही है, चूडिया।" मैंने वैसे ही मजाक से मुंह बना दिया "चूडिया ! आख थू।" मैंने कहा, "चूडिया तो गाँव की लडकिया पहनती हैं।" मेरा ख्याल है उसने मेरी बात सुन ली होगी क्योकि अगले दिन मैंने उसकी कलाइया खाली देखी। यह देखकर मुझे दुख-सा हुआ। मैंने सोचा, जाने किस चाव से चूडियाँ पहनी होगी ! मुझे अपनी मूर्खता पर बहुत क्रोध आया। मैंने कौशू को सम्बोधित करके कहा, 'कौशू ! तुम चूडियाँ क्यो नही पहनती—देखो तो हाथ कैसे खाली-खाली से है।'

"कल आई तो थी चूड़ियों वाली" वह बोली, "बहन जी ने पहनी थी।" उसने बहाने-बहाने अपनी कलाइयाँ छुपा ली।

"फिर ?" मैंने कीछू से पूछा।

"बहन जी को पसद न आई वे, इसलिए उतार दी।"

"ओह यह बात है ?" मैंने कहा।

"मैं तुम्हे ला दूँ चूड़ियाँ ? चूड़ियाँ खरीदने मे तो कोई मेरा मुकाबला नही कर सकता। ऐसी लाकर दूँगा कि बैठी अपने हाथो को देखती रहो। घर मे जब भी किसी को मँगवानी होती हैं तो मुझ से ही कहा करते हैं। बस अपने नाप की चूड़ी दे दो, फिर देखना।"

अगले दिन जब मैं और मानी बैठक मे बाते कर रहे थे तो मानी चिल्लाने लगा, "यह देखो भाई जान !" उसने मुझे एक चूड़ी दिखा कर कहा, "यह क्या तुम्हारी चूड़ी है ?"

"अच्छा भाभी ! भला वह किस की चूड़ी थी ?"

"मैं क्या जानू !" भाभी ने काम करते हुए कहा।

"तभी तो बता रहा हूँ तुम्हे। यानी कोई वह चूड़ी चुपके से वहाँ रख गया था ताकि मै उस नाप की चूड़ी ला दूँ। क्यो भाभी, समझी अब ··?"

"शायद वह कीछू की हो !" भाभी ने कहा।

"ऊँहूँ।" सईद ने सिर हिलाया, "मैने कीछू की कलाई से मिला कर देखा था। उमे बहुत बडी थी वह। मैं उसे हर समय अपने पास रखता हूँ। अब भी मेरे पास है, दिखाऊँ ?" वह उठ बैठा और सूटकेस से एक चूड़ी निकाल कर भाभी को दिखाकर कहने लगा "यह देखो भाभी !"

भाभी उसे हाथ मे लेकर कुछ देर तक ध्यान से देखती रही, फिर बोल उठी, "तौबा, कितना झूठा है ! गप मारने मे कमाल कर दिया है तुमने। यह चूड़ी तो वह है जो पिछले महीने मैंने तुम्हे दी थी कि इस नाप की चूड़ियाँ लेते आना। देखो तो बिल्कुल वही है। तसलीम के तो बहुत ढीली होगी यह। मेरे और उसके हाथ मे बहुत अन्तर है।"

"कब दी थी मुझे तुमने ?" वह चकित होकर कहने लगा।

"याद नहीं, जब तुम दस दिन की छुट्टियों में आये थे पिछले महीने। हाँ, बल्कि तुम्हारे भाई ने आप ही कहा था कि लाहौर से चूड़ियाँ मगवा लो। याद आया ?"

"ओह !" सईद ने दाँतो तले जबान दे ली, "लेकिन भाभी, फिर यह मेरी मेज पर कैसे पहुँच गई ?"

"किसी बच्चे ने सन्दूक से निकाल कर वहाँ रख दी होगी।"

"लाहौल-वला-कुव्वत ! मैं भी कितना मूर्ख हूँ।"

"आज पता चला है तुम्हे ?" भाभी ने मुस्कराते हुए कहा।

"और भाभी, मैं इसे छुपा-छुपा कर रखता था कि कोई देख न ले और···"

"बस रहने दो यह गप्पे।"

"परमात्मा की सौगध, सच कहता हूँ। एक दिन की बात है कि···।"

"न, मैं नही सुनती" भाभी ने मुस्करा कर कानो मे उंगलियाँ दे ली।

"परमात्मा की सौगध, आज तो बुरी हुई हमसे।" यह कहकर वह उठ बैठा और साथ के कमरे मे जाकर सूटकेस मे से अपने कपडे निकालने लगा। कागजो मे से उसने दो तस्वीरें निकाली और भाभी के पास आकर कहने लगा, "यह देखो भाभी ! मेरे पास उसकी तस्वीर भी है।"

"सच !" भाभी बोली 'देखूं तो।"

"ओह, बहुत बडी हो गई है।" भाभी ने तस्वीर की ओर देखते हुए कहा, "तुम तो कहते थे—जाने क्या कहते थे। देखो तो, उसकी तो अपनी ही शक्ल है लेकिन उसके माथे पर यह काला तिल कैसा है" भाभी ध्यान से तस्वीर देखते हुए कहने लगी।

"नहीं, उनके माथे पर तिल तो नहीं है।" सईद बोला।

"तो यह काला-सा क्या है ?" भाभी ने उसे तस्वीर दिखाते हुए पूछा।

"जाने कैसे लग गया है यह, मुझे तो मालूम नहीं। शायद किसी ने लगा दिया हो।"

"आखिर लगाने ही से लगा होगा न ! अपने आप तो नहीं आ लगा।

और तुम इसे छुपा-छुपाकर रखते होगे, फिर भला कोई और कैसे लगा सकता है।"

"तुम्हारी सौगन्ध भाभी! बडी सावधानी से रखता हूँ इसे। रोज सरहाने रखकर सोता हूँ। फिर सुबह सवेरे ही उठकर देखता हूँ!"

"अच्छा तो अब छोडो इन बातो को और इसके माथे पर से यह बिन्दु खुरच दो। किसी ने देख लिया तो क्या कहेगा?"

"अभी खुरच देता हूँ भाभी!"

"हाँ, अभी मेरे सामने, नही तो तुम भूल जाओगे और यदि तुम भूल गये तो मैं नाराज़ हो जाऊँगी।"

"अच्छी भाभी! तुम इतनी-सी बात पर नाराज हो जाती हो!"

भाभी सईद के हाथ मे एक और तस्वीर देखकर बोली, "यह दूसरी तस्वीर किसकी है?"

"यह है हमारी भाभी की तस्वीर।"

"कौन-सी?"

"वही जो पिछले साल भाई जान ने खिचवाई थी।"

"लेकिन यह तुम्हारे पास कैसे जा पहुँची—ओह—मैं भी सोचती थी कि सन्दूक मे तो मैंने तीन कापियाँ रखी थी लेकिन अब वहाँ सिरफ दो पडी है। यानी तुमने सन्दूक मे से चुरा ली होगी।"

"कैसे न चुराता। इसके बिना जीवन अधूरा रह जाता था ना। बस एक तुम हो भाभी जिसके लिए मेरे दिल मे असीम श्रद्धा है। बस तुम, मैं, और यह।" उसने तसलीम की तस्वीर की तरफ इशारा करके कहा—"यह तुम्हारी बहूरानी—तीनो इकट्ठे हो तो मेरे लिए स्वर्ग हो जाये।"

"अच्छा छोडो इन गप्पो को और तसलीम के माथे का तिल खुरच दो। सुना तुमने?"

"यह लो अभी जाता हूँ" उसने एक फौजी सलाम करते हुए कहा और साथ के कमरे में जाकर चाकू ढूँढने लगा।

शाम को जब सईद बाहर घूमने गया हुआ था तो उसके भाई हमीद दफ्तर

से वापस आये। मियाँ-बीवी देर तक बैठे बातें करते रहे। बातों ही बातों में तबस्सुम ने सईद की बात छेड़ दी। कहने लगी "अल्ला रखे, सईद अब जवान हो गया है। आपको इसकी भी कुछ चिन्ता है ? अब भी अगर आप इसकी शादी की चिन्ता न करेंगे तो कब करेंगे ?"

"अभी इसे बी० ए० तो कर लेने दो" हमीद ने लापरवाही से कहा।

"आखिर आपकी नजर में कोई लड़की है भी या नहीं ?"

"तुम तो पगली हो बन्नी।" हमीद मुस्कराकर कहने लगा "आजकल वह समय नहीं रहा कि जिसे जी चाहा लड़के के सिर मँढ दिया।"

तबस्सुम सुनी-अनसुनी करते हुए बोली "मौसी की लड़की तसलीम के बारे में आपका क्या विचार है ?"

"तुम ने तो बस—हद है। मुझ से क्या पूछती हो ? कोई मेरा ब्याह करना है तुम्हें ? पूछो लड़के से। हम तो बस यही चाहते हैं कि कोई प्रतिष्ठित घराना हो और बस।"

"तभी तो कह रही हूँ। मौसी का घर तो जानते ही हैं आप, और लड़का भी राजी है। बल्कि बातों ही बातों में उसने स्वयं मुझे जताया है।"

"बस तो फिर मुझसे पूछने का क्या मतलब ? लेकिन हाँ, तुम्हारी मौसी का क्या ख्याल है इस बारे में ?'

तभी तो कह रही हूँ कि अगर आप आज्ञा दें तो एक दिन के लिए लाहौर चली जाऊँ और मौसी से बात करूँ। वैसे भी मुझे उनसे मिले छः साल हो गये हैं। मेरी शादी पर आये थे वे। उसके बाद मिलना ही नहीं हुआ।"

जब सईद ने सुना कि भाभी उसके साथ एक दिन के लिए लाहौर जा रही है तो वह खुशी से नाचने लगा "ओह भाभी ! मेरी तो ईद हो जाएगी। हम तीनों एक ही जगह होंगे। तुम, मैं और वह !"

मौसी और तबस्सुम बड़े तपाक से मिलीं। मानो तो तबस्सुम के गले का हार हो गया। मौसी भी दिन-भर बहिन जी, बहिन जी करती फिरी और तसलीम भी आँखों ही आँखों में मुस्कराती रही, चूँकि सईद भी पास ही बैठा था।

रात को जब मौसी और तबस्सुम अकेली बैठी थी तो तबस्सुम ने सईद की बात छेड दी। कहने लगी, "मौसी जी! तसलीम के बारे मे भी सोचा है आपने! अल्ला रखे अब तो जवान हो गई है।"

"मैंने कई बार तुम्हारे मौसा जी से कहा है। पर तुम जानती हो बेटी, उनका अपना ही स्वभाव है। कहते है लडकी सयानी हो जाए तो देखा जाएगा। उनका ख्याल है कि लड़की से पूछे बिना यह काम नही करना चाहिये। मुझे तो उनकी यह बात अच्छी नही लगती। तुम ही बताओ बेटी! भला माँ-बाप लडकी से ऐसी बात पूछते हुए अच्छे लगते हैं क्या? तौबा! हमारे समय मे तो यह बहुत बुरी बात समझी जाती थी। हम तो हुए ना पुराने जमाने के बेटी! लेकिन वह तो मेरी बात सुनते ही नही।"

"इस बारे मे एक बात कहूँ मौसी, अगर तुम बुरा न मानो तो।"

मौसी के माथे पर बल पड गया—"ऐ लो, मैं क्यो बुरा मानने लगी! तुमसे बढकर मुझे कौन प्यारी होगी, बेटी!"

तबस्सुम झेंपकर बोली, "मेरा मतलब है, सईद परमात्मा की कृपा से जवान है। इस साल बी० ए० कर लेगा। बडा अच्छा लडका है वह। अगर—आपकी क्या राय है?"

"तो बेटी वह तो अपना ही लडका हुआ। मुझे तो इससे बडी खुशी होगी। मैं आज तुम्हारे मौसाजी से बात करूँगी। मेरा ख्याल है उन्हे इस बात मे कोई आपत्ति नही होगी। अपनी लडकी अपने घर मे ही रहे तो अच्छा ही होता है—क्यो, है ना बेटी?"

अगले दिन मौसी हँसते हुए कहने लगी, "मैंने कहा था ना कि उन्हे तनिक भी आपत्ति नही होगी। कहने लगे कि यह तो बडे आनन्द की बात है। हाँ, अगर तसलीम—बुरा न मानना बेटी—आजकल की प्रथा जो हुई। अब मुसीबत यह है कि तसलीम से मैं तो बात कर नही सकती—मुझसे तो न हो सकेगा।"

"मैं स्वयं पूछ लूंगी मौसी जी। आप निश्चिन्त रहिये।" तबस्सुम ने हँसते हुए कहा।

दोपहर के समय बहाने-बहाने तबस्सुम तसलीम को बैठक मे ले गई, लेकिन वह सोच रही थी कि कैसे बात करे। उसकी समझ मे न आता था कि क्या कहे। कुछेक मिनट तो वह इधर-उधर की बाते करती रही फिर उसकी नजर सईद के बिस्तर पर जा पडी। बिस्तर लगा हुआ था और तकिये के नीचे से तस्वीर का एक कोना दिखाई दे रहा था। अचानक उसे वह बात याद आ गई—"धर्म से भाभी, मैं उसकी तस्वीर बडी सावधानी से रखता हूँ, रोज सिरहाने रखकर सोता हूँ और सुबह सवेरे उठकर देखता हूँ—" वह मुस्करा पडी और कहने लगी "तसलीम, मेरा एक काम करोगी ? बडी मुश्किल आन पडी है। तुम्हारी कोई सहेली है—जाने क्या नाम है उसका ! सईद को उससे बडा प्रेम है—बहुत अधिक।" उसने मुस्कराहट दबाते हुए कहा "हमारा इरादा है कि अब सईद की शादी कर दे। लेकिन मेरा ख्याल है कि उस लडकी के माँ-बाप से बात करने से पहले लडकी का मन टटोल ले। अगर उसे स्वीकार हो तो सम्बन्ध के लिये बातचीत करे। क्यो तसलीम, है ना ठीक ?"

तसलीम का चेहरा पीला पड गया।

तबस्सुम मुस्करा कर बोली "तुम अगर बातो ही बातो मे पूछ लो तो मेरे दिल से यह चिन्ता जाती रहे।"

"मुझे क्या मालूम कि वह कौन है !" तसलीम ने बडी कठिनाई से कहा।

"मैं बताती हूँ तुम्हे।" तबस्सुम ने हँसते हुए उत्तर दिया, "देखो न, सईद को उस लडकी से इतना प्यार है कि रोज उसकी तस्वीर सिरहाने रखकर सोता है और सुबह-सवेरे सबसे पहले उसे उठकर देखता है। यह देखो अब भी तकिये के नीचे पडी है। आज शायद वह इसे उठाना भूल गया है—यह देखो।" तबस्सुम ने तकिये के नीचे से तस्वीर निकालकर तसलीम को दिखाते हुए कहा।

तबस्सुम की नजर तस्वीर पर पडी और उसके मुंह से एक चीख-सी निकल गई। रग उड गया। उसके हाथ मे उसकी अपनी ही तस्वीर थी। माथे का तिल चाकू से खुरचा हुआ था।

तसलीम खिलखिलाकर हँस पड़ी "मुझसे मजाक करती हो वहिन जी-मजाक !" हँसते-हँसते उसकी हिचकी-सी निकल गई। उसका मुंह लाल हो रहा था और गाल आँसुओ से तर थे। ठीक उसी समय सईद कमरे में दाखिल हुआ। जाजी, जो जाने कब से दरवाजे मे आ खड़ा हुआ था, सईद को देख कर चिल्लाने लगा, "देखो भाई जान, वहिनजी को क्या हो गया है ? मुंह से हँसती है और आँखो से रो रही है।"

शफ़ीक़-उर्रहमान



नाम : शफ़ीक़-उर्रहमान

जन्म : ६ नवम्बर १९२०

शिक्षा : एम० बी० बी० एस० (पंजाब), डी० पी० एच० एडिन्बरा, डी० टी० एण्ड एच० (इंगलैंड)

मैं सन् १९४२ में इण्डियन मैडिकल सर्विस में शामिल हुआ। अब पाकिस्तान आर्मी मैडिकलकोर में लैफ्टिनेंट-कर्नल हूँ और रावलपिंडी में नियत हूँ।

पहली पुस्तक 'किरनें' १९४२ में छपी थी। तब से छः संग्रह 'लहरें,' 'परवाज़,' 'शगूफ़े,' 'पछतावे,' 'हमाकतें' और 'मद्दोजज़र' प्रकाशित हो चुके हैं। एक नया संग्रह छप रहा है।

जब कोई पुस्तक प्रकाशित होती है तो कुछ दिनों के बाद बुरी लगने लगती है। यही ख्याल आता है कि यह इससे अच्छी हो सकती थी। अतएव अपने संग्रहों में से मुझे कोई भी पसंद नहीं है।

युद्धकाल में और उसके बाद मध्य-पूरब और योरुप के विभिन्न देशों में घूमा हूँ—मिश्र, इराक़, टर्की, स्पेन, इटली, युगोस्लाविया, यूनान, स्विट्ज़रलैंड, आस्ट्रिया, फ्रांस इत्यादि। मेरे विचार में लिखने के लिए विस्तृत अध्ययन

और भ्रमण आवश्यक चीजें हैं। मै जहाँ कही भी गया हूँ मुझे वह महान मानव भाई-चारा मिला जो अन्तर्राष्ट्रीय और भौगोलिक सीमाओ से ऊपर है।

उर्दू के आधुनिक कथा-साहित्य मे ले-देकर एक शफीक-उर्रहमान ही ऐसा कहानी-लेखक दिखाई देता है जो 'साहित्य—मनोरंजन के लिए' के सिद्धान्त मे विश्वास रखता है। हास्य तथा व्यंग की पुट लिए हुए उसका वाक्-व्यापार जिसमे इन्द्रधनुष के सातो रंग और वसन्त की सारी रंगीनियाँ विद्यमान हैं, उर्दू साहित्य के लिए पुराना भी है और नया भी। पुराना इस लिए कि उसने पुरानी शैली में कुछ पुरानी कथाओ की परोडियाँ लिखी हैं और उनमे वही क्लासिकल ठाट-बाट मिलता है; और नया इस लिए कि वह सचमुच नया है।

वह डाक्टर है, शारीरिक रूप से भी और मानसिक और साहित्यिक रूप से भी। उसकी कहानियाँ एक सुन्दर, आकर्षक लेकिन सचेष्ट नर्स की तरह अपनी ड्यूटी निभाती हैं और अपनी मुस्कराहटों और मधुरताओ से मनुष्य की रोगी और उदासीन प्रवृत्तियो को रंग और रोमास के संसार मे बहा ले जाती है। वह किसी पेचीदगी या कृत्रिमता से काम नहीं लेता बल्कि बडी सरलता और सादगी से फुलझड़ियाँ छोडता चला जाता है। उसकी कहानियाँ घटनाओं से अधिक पात्रों की कार्य-प्रणाली से अग्रसर होती हैं। वह पात्रो के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण से अधिक सम्बन्ध नहीं रखता बल्कि उनके कार्यकलाप से आनन्द तथा मनोरंजन उत्पन्न करता हुआ तेजी से आगे बढ़ जाता है।

जीवन-दर्शन की बहस को स्थगित करके जीवन की कटुताएँ देखते हुए आप ही आप यह कहने को मन होता है कि शफीक़-उर्रहमान जैसा हास्य जहाँ भी मिले गनीमत समझना चाहिये।

शफ़ीक़-उर्रहमान

तुरप चाल

"तुरप चाल" शैतान बोले।

बट्टी और मैं एक-दूसरे की ओर देखने लगे। बट्टी ने आँख मारी और बोला "रूफी, क्या बजा है ?"

"चार बजे हैं, पत्ते डालो।" वह बोले।

"कैसी अच्छी गाय जा रही है सड़क पर—!" मैंने खिड़की की ओर संकेत करते हुए कहा।

"अभी देखता हूँ, तुम पत्ते डालते जाओ।"

"अरे रूफी, यह कौन है सोफे के पीछे ?" बट्टी घबराकर बोला।

शैतान ने पीछे मुड़कर देखा और हम दोनो ने झट से पत्ते मिला लिए।

"लानत है ! तुम खेलते हो या रोते हो ?" शैतान ने पत्ते पटक दिये और ताव खाकर बोले—"अच्छा ! इस बेईमानी की सजा यह है कि निकालो रुपये।"

"यार, यह तो जुआ हो गया।"

"नहीं, जुआ नहीं, ब्रिज की एक किस्म है" शैतान ने कहा।

मेरी जेब मे गिनती के रुपये थे। उधर बट्टी की जेब भी शायद खाली थी। हम दोनो ने विनम्रतापूर्वक कहा, "उधार रहे।"

संक्षिप्त-सी बहस के बाद शैतान झुँझला कर उठे और चाय के लिए आवश्यक आदेश देने चले गये।

शैतान, बड्डी और मैं ताश खेल रहे थे। यह खेल हमारा आविष्कार था। 'कट-थ्रोट' और 'पीस कोट' को जोडकर दो पर विभाजित कर दिया था। बहुधा शर्तें लगती थी और मैं और बड्डी बहुधा हारते थे।

बड्डी एक मोटा-ताज़ा हँसमुख अमरीकन था जो संयोग से हमे सिनेमा में मिल गया था और बहुत शीघ्र हमारा गहरा मित्र बन गया था। वह कई साल से हिन्दुस्तान मे था। हिन्दुस्तानी खिलौनो पर वह मुग्ध था। कभी-कभी हम उसे आडी टोपी, शेरवानी और चूडीदार पाजामा पहनाकर कवि-सम्मेलनों मे ले जाते थे।

बड्डी हर दूसरे-तीसरे दिन मिलने आता। आते ही चार प्रश्न करता। ये प्रश्न इतने स्थायी थे कि इनमे कभी एक शब्द तक का हेर-फेर नही हुआ था।

पहला प्रश्न—"आज क्या पका है ?"

दूसरा प्रश्न—"कोई नया समाचार ?"

तीसरा प्रश्न—"शहर मे सब से अच्छी पिक्चर कौन-सी है ?"

चौथा प्रश्न—"मै पहले से कुछ मोटा तो नही हो गया ?"

इसके बाद कम से कम एक और अधिक से अधिक अनगिनत चुटकुले सुनाता।

हम लोग चाय पीने लगे। बड्डी बोला, "एक बार एक सिपाही का कोर्ट-मार्शल हो गया। उसने घर पत्र लिखते समय इसका जिक्र कर दिया। घर से उत्तर आया—'प्यारे बेटे ! खुश रहो। कोर्ट-मार्शल के बारे मे पढा। दिल को बडी खुशी हुई। भगवान् का लाख-लाख धन्यवाद है जिसने यह दिन दिखाया। अब हमारी यह प्रार्थना है कि तुम शीघ्रातिशीघ्र फील्ड-मार्शल बन जाओ।'"

फिर—"एक सार्जेंट नये रगरूटो को परेड करा रहा था। उसने सब को एक पंक्ति मे खडे होने को कहा। पंक्ति सीधी न बनी। वह बिगड गया और चिल्ला कर बोला :—

'मूर्खो ! इसे पंक्ति कहते हो ? सब के सब जल्दी से दौडकर यहाँ आओ

और देखो कि कितनी टेढी-तिरछी पक्ति है ।' खैर, नई पक्ति बनी । सार्जेंट ने कहा, अपने दाहिने पाँव हवा मे उठाओ । सब ने अपना-अपना दाहिना पाँव उठा दिया । एक रगरूट ने गलती से बायाँ पाँव उठा दिया और पक्ति मे उन स्थान पर दाहिना और बायाँ पाँव इकट्ठे हो गये । सार्जेंट जोर से चीखा—'यह कौन गधा है जो दोनो पाँव हवा मे उठाये खडा है ?' "

"एक और हो जाय बड्डी !" शैतान ने माँग की ।

"हमारे यहाँ एक बहुत प्रसिद्ध व्यक्ति हुआ है" बड्डी बोला, "इतना प्रसिद्ध कि मैं उसका नाम भूल गया हूँ । वह बेहद मस्खरा था । ९० वर्ष की आयु मे भी वह बच्चो की तरह उछलता-कूदता फिरता । एक बार एक पार्टी मे उसने एक अत्यन्त सुन्दर लड़की देखी जिसे सब लोग बेतहाशा घूर रहे थे । वह कुछ समय तक टिकटिकी बाधे देखता रहा । फिर ठडा श्वास भरकर बोला 'काश ! कि मैं सत्तर वर्ष का होता !' "

अब बड्डी ने शैतान से उसके प्रेम के बारे मे पूछा —

"आज का दिन कैसा रहा ? गये थे उनके यहाँ ?"

"हाँ गया तो था, लेकिन क्या बताऊ, कोल्हू के बैल की तरह हूँ । यानी एक कदम भी आगे नही बढा । उधर उस लडकी का ख्याल मुझे बुरी तरह सता रहा है और उसे देखकर मुझे वह विख्यात चित्र याद आ जाता है जो शायद मैंने कहीं देखा था—बस यह समझ लो कि मुझे इन दिनो प्रेम मे प्रेम होता जा रहा है और घृणा से घोर घृणा हो गई है ।"

"लेकिन पिछले सप्ताह तो तुम बिल्कुल भले-चगे थे,' मैंने कहा ।

"हाँ ! मैं केवल इस मगल से आशिक हूँ और बुरी तरह आशिक हुआ हूँ । भगवान् ऐसा दुर्दिन किसी शत्रु को भी न दिखाये । मुसीबत यह है कि मैं स्वय एक व्यर्थ सा आदमी हूँ । यहाँ तक कि अगर मैं लड़की होता तो अपने आप को कभी पसन्द न करता ।"

"अगर हम लडकी होते तो तुम्हे पसन्द कर ही लेते ।"

"चुप रहो बड्डी ! बस तुम्हारी यही बाते तो हमे पसन्द हैं । अच्छा अब

लगे-हाथो यह भी वतादो कि शादी और वच्चो के वारे मे तुम्हारे क्या विचार हैं ?"

"शादी के वारे मे तो मै एक शब्द भी नही कहूँगा। रह गये वच्चे—सो मुझे पक्षियो, वच्चो और पशुओ से वडी घृणा है ?"

'क्या सब पशुओ से या किसी विशेष पशु से ?"

"सब से।"

"तो गाय-भैसो से भी घृणा है।"

"विल्कुल !"

"लेकिन दूध पीने का तो तुम्हे वहुत चाव है।"

"लेकिन मैं तो टीन के दूध का प्रयोग करता हूँ।"

"टीन का दूध भी तो गाय-भैसो ही का होता है। अभी तक मशीनो ने दूध देना शुरू नही किया।"

"सच ?" वड्डी ने आश्चर्य से पूछा।

"कमाल करते हो, अरे भई डव्वे के ऊपर गाय का चित्र जो होता है।"

"चित्रो का क्या है ?" वड्डी ने अपनी जेव मे 'कैमल' सिग्रेटो का पैकट निकाल कर कहा—"यह देखिये, इस पैकट पर ऊँट का चित्र दिया गया है जब कि इन सिग्रेटो का ऊँट से कोई सम्बन्ध नही।"

"छोडो, क्या वखेडा ले वैठे हो। यह वताओ रफी कि क्या सचमुच मामला इतना वढ गया है कि नौवत शादी तक आ पहुँची है ?" मैंने पूछा।

"हाँ !" शैतान बोले "लेकिन वे लोग मेरी कुछ विशेष परवाह नहीं करते।"

"तो तुम एम ए पास क्यो नही कर डालते ?" वड्डी बोला।

"अव करना ही पडेगा। लेकिन इस समय एम ए पास करना जरूरी नहीं है, वल्कि नौकरी का मिलना जरूरी है। मुझे शुरू से जगलात का विभाग पसन्द है। मेरे ख्याल मे वहा कोशिश की जाय।"

"क्या वेतन मिलेगा ?"

'पाच रुपये और रोटी-कपडा' शैतान बोले।

"लेकिन तुम प्रार्थना-पत्र पर क्या लिखोगे ? कोई खास डिगरी तो है नही तुम्हारे पास, न कोई अनुभव है।"

"यह लिखेंगे कि जगलो से प्रेम है। वृक्षो को पहचान सकता हूँ। पेडो पर चढ सकता हूँ। उन्हे काट सकता हूँ और जगलो मे काफी घूमा हूँ। क्या यह काफी नही ?"

"क्या तुम सचमुच गभीर हो ?" मैंने पूछा।

"तो और क्या मजाक कर रहा हूँ ?"

"लेकिन डाक्टरी निरीक्षण भी तो होगा।"

"होता रहे।"

"मेरा मतलब है तुम्हारी आँखे जरा ...।' मैंने उनके मोटे-मोटे शीशो वाले चश्मे की ओर सकेत किया।

"तो आँखो का निरीक्षण कराये लेते है, कल सही," शैतान बोले।

तय हुआ कि अगले दिन डाक्टरी निरीक्षण हो और उसके लिए जगलात के विभाग मे प्रार्थना-पत्र भेज दिया जाए।

मैं तडके दस बजे उठा और शैतान को कच्ची नींद से जगाया। निश्चित हुआ कि डाक्टर 'शायद' को फोन करके निरीक्षण का समय पूछा जाये। फोन किया, आवाज आई "जोर से बोलिये।"

शैतान जोर से बोले। आवाज आई—"और जोर से बोलिये।" वे और जोर से बोले। फिर आवाज आई—"और भी जोर से बोलिये।" शैतान चिल्लाकर बोले—"महाशय, अगर इससे भी ज्यादा जोर से बोल सकता तो फिर टेलीफोन की क्या जरूरत थी ?"

अब टेलीफोन पर से एक खुसर-पुसर किस्म का व्याख्यान सुनाई दिया। शैतान तग आकर बोले, "साहब ! जब तक आप चुप रहते है, मुझे सब कुछ साफ-साफ सुनाई देता है, लेकिन जब आप बोलना शुरू करते है तो कुछ पता नही चलता।"

इतने मे पता चला कि टेलीफोन गलत नम्बर पर किया है। दूसरी ओर से डाक्टर 'शिफा-अज-मसीह' बोल रहे है। उनकी चिकित्सा का ढग प्राचीन

यूनानी और रोमन आयुर्वेद के अनुसार था। वे हम से परिचित थे। शायद डाँट रहे थे। शैतान ने जल्दी से कहा "मैं कुछ बीमार-सा हूँ।" उन्होंने रोग के लक्षण पूछे। शैतान को जितने लक्षण याद थे, सब बता दिये। उधर से आवाज आई—"तुम परहेज का खास ख्याल रखो। एक सप्ताह तक ऐसा हल्का भोजन लो जो एक वर्ष का बच्चा भी आसानी से पचा सकता हो।"

खैर, इसके बाद डाक्टर 'शायद' साहब को फोन किया गया। उत्तर मिला "पहले स्वय आकर समय तय करो फिर निरीक्षण होगा।"

अगले दिन उनकी कोठी की ओर चले। रास्ते मे डाक्टर 'किब्ल-अज-मसीह' मिल गये। शैतान का हाल पूछने लगे। ये बोले "अब अच्छा हूँ।"

"मैंने तुम्हे एक साल के बच्चे वाला भोजन करने को कहा था, किया ?"

"जी हाँ, किया।"

"क्या लिया था ?"

"थोडी-सी मिट्टी, एक बटन, नारङ्गी का छिलका, सिग्रेटो के कुछ टुकडे, एक शीशे की गोली..."और डाक्टर साहब जोर-जोर से हँसने लगे।

डाक्टर 'शायद' के यहाँ पहुँचे। मालूम हुआ कि आज वे किसी से नहीं मिलेंगे। थोडी देर के बाद फिर पहुँचे, यही उत्तर मिला। हमने भी बार-बार हमले किये। अन्त मे उन्होंने हथियार डाल दिये और हमें भीतर बुला लिया।

शैतान ने आगे बढकर सलाम किया। वे बोले—"तुम्हे मालूम है कि आज मैं सात व्यक्तियो को जो मिलने आये थे बिना मिले वापस भेज चुका हूँ।"

"जी हाँ, मालूम है! वे सातो मुलाकाती मैं ही । मैं ही सात बार आया था।" शैतान बोले।

इसके बाद निरीक्षण शुरू हुआ। शैतान का चश्मा उतार लिया गया और वे मेरा सहारा लेकर खडे हुये, नहीं तो शायद गिर ही पडते।

"सामने देखिये—और अन्तिम अक्षर पढिये।" डाक्टर साहब ने कहा।

"कौन-सा अक्षर ?" शैतान ने आश्चर्य से कहा।

"अन्तिम पंक्ति का अन्तिम अक्षर।"

"कौन-सी पंक्ति ?"

"उस तख्ते की अन्तिम पंक्ति।"

"कौन-सा तख्ता ?"

"सामने की दीवार पर टँगा हुआ तख्ता।"

"कौन-सी दीवार ? शैतान ने हैरान होकर पूछा।

और निरीक्षण समाप्त हो गया। डाक्टर साहब ने लिख दिया कि शैतान की आँखें इतनी कमज़ोर हैं कि उन्हे किसी तरह भी आँखें नहीं कहा जा सकता।

शाम को बड्डी आया। आते ही उसने पूछा—"क्या पका है ?"

बताया "शामी कबाब और मीठे टुकड़े।"

बड्डी की लार टपकने लगी। बोला—"कोई नया समाचार ?"

उसे शैतान के डाक्टरी निरीक्षण के बारे मे बताया गया।

तीसरे प्रश्न का यह उत्तर दिया गया—'तूफानी घोड़ा' उर्फ 'बदनसीब बिल्ली' शहर की सर्वोत्तम पिक्चर है। अब अन्तिम प्रश्न था, मुटापे के बारे मे, सो उसे विश्वास दिलाया गया कि वह बिल्कुल मोटा नहीं हुआ, जितना मोटा था उतना ही है।"

उसके बाद चाय का दौर शुरू हुआ।

"आज बिस्किट ज़रा सख्त हैं" मैंने बिस्किट चबाते हुए कहा।

"सचमुच" शैतान बोले—"यह बिस्किट इतना सख्त है कि अगर बड्डी के सिर पर मारा जाये तो बिस्किट टूट जाये।"

"मेरा भी यही ख्याल है।" बड्डी बोला।

"आज का चुटकला ?"

"कोई विशेष चुटकला तो याद नहीं। हाँ, पिछले साल जब मैं कलकत्ते में था तो मेरे पड़ोस में चार गधे बँधते थे, जो ठीक चार बजे बोलते थे और इतने नियम से बोलते थे कि उनकी आवाज़ पर मैं अपनी घड़ी ठीक किया करता था।"

"तो आजकल तो वहाँ केवल तीन गधे रह गये होंगे।" शैतान बोले।

बड्डी कुछ शर्मा गया। "आसाम मे वर्षा बहुत होती है। जब मैं वहाँ था

तो चिरापूंजी के पास मुझे एक व्यक्ति मिला। मैंने बातों-बातों में उससे पूछा कि यहां साल में कितने इंच वर्षा होती है? वह बोला 'मालूम नहीं साहब! मैं चालीस वर्ष का हूँ। जबसे होश सँभाला है, तबसे यहाँ वर्षा हो रही है।''

"दार्जिलिंग भी गये थे तुम?" मैंने पूछा।

"भला वहाँ का सूर्योदय मैं कैसे भूल सकता हूँ।" बट्टी बोला।

"मेरे विचार में संसार का सबसे सुन्दर सूर्योदय सिंध का सूर्यास्त है।" शैतान ने कहा।

"तुमने दार्जिलिंग का सूर्योदय देखा है?" बट्टी ने पूछा।

"मैंने आज तक कोई सूर्योदय नहीं देखा," शैतान बोले, "मुसीबत यह है कि सूर्योदय देखने के लिए ऐसे समय उठना पड़ता है जब सूर्य निकल रहा हो। ऐसे समय उठने का कभी संयोग नहीं हुआ। हाँ, मैंने आकाश के बीच में पहुँचा हुआ सूर्य बहुधा देखा है।"

"लोग कहते हैं कि दार्जिलिंग काफी ठण्डा स्थान है, लेकिन मैं तो वहां केवल एक कमीज में फिरता रहा," बट्टी ने गर्व से कहा।

"तुम्हारा क्या है? तुमने चर्बी का ओवरकोट जो पहन रखा है।" शैतान बोले।

"मैं एक पोस्तीन बलोचिस्तान से लाया था। जिसके खूब लम्बे-लम्बे भूरे बाल हैं। जी चाहता है, पहना करूँ।" बट्टी ने कहा।

"भगवान् के लिए वह पोस्तीन कहीं तुम न पहन बैठना। शहर भर के कुत्ते पीछे लग जाएँगे।"

बट्टी को शैतान के इश्क की विफलता पर दुःख हो रहा था। ये विचार हमें परेशान किये देता था कि अगर बहुत शीघ्र कोई प्रबन्ध न किया गया तो शैतान की प्रेमिका को कोई और ले जाएगा।

आखिर बट्टी बोला, "यह नर्विस आदि सब व्यर्थ की बातें हैं। कम से कम हमारे देश में तो लोग नर्विस की बिल्कुल परवाह नहीं करते, बस आदमी देखते हैं। तुम किसी तरह उन लोगों में प्रिय हो जाओ, उन परियों पर इतने छा जाओ कि वे तुम्हारे नाम की माला जपने लगें। अपना प्रेम केवल एक

लडकी पर प्रकट करो, हर एक से मत कहते फिरो—सिवाय हम दोनो के ·· यह मत करो कि कागो हाथ सदेसे और चिडियो हाथ सलाम ' (यह मुहावरा उन मुहावरो मे से था जो हमने बट्टी को याद कराये थे। बट्टी ने आज पहली वार किसी मुहावरे का ठीक स्थान पर प्रयोग किया था)' 'खूब व्यायाम किया करो, हल्का भोजन खाओ, सुवह सवेरे उठा करो। फलो और सब्जियो का प्रयोग जारी रखो और विश्वास कर लो कि तुम अवश्य सफल हो जाओगे।"

बट्टी का यह नुस्खा सचमुच रामबाण और अनुभूत मालूम होता था। तय हुआ कि उसे अवश्य परखा जाए।

दूसरे दिन से शैतान ने बडे जोर-शोर से उनके हाँ जाना शुरू कर दिया। बट्टी ने परामर्श दिया कि यदि कोई प्रतिद्वन्द्वी क्षेत्र मे हो तो उसे पिटवा दिया जाये। पीटने के लिए कई महाशय तैयार थे। उनकी सेवाये हमारे अर्पण थी, एक तो हमारे मित्र रुस्तम अली 'रीछ' थे और दूसरे लोमड़ीचन्द 'जड़ाऊ'··· उनका नाम कुछ और था लेकिन वे लोमडी से मिलते-जुलते थे और जड़ाऊ इसलिए कि उन्होंने अपने चेहरे पर अनगिनत कील, मुहासे और न जाने क्या अला-बला उगा रखी थी।

मुसीबत यह थी कि कोई प्रतिद्वन्द्वी भी उत्पन्न नही हुआ था और उन लोगो का इरादा यह था कि किसी योग्य लडके की तलाश मे आयु बिता देंगे लेकिन शैतान को दामाद न बनाएँगे।

बट्टी का आग्रह था कि पहले लडकी के पिता को काबू मे किया जाये, चाहे किसी टोने-टोटके से, चाहे बातचीत से। इसी सिलसिले मे शैतान प्रतिदिन उनके घर पर आक्रमण करते और उन महाशय को फुसलाते।

एक शाम को हम दोनो वहां पहुँचे। महाशय बोले—"लड़को ! चाय का समय तो नही रहा लेकिन अगर कहो तो मँगवाऊँ।"

"जी हाँ, जरूर !" शैतान बोले। मैने मेज के नीचे से एक ठोका दिया।

"यह तुम क्यो मुझे मार रहे हो ?" शैतान ने जोर से कहा।

चाय पर बाते शुरू हुई। वह महाशय रेलवे-बजट का जिक्र कर रहे थे। भगवान जाने उन्होंने क्या-क्या कहा, क्योंकि मुझे रेलवे से थोड़ी-बहुत दिलचस्पी

जरूर है, लेकिन बजट से ज़रा सी भी दिलचस्पी नहीं । मैंने कुछ न सुना । शैतान बढ़-चढ़कर बोल रहे थे । आखिर महाशय ने समाचार-पत्र देखकर कहा "इस साल बजट इतने करोड, इतने लाख, इतने हज़ार, चार सौ निन्नानवे रुपये पांच आने नौ पाई का आया है—इसके बारे मे तुम्हारे क्या विचार हैं साहबज़ादे ?"

शैतान कुछ देर सोचकर बोले—"मेरे विचार मे बजट मे दस आने तीन पाई जमा कर देने चाहिये ताकि आने-पाइयो से मुक्ति मिल जाए और आंकड़े पूरे हो जायें ।"

बजट की बात-चीत वही समाप्त हो गई । व्यायाम की बात छिड़ी । महाशय बोले "इस आयु मे मैं भाग-दौड तो नही सकता, हाँ, साइकिल चला लेता हूँ । इससे अच्छा-खासा व्यायाम हो जाता है ।"

"मोटर मे बैठने से भी काफी व्यायाम होता है" शैतान बोले "और रेल की सवारी से तो और भी व्यायाम हो जाता है ।"

महाशय चुप हो गये । थोडी देर तक कोई न बोला । आखिर तंग आकर मैंने शैतान से पूछा—"क्या सोच रहे हो ?"

बोले "यह कितनी विचित्र बात है कि हम इस वास्तविकता को बिल्कुल भूल चुके हैं कि हम एक सितारे पर आबाद हैं ।"

इस बार महाशय ने ऐसा बुरा मुंह बनाया कि मैंने सोचा कि अब ये छींक मारेंगे ।

रेडियो पर स्थानीय स्टेशन से कोई गाना हो रहा था । महाशय बोले—"बिल्कुल बेकार का गाना हो रहा है, न जाने ऐसे गाने वालों को गाने की आज्ञा कौन देता है ?"

शैतान तुरन्त उठे—"अभी बंद करवाता हूँ ।" मैं साथ उठा । साथ के कमरे में गये । रेडियो-स्टेशन को फोन किया—"इस वक्त कौन गा रहा है ?"

"इस वक्त जनाब मस्त मौला साहब तानतोड़ भीमसेन राग गांधार घूम-घाम ध्रुपद में अलाप रहे हैं" उधर से कुछ इस प्रकार का उत्तर आया ।

"तो उनसे कह दीजिये कि फौरन चुप हो जायें," शैतान बोले ।

"हम आगे प्रोग्राम देते समय इस बात का ख्याल रखेंगे कि आप उनका गाना पसद नही करते । लेकिन इस समय कुछ नही कर सकते ।"

"विश्वास कीजिये हमे यह गाना बहुत बुरा लग रहा है ।"

"आप कुछ देर के लिए रेडियो बद कर दीजिये ।"

"और आप मस्त कलदर को चुप नही करायेंगे । अच्छा, अगर यह बात है तो तैयार हो जाइये, मै अभी आकर आपकी खबर लेता हूँ ।" यह कहकर टेलीफोन बद कर दिया ।

जब हम वापस आ रहे थे तो मैंने अपनी तुच्छ राय प्रकट की कि बडे-बूढो के सामने शैतान को कुछ समझदारी से काम लेना चाहिये । लेकिन शैतान का ख्याल था कि चूंकि मेरा अनुभव अभी थोडा है इसलिए विचार भी सीमित हैं ।

वापस कमरे मे पहुँचे तो देखा कि असख्य मच्छर और तरह-तरह के भुंगे-पतगे बल्ब के चारो ओर जमा है ।

शैतान बोले—"मैं उन भाग्यशाली लोगो मे से हूँ जिन पर मच्छर, भिड, ततैये, मक्खियाँ आदि बुरी तरह आसक्त है और जहाँ वे जाते हैं, ये चीजे अगर कई मील की दूरी पर हो तुरन्त स्वागत के लिए आ जाती है ।"

मच्छरो ने तो हमे बेतरह सताया, तग आकर हमने बत्ती बुझा दी । लेकिन मच्छरो की भिनभिनाहट पूर्ववत रही । इतने मे सयोग से एक जुगनू भी उड़ता हुआ कमरे मे आगया ।

"देखी तुमने इन बेईमान मच्छरो की शरारत," शैतान बोले "अब ये मशाल लेकर मुझे ढूँढ रहे है ।"

हम दोनों जुगनू के पीछे पड गये । उसका विचार बाहर जाने का बिल्कुल नही दीखता था । हमने बलपूर्वक उसे बाहर भगाया । मसहरियो मे भी मच्छर पहुँच चुके थे । शैतान बोले—"मसहरी प्रयोग करने का सही तरीका यह है कि पहले खूब अच्छी तरह मसहरी लगा लो । इसके बाद एक ओर से कुछ भाग ऊपर उठा दो और कुछ देर उठाये रखो । ताकि कमरे भर के मच्छर मसहरी मे चले जाये और उसके बाद मसहरी बंद कर दो और स्वय बाहर सो जाओ ।"

दूसरे दिन बड़ी आया और आते ही उसने चारो प्रश्न किये । मैने और

शैतान ने निश्चय कर लिया था कि आज वड्डी की बातों पर बिल्कुल नहीं हँसेंगे।

वड्डी बोला—"मैं न्यूयार्क के एक प्रसिद्ध होटल में ठहरा हुआ था। रात को किसी ने मेरे कमरे का दरवाजा खटखटाया। खोला, देखता क्या हूँ कि एक आदमी नशे में धुत खड़ा है। मुझे देखकर बोला—"क्षमा कीजिये, गलती हुई।" मैं दरवाजा बन्द करके लेट गया। थोड़े समय के बाद फिर किसी ने दरवाजा खटखटाया। जाकर देखता हूँ तो वही आदमी खड़ा है। वह क्षमा माँग कर फिर चला गया। तीसरी बार फिर आया, चौथी बार, पाँचवी बार, आखिर मैं झल्ला उठा। इस बार जो वह आया तो मैंने पूछा—"क्यों साहब, आप बार बार मेरे कमरे में क्यों आते हैं?"—उसने बड़ी सरलता से कहा, "और मेरी समझ में यह नहीं आता कि होटल के हर कमरे में मुझे आप ही क्यों मिलते हैं?"

हम दोनों मौन रहे। वड्डी ने हमारे हँसने का कुछ सेकिंड इन्तजार किया। फिर बोला, "मैं वाशिंगटन के चिड़ियाघर की सैर कर रहा था। मुझे एक व्यक्ति दिखाई दिया जो बहुत से बच्चों को साथ लिये घूम रहा था। गिने तो बारह थे। हम उस अहाते के बाहर फिर मिले जिसमें ज़ेबरा बन्द था। वह व्यक्ति चौकीदार के पास गया और बोला—"क्या मैं और मेरे बच्चे भीतर जाकर ज़ेबरा देख सकते हैं?" चौकीदार ने पूछा—"क्या ये सब बच्चे आपके हैं?" उत्तर मिला—"जी हाँ! सब मेरे हैं।" चौकीदार कुछ देर बुत बना खड़ा रहा, फिर बोला—"तो आप यहाँ ठहरिये। मैं भीतर से ज़ेबरे को बुलाकर लाता हूँ ताकि वह आप को देख ले।"

शैतान मुस्कराने लगे और रो दिये। अब वड्डी समझ गया कि हम उसके साथ ज्यादती कर रहे हैं। उसे मानना पड़ा।

"वड्डी, क्या बजा है?"

"मेरी घड़ी आगे है।"

"फिर भी क्या बजा होगा?"

"घड़ी बहुत आगे है।"

"तीन-चार दिन तो आगे नहीं होगी?" शैतान बोले।

खाने के बाद शैतान की प्रेमिका के सम्बन्ध मे बातचीत छिड गई।

"तुम लडकी से स्वय क्यो नही मिलते ?" वड्डी ने पूछा।

"इसलिए नही मिलता कि अगर कहीं उसने हाँ कर दी तो मुसीबत आजायगी। उसके पिता अवश्य ही इन्कार कर देगे और फिर मैं कुछ कर गुजरूँगा।"

"लेकिन उन्हे लड्की की 'हाँ' होने पर क्या आपत्ति होगी ? समझ मे नही आता कि तुम किस वात की प्रतीक्षा कर रहे हो। शायद इस इन्तजार मे हो कि कब लडकी की शादी किसी और मे होती है और कब तुम्हे छुट्टी मिलती है—क्यो ?"

"और जो कही लडकी ने 'ना' करदी तो फिर उसके पिता की 'हाँ' बेकार होगी। अगर दोनो ने 'ना' करदी तो बहुत दुःख होगा।" शैतान ने कहा।

"तुम्हारा सिद्धान्त मेरी समझ से बाहर की चीज है" वड्डी बोला "जो हो मैं यह परामर्श अवश्य दूंगा कि तुम उसके पिता से मिलते रहा करो।"

अगले दिन हम लोग दोपहर के समय उनकी कोठी की ओर चले। अभी सडक पर ही थे कि भीतर से किसी बच्चे के रोने की आवाज सुनाई दी।

"आहा, लच के लिए समय का हल्का-हल्का, प्यारा सगीत हो रहा है।" शैतान बोले।

भीतर गये तो वहाँ किसी मकान की चर्चा हो रही थी, वे लोग मकान बदलना चाहते थे, दोपहर को मकान देखने का प्रोग्राम था। हमे भी निमन्त्रित किया गया। यह मकान नदी के किनारे पर था।

शैतान बोले—"मैंने सुना है कि नदी के किनारे पर जो मकान हो उसकी आयु एक साल से अधिक नही होती बल्कि शायद उससे पहले ही गिर पडते है।"

"तुमने यह किससे सुना ?" उन महाशय ने पूछा।

"बस सुना है।"

"किससे सुना ?" महाशय सचमुच नाराज हो गए। उन्हे बहुत जल्द क्रोध आता था।

"साहब ! मुझे स्वय अच्छी तरह मालूम नही लेकिन मेरे एक मित्र कह रहे

थे कि उनका नौकर जब बाजार गया तो उसने एक दुकानदार को कहते सुन कि एक खरीदार ने कही से यह सुना कि कुछ आदमी एक जगह चरस आदि पीकर यह कह रहे थे ''

और वे महाशय जोर-जोर से हँसने लगे, बोले—"बेटे ! तुम मेरे क्रोध का विचार न करो। मेरा क्रोध ही क्या ? पारा ऊपर पहुँचा नही कि तुरन्त नीचे उतर आता है।"

"और अभी अच्छी तरह नीचे उतरा नही कि फिर ऊपर चला जाता है।" शैतान बोले। और वे महाशय पुन नाराज हो गये।

मैंने धीरे से शैतान को टोका—"रूफी, इस प्रकार तो तुम आयु भर लडकी को नही जीत सकते।"

"तुम्हारा अनुभव सीमित है, इसलिये विचार भी सीमित है।" वे बोले।

हम लोग पैदल चले। हमारे साथ वे साहब भी थे जो मकान के सिलसिले मे आए थे।

रास्ते मे एक जगह मोटरो के लिए यह नोटिस लगा हुआ था—

"खबरदार ! रफ्तार पन्द्रह मील से अधिक नही होनी चाहिये।"

शैतान ने सब का ध्यान उधर खीचा और बोले, "जरा धीरे चलिये।"

मकान देखा, योही सा था। शैतान से राय पूछी गई, बोले "बस मकान है।" मकान वाले साहब बार-बार नदी का जिक्र करते थे "नदी के किनारे है। देखिये वह रही नदी। नदी बिलकुल सामने है।"

शैतान बोले "साहब ! यह क्या आप घडी-घडी नदी का हवाला देते हैं ? मकान से इसका क्या सम्बन्ध ? आप अपनी नदी को यहाँ से हटा ले तो क्या फर्क पड जायेगा।"

जब हम वापस आ रहे थे तो मकान वाले साहब, वे महाशय और मैं तीनो शैतान से तग आ चुके थे।

मैं और शैतान सुबह सवेरे ग्यारह बजे शेव कर रहे थे कि एक साहब धारे। शैतान से बोले, "क्यो हज़रत ! रूफी साहब आप ही हैं ?"

"हो सकता है कि मैं रूफी हूँ, सम्भव है कि रूफ़ी नही हूँ। इसका निर्णय

उस काम पर है, जिसके लिए आप पधारे है।"

और वास्तविकता यह थी कि पडोसी महोदय प्रतिदिन हमारी साइकिल के लिए अपना नौकर भेज देते थे। मालूम हुआ कि 'मकसूद घोड़े' ने हमे बुलाया है। मकसूद घोडा एम एस-सी मे पढता था। वह शैतान की प्रेमिका के पडोस मे रहता था। शायद 'कुञ्ज गली' की कोई नई ताजा खबर सुनाना चाहता हो। हम जल्दी-जल्दी शेव करने लगे।

"लेकिन इस समय शायद वे लतीफ साहब के यहाँ होगे। एक घटे तक वापस लौटेंगे।" सदेशवाहक बोला।

लतीफ भी साइस पढता था। सदेशवाहक को हमने विदा किया और स्वय तैयार हो गये।

"उसका बैग जरूर ले चलना। महीनो से हमारे यहाँ मेहमान है।" मैंने याद दिलाया। हम बैग लेकर चल पडे।

लतीफ के घर पहुँचे। दरवाज़ा खोला ही था कि एक साहब ने जल्दी से शैतान के हाथ से बैग ले लिया और उनको एक कमरे मे ले गये, जहाँ एक बच्चा बिस्तर मे लेटा था। शैतान को डाक्टर साहब कहकर सम्बोधित किया गया। कदाचित् वे लोग किसी डाक्टर की प्रतीक्षा मे थे। मेरे आश्चर्य का ठिकाना न रहा, क्योंकि शैतान ने बच्चे का बाकायदा निरीक्षण शुरू कर दिया। आँखो मे उँगलियाँ डाली, हा, हा, कराया। छाती ठोक-बजाकर देखी। कमर मे एक घूँसा जमाकर कहा "दर्द हुआ ?"

कोई आध घटे तक शैतान निरीक्षण करते रहे। उसके बाद बोले : "जनाब, मैं डाक्टर नही हूँ। एम ए का विद्यार्थी हूँ और लतीफ साहब से मिलने आया हूँ लेकिन मेरे विचार मे यह केस 'एक्यूट टासिलाइटिस' का है। साथ ही 'फैजाइटिस' और 'हाइनाइटिस' भी है। आश्चर्य नही यदि 'ट्रैकी-आइटिस' भी हो। खैर, घबराने की कोई बात नही।"

मालूम हुआ कि लतीफ रात से गायब है। सीधे मकसूद घोडे के घर पहुँचे। वहाँ ताला लगा हुआ था। सडक पर प्रतीक्षा करनी पडी।

ऊपर से किसी ने आवाज दी। देखा तो मकसूद घोडा हिनहिना रहा है।

"अबे कम्बख्त ! बाहर ताला लगाकर भीतर बैठा है।"

उसने चाबी फैंकी। ताला खोलकर हम भीतर गये। मालूम हुआ कि उसकी परीक्षा के दिन निकट आ गये हैं इसलिए पढाई मे व्यस्त है।

"तो हमे क्यो बुलाया था ?" शैतान कडककर बोले।

"भई सुबह-सुबह शैतान की प्रेमिका के दर्शन हुए हैं। मैं छत पर बैठा पढ रहा था। उधर शायद उनकी भी परीक्षा है। वे पुस्तकें लेकर छत पर आईं। कुछ देर पढकर वापस चली गईं। पूरी आशा है कि दोबारा कष्ट आयेंगी।"

"आएगी कहो—आदर-वादर की कोई जरूरत नही।" शैतान बोले "और मुझे जरा ठडा पानी पिलाओ। मैं सौंदर्य के रोब से थर्रा रहा हूँ।"

मकसूद घोडा पानी लेने चला गया और न जाने कहाँ खो गया। जब काफी देर हो चुकी तो शैतान जोर से बोले, "कही आक्सीजन और हाइड्रोजन लेकर निर्मल-स्वच्छ पानी तो नही बना रहा। अरे भाई, सादा पानी ही ले आ।"

मकसूद घोडा सरपट भागा आया और बोला—"चलो छत पर।"

हम छत पर पहुँचे और बाकायदा मोर्चा बनाकर आड से देखने लगे। दूसरी छत पर कई लडकियाँ बैठी थी।

"ये तो कई है।" शैतान बोले।

"तो क्या हुआ ? इनमे शैतान की प्रेमिका भी तो है। पहचान लो।"

"कौन-सी है भई रूफी ?" मैंने पूछा।

"वह हैं हरे दोपट्टे वाली !" शैतान बोले।

"वही जिसने सफेद जूते पहन रखे है ?" घोडे ने पूछा।

"हम लडकियो के जूतो की ओर ध्यान नही दिया करते।" शैतान ने कहा। फिर जल्दी से बोले "अरे ! हरे दुपट्टे वाली नही, वह प्याजी साढी वाली है।"

"अच्छा !" हम दोनो ने बडे ध्यान से देखना शुरू किया।

"रूफी ! यह तो कुछ नही। यह तो यूँही-सी है।" घोडा बोला।

"तो फिर वह होगी, जिसकी दो चोटियाँ हैं, जो मुस्करा रही है।" शैतान बोले।

"होगी से क्या मतलब है तुम्हारा ? लानत है ऐसे आशिक पर जो अपनी प्रेमिका को न पहचान सके।"

"चश्मे के शीशे साफ करो," मैंने सुझाव दिया।

शीशे साफ किये गये। "भई वही है हरे दुपट्टे वाली !" शैतान ने अन्तिम फैसला सुना दिया।

इतने मे नौकरानी आई और लडकियो को बुला ले गई।

निश्चित यह हुआ कि लडकी अच्छी है लेकिन ऐसी नही है कि शैतान इतना गुल-गपाडा मचायें कि मित्रो के प्रोग्राम खराब कर दें।

तुम दोनो बहुत घटिया रुचि के मालूम होते हो। मैं तुम्हारे इस घटियापन पर शोक प्रकट करता हूँ।" शैतान बोले—"खैर बड्डी को दिखाएंगे। वह निर्णय देगा।"

घोडे ने वायदा किया कि जब कभी ऐसा शुभ अवसर फिर आया, वह हमे तुरन्त सूचना देगा और हम बड्डी को साथ लाएंगे।

चलते समय घोडे ने कहा—"रूफी, मैं तो यही सलाह दूंगा कि तुम हरे दुपट्टे वाली की बजाय सफेद दुपट्टे वाली पर आशिक हो जाओ तो ज्यादा अच्छा होगा। आगे तुम्हारी मर्जी।"

"मैं आशिक हूँ या मदारी ?" शैतान रूठकर बोले।

उसके बाद कुछ दिन बिल्कुल खामोशी से व्यतीत हुए, क्योंकि शैतान की त्रैमासिक परीक्षा थी और शायद यह उनके जीवन मे पहली परीक्षा थी जिसके लिए उन्होंने कुछ तैयारी की थी।

शैतान त्रैमासिक परीक्षा मे सफल हो गये। यह समाचार बिजली की तरह शहर भर मे फैल गया। गजब हो गया। लोगो का ताता बँध गया। पत्र आये। बधाई के तार आये। निश्चय मित्रो ने फैसला किया कि चूंकि बहुत समय के बाद यह शुभ घडी देखने को मिली है इसलिए इस खुशी मे एक उत्सव

मनाया जाए। रुपयो का प्रश्न उठा। शैतान के भाई साहब वही थे। शैतान बोले "भाई साहब से उधार लिये जाये।"

"और जो भाई साहब न दे तो ?"

"उनसे पूछे ही क्यो ? उन्हे पता चले बिना चुपचाप उधार ले आये।"

उत्सव हुआ। लगभग सब मित्र निमन्त्रित थे।

शैतान बडे आग्रह से उन महाशय को भी ले आये। मैंने बहुत कहा कि इस चण्डाल-चौकडी मे उन्हे बिल्कुल न बुलाया जाय, लेकिन वे न माने। दुर्भाग्य-वश वे महाशय अपने साथ दो और महाशय ले आये। उनमे से एक तो काफी बूढे थे और दूसरे इतने बूढे नही थे, उन दोनो के सामने वे महाशय अपनी आयु से कही कम बूढे नजर आ रहे थे।

शैतान शर्बत लाये। महाशय ने इन्कार कर दिया। शैतान तुरन्त भीतर गये और उसी शर्बत को एक लम्बोतरे गिलास मे उडेलकर दोबारा ले आये। महाशय ने धन्यवाद सहित गिलास उठा लिया और गट-गट पी गये।

प्रोग्राम शुरू हुआ। दो व्यक्ति शतरज लेकर बैठ गये और चाल सोचने लगे। देर तक उन्होंने न मोहरो पर से अपनी नजरे उठाई और न कोई चाल चली। बस सिर झुकाये सिर खुजाते रहे। उनके सामने ढोल बजाये गये, तबले खडकाये गये, शोर मचाया गया, उनका नाम ले-लेकर पुकारा गया, लेकिन क्या मजाल जो उनका ध्यान शतरज से जरा हटा हो। उन्हे खेच-खेचकर एक ओर किया गया और खूब तालियाँ बजी।

अब गप्पो का मुकाबला शुरू हुआ। हमारी योजना के अनुसार हर गप्प इस वाक्य से शुरू होती थी—"सज्जनो ! वास्तविकता गल्प से कही आकर्षक होती है" और इस वाक्य पर समाप्त होती थी "विश्वास कीजिये, सज्जनो ! यह मेरी आँखो देखी घटना है।"

एक से एक बढकर गप हाँकी गई। जजो ने फैसला दिया कि सबमे अच्छी गप्पें ये थी :—

रुस्तम अली रीछ : एक दिन मैं समुद्र के किनारे ह्वेल मछलियाँ पकड रहा था। क्या देखता हूँ कि एक व्यक्ति समुद्र मे कूदने की तैयारी कर रहा

है—शायद आत्महत्या के लिए। इतने मे एक राहगीर ने उसे दौडकर पकड लिया और कारण पूछने लगा। वह व्यक्ति राहगीर को एक ओर ले गया। दोनो कुछ समय तक बातें करते रहे। उसके बाद दोनो किनारे पर गये और इकट्ठे समुद्र मे कूद गये।

बट्टी : ब्राजील के कुछ भागो मे इतनी सर्दी पडती है कि वहाँ के निवासी कही और जाकर रहते हैं।

तरबूज लाल तरबूज : महा-मरुस्थल के कुछ भागो मे इतनी चुप्पी है कि वहाँ आप अपने को सोचता हुआ सुन सकते हैं।

मकसूद घोडा : चीन के एक प्रसिद्ध स्थान पर इतना मलेरिया है कि वहाँ के मच्छरो को भी मलेरिया हो जाता है। खूब बुखार चढता है।

शैतान : आजकल मैं बन्दूक खूब चलाता हूँ। मेरे निशाने का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि कल मैंने एक गोली चलाई और दूसरी गोली से पहली के टुकडे उडा दिये।

लोमडीचन्द जडाऊ : हमारे यहाँ एक बहुत पुराना क्लाक है। उसके पेंडुलम की परछाई दीवार पर दस साल से पड रही है और दीवार पर परछाई का निशान पड गया है।

हकीम उम्र अय्यार : जब मैं घोडे पर सवार होकर हिमालय पर्वत की सैर कर रहा था तो शाम को मैंने बर्फ पर एक वृक्ष के नीचे अपना बिस्तर लगाया, और घोडे को वृक्ष से बाँधकर सो गया। सुबह क्या देखता हूँ कि बर्फ पिघल चुकी है। मैं वृक्ष की चोटी पर बैठा हूँ और घोडा टहनियो से लटक रहा है।

खाना शुरू हुआ।

"तरकारी में हल्दी जरा कम है" एक सज्जन बोले। कई सज्जनो ने उनका समर्थन किया। खाना समाप्त हो चुकने के बाद छोटी-छोटी पुडियाँ बँटी, पूछा यह क्या है?

शैतान बोले—"इसमें हल्दी है। जिन सज्जनो ने हल्दी की कमी को बुरी तरह महसूस किया है वे अब फाँक लें।"

अब गाने की बारी आई। बड्डी को पकड लिया कि गाओ। वह बहाने करने लगा लेकिन कोई न माना और बड्डी को गाना पडा।

बड्डी के बाद शैतान की बारी आई। बोले—"मैं स्वय तो बिल्कुल नही गा सकता। हाँ किसी प्रसिद्ध गायक की नकल उतार सकता हूँ। उदाहरणत अब मैं उस्ताद अब्दुल करीम खाँ की नकल उतारूगा।" कहकर शैतान ने गाना शुरू किया और खूब गाया। किसी को अनुमान तक न था कि शैतान इतना अच्छा गा सकते हैं। खूब प्रशसा हुई। शैतान बोले "सज्जनो ! यह तो नकल थी, मैं स्वय तो बिल्कुल नही गा सकता।"

वे महाशय बोले—"बहुत अच्छा' मालकौस था—तुम्हे कौन-कौन से राग आते हैं ?"

शैतान आदरपूर्वक बोले—"केवल दो राग आते हैं। एक तो वह जो मालकौस है और दूसरा वह जो मालकौस नही है।" उत्सव समाप्त हो रहा था, इसलिए सब अपनी-अपनी चीजे इकट्ठी करने लगे। उन महाशय के हाथ मे टार्च थी और वे कुछ ढूँढ रहे थे। शैतान ने इस बारे मे पूछा। वे बोले "दियासलाई ढूँढ रहा हूँ।"

"क्या आप अपनी टार्च जलाना चाहते हैं ? यह लीजिये।" यह कहकर शैतान ने दियासलाई उनके हाथ मे द दी।

उसके बाद सब खडे हो गये और शैतान ने प्रार्थना की (हमारा हर उत्सव इसी प्रार्थना पर समाप्त होता था)। शैतान सिर झुकाकर बोले—"हे भगवान ! हमे उल्लू की सी बुद्धि प्रदान कर और ऊँट का सा सन्तोष। हमे ऐसी दूरदर्शी आँखे प्रदान कर जिसके लिए ऐनक की आवश्यकता न पडे। हमारे विचारो की गति ऐसी तेज हो कि आँधी को पीछे छोड जाय। हम मे कम से कम दस हार्स पावर की शक्ति हो। हमारी आत्मा और दिल मे टेलीफोन का सिलसिला स्थापित हो जाये और तू स्वय वायरलैस द्वारा हमे सदाचारी बनने के आदेश दे। ओम शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!"

सब ने जोर से कहा—" ओम शान्ति ! शान्ति !! शान्ति !!!" (सिवाय महाशयो के) और उत्सव समाप्त हुआ।

और मैंने शैतान से साफ-साफ कह दिया कि उन महाशय के सामने ऐसी-ऐसी हरकतें करने के बाद उस कुटुम्ब मे सर्वप्रिय तो क्या प्रिय तक नही हो सकते।

शनिवार को टीम का चुनाव होने लगा। रविवार को हमारा वार्षिक और अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिकेट मैच था। इस बार हम बाहर जा रहे थे। रात भर का सफर था। शनिवार की रात को चलकर रविवार की सुबह को वहाँ पहुँचना था। शैतान ने आग्रह किया कि उन्हे जरूर खिलाया जाय। कप्तान हिचकिचाता था क्योकि शैतान खिलाडी कुछ ऐसे वैसे ही थे। उनका अधिक से अधिक स्कोर पाच रन्ज था। उनके प्रिय स्ट्रोक दो थे। ऑफ-बाई और लैग-बाई। अपने जीवन मे उन्होने दो कैच भी किये थे। पहला इस प्रकार कि एक मैच मे शैतान और मै स्लिप मे खडे बाते कर रहे थे। मैंने कोई चुटकला सुनाया जो उनको बहुत पसन्द आया। हँस कर बोले, मिलाओ हाथ। उन्होंने मेरी ओर हाथ बढाया और शप से एक गेंद उनके हाथ मे आ गई। खिलाड़ी आउट हो गया। यह बात और थी कि बहुत ही अच्छा खिलाडी आउट हुआ था और शैतान ने कमाल का कैच किया था। दूसरा यो कि प्रतिद्वन्द्वी खिलाडी ने ज़ोर से हिट लगाई और गेंद पेड मे उलझ गई। शैतान लपक कर पेड पर चढ गये। गेंद उतार लाये और एम्पायर से प्रार्थना की कि गेंद पृथ्वी से ऊँची थी कि कैच कर ली गई। बडा झगडा हुआ। जब नौबत सत्याग्रह तक पहुँची तो सबने मान लिया कि वास्तव मे शैतान ने यह कैच लिया है।

मैंने बहुत कोशिश की कि उन्हे बारहवा ही रख लिया जाय। आखिर शैतान स्कोरर के रूप मे शामिल कर लिये गये। वे अपने इस निरादर पर रुष्ट अवश्य थे।

शाम को हम स्टेशन पर पहुँचे। गाडी रात के बारह बजे आती थी और सुबह सात बजे अपने स्थान पर जा पहुँचती थी। शैतान ने सूचना दी कि एक इन्टर का डब्बा यहा से उसी ट्रेन मे लगाया जाता है। वह डब्बा उस समय स्टेशन के एक अन्धकारमय कोने मे खडा है। बडी सुविधा होगी यदि हम अभी से उस पर अधिकार कर ले और बिस्तर बिछा कर सो जायें। युक्ति अच्छी

थी । हम सब शैतान के साथ हो लिये । कप्तान ने छानबीन की । इधर-उध से सूंघा । जब अच्छी तरह से तसल्ली हो गई तो हमे आज्ञा दे दी । हमने विस्त बिछाये । हल्की-हल्की सर्दी थी । इसलिए दरवाजे और खिड़कियां बंद कर दं और बत्ती बुझाकर लेट गये । शैतान का आग्रह था कि तुरन्त सो जायें । क मैच है, लेकिन नौ-दस बजे किस को नींद आती है । इधर-उधर की बातें हो लगी । आखिर शैतान ने जबर्दस्ती पकड-पकड कर सबको सुला दिया ।

रात को मेरी आँख खुली । बिल्कुल अंधेरा था । इधर-उधर झांका । धी से बोला—"रूफी !"

आवाज आई—"हाँ ।"

"क्या बजा होगा ?"

"मालूम नही—बस तुम अभी सो जाओ ।"

"गाडी किसी स्टेशन पर खडी है शायद ?'

"शायद !" शैतान बोले ।

मैंने बहुत कोशिश की लेकिन नींद न आई । इतने मे दो-तीन लडके उठ खडे हुए और समय पूछने लगे ।

"मै कोई घडी हूँ या चौकीदार ?" शैतान रुष्ट होकर बोले "अगर इसी तरह रात भर जागते रहे तो क्या खाक खेलोगे ?"

"लेकिन दोस्त रूफी ! यह गाड़ी चलती क्यो नही ? देर से खडी है ।"

"किसी बडे स्टेशन पर खडी होगी । या कही क्रास होगा ।" शैतान बोले।

एक साहब ने खिडकी खोलनी चाही । शैतान ने एक डांट बताई—"खबरदार ! जो किसी ने खिडकी खोली । मुझे ठंडी हवा लगते ही झट मे निमोनिया हो जाता है । आखिर तुम लोग सो क्यो नही जाते ?"

सब चुप हो गये । मेरी आँख लग गई । थोडी देर के बाद फिर जाग उठा । डब्बे मे बहस हो रही थी । सब कह रहे थे कि गाडी खडी है लेकिन शैतान विश्वास दिला रहे थे कि चल रही है । उन्हो ने विज्ञान के कुछ नियम बता कर प्रमाणित कर दिया कि जब गाडी तेजी से चल रही हो तो सवारियो को हरकत महसूस नही होती, और यो मालूम होता है जैसे खडी है ।

इतने में एक गाडी तेजी से पास की पटरी पर से गुजर गई। शैतान विजय-पूर्ण स्वर मे बोले—"यह देखा! हमारी गाडी ने एक स्टेशन छोडा है।"

शायद सब सन्तुष्ट हो गये और थोडी देर मे सो गये।

जब मेरी आँख खुली तो मुझे कुकडू-कू सुनाई दी। कुछ मुर्गे बडे जोर से बागें दे रहे थे।

"रूफी!" मैंने धीरे से कहा।

"हिश्त!" शैतान बोले, "सो जाओ।"

"ये मुर्गे कहा बोल रहे है?"

कुछ व्यक्ति उठ खडे हुए। सब यही पूछने लगे कि ये मुर्गे कहा बोल रहे हैं?

शैतान ने झल्लाकर कहा—"यह तुम लोगो को हो क्या गया है? मुझे सोने क्यों नही देते। नरक मे जाये मुर्गे और स्वर्ग को सिधारो तुम सब। इतनी सी बात नही समझ सकते कि साथ के डब्बे मे किसी मुसाफिर के मुर्गे है जो बोल रहे हैं। क्या मुर्गे साथ लेकर सफर करना अपराध है?"

फिर चुप्पी छा गई लेकिन शीघ्र ही एक कोने मे खुसर-पुसर हो गई और एक साहब ने दरवाजा खोल दिया। देखते क्या है कि सुबह का सुहावना समय हैं। पक्षी चहचहा रहे है। पवन मदगति से अठखेलियाँ करती फिर रही है। मुर्गे बागे दे रहे है और डब्बा वही खडा है, जहाँ रात था। एक कुली जा रहा था। उससे स्टेशन का नाम पूछा गया। मालूम हुआ कि हम सचमुच उसी स्टेशन पर है जहाँ से कल रात चले थे।

शाम को चाय पी रहे थे कि बट्ठी आ गया। शैतान बोले "बट्ठी आज क्या पका है?"

बट्ठी ने कुछ खानो के नाम गिनवा दिये। शैतान ने ताजा समाचार पूछा। बट्ठी ने ताजा समाचार सुना दिये। शैतान ने शहर की सर्वोत्तम पिक्चर का नाम पूछा।

बट्ठी बोला—" 'निर्धन प्रेमी' उर्फ 'निर्धन प्रेमिका'।"

"और मै कुछ मोटा तो नही हो गया ?"

"मोटा ? मोटे क्या, तुम तो वाकायदा दुबले भी नही हो ।" वड्डी वोला।

वड्डी को अपना घर याद आ रहा था। वह अपने घर की बातें करने लगा। वहाँ के सुन्दर दृश्य, सुहावनी ऋतु, सगे सम्बन्धी

शैतान वोले—"तुम अपने घर के सम्बन्ध मे कुछ इस प्रकार से बातचीत करते हो कि कभी-कभी तो मुझे भी तुम्हारा घर याद आने लगता है।"

हम ताश खेलने लगे। शैतान के कहने पर तय हुआ कि आज शर्त लगेगी।

"कल मैंने एक अत्यन्त मनोरम सपना देखा," मैंने कहा "अत्यन्त मनोरम। वस सुनने से सम्बन्ध रखता है, आहा, हा !"

लेकिन शैतान चुप थे।

"सुनाऊँ ?" मैंने पूछा।

"विल्कुल नही !" शैतान वोले।

"ऐसा सपना है कि "

"विल्कुल नही ! हरगिज़ नही।" शैतान ने कहा।

"वड़े स्वार्थी हो रूफी ! वडा अफसोस है, तुमने हमारे सपने का अपमान कर दिया।"

"भई इस समय किसी प्रकार का सपना सुनने को जी नही चाहता। आज मै कुछ उदास-सा हूँ।"

मालूम हुआ कि शैतान ने आज शैतान की प्रेमिका को देखा था। वे उन के घर गये थे।

"आखिर हुआ क्या ?" वड्डी ने पूछा।

"यह पूछो कि क्या नही हुआ ? आज मैंने ऐसा दृश्य देखा कि भगवान की सौगंध आत्म-हत्या करने को जी चाहता था, लेकिन तुम लोगो के कारण जीवित रहना पडा। आज मैंने देखा कि एक रुपये-पैसे वाले महाशय उस लडकी को देखने आये थे। पहले तो उन दोनो का परिचय कराया गया। फिर लडकी की वाकायदा नुमाइश शुरू हुई। चाय पर वुलाई गई। उसके काढने-बुनने के नमूने दिखाये गये और अन्त मे लडकी ने गाना गाया "

"कौनसा राग था ?" मैंने बडी उत्सुकता से पूछा।

"मालकौस नही था। लेकिन उस सारी नुमाइश मे मुझे उसका गाना बहुत बुरा लगा। अब मैं उस लडकी से बहुत निराश हूँ। मकसूद घोडा सच कहता था कि वह इतनी सुन्दर भी नही है। उससे तो वह सफेद दुपट्टे वाली ही अच्छी थी। अब मुझे प्रेम से घृणा और घृणा से प्रेम होता जा रहा है।"

"सच ?" हम दोनो ने पूछा।

"बिल्कुल।"

"तुम्हारा प्रेम भी तो तुरप चाल की तरह है," बड्डी बोला, "एकदम शुरू हो जाता है और बिल्कुल जरा-सी देर रहता है।"

"और रग बदलता रहता है" मैंने गिरह लगाई।

'तुरप चाल" शैतान ने पत्ता पटखा।

मै और बड्डी एक दूसरे का मुंह देखने लगे।

"पत्ते डालते जाओ" शैतान बोले "इस वक्त पाँच बजे है। बड्डी! मुझे मालूम है कि सडक पर एक बडी सुन्दर गाय जा रही है। और यह भी मालूम है कि सोफे के पीछे कोई नही है। यह तुम बदरग क्यो डाल रहे हो—कह जो दिया तुरप चाल !"

इब्राहीम जलीस



मै एक बिल्कुल सामान्य व्यक्ति की तरह १२ अगस्त १९२४ की शाम को अनिच्छित रूप से इस ससार मे आया। पिता रियासत हैदराबाद के एक बडे सरकारी अफसर थे। इस लिए दस भाई होने पर भी अपना विद्यार्थी-जीवन बड़े ठाठ से व्यतीत किया। प्राइमरी से बी० ए० तक कही फेल नही हुआ। १९४२ मे अलीगढ विश्वविद्यालय से बी० ए० किया और उसी साल ३० अगस्त को गुलबर्गा के एक लखपति व्यापारी की बेटी से मेरी शादी हो गई। उससे मेरे सात बच्चे है। जिनमे से आख़री दो जुडवाँ है और अभी तक उनकी राष्ट्रीयता निश्चित नही की जा सकी क्योकि वे कराची और हैदराबाद दक्खिन के बीच मे Air India के एक जहाज मे उत्पन्न हुए थे।

शिक्षा-काल नें जैसा शहजादो का सा जीवन गुजारा था क्रियात्मक जीवन मे प्रवेश करने के बाद उससे सर्वथा विपरीत जीवन से परिचय हुआ। अब आर्थिक रूप से जीवन अत्यन्त कष्टप्रद है। एक बार गवालमंडी, चौक लाहौर मे फुट-पाथ पर बैठे दो आने के कबाब और दो आने की एक रोटी से दो वक्त का फाका ख़त्म करते हुए आँसू भी निकल आये थे।

राजनैतिक मामले मे एक बार जेल गया था। और एक बार चीन। जेल-यात्रा और चीन-यात्रा मेरे जीवन के बडे महत्त्वपूर्ण अनुभव हैं। एक से क़ैद और दूसरे से आज़ादी के वास्तविक अर्थों को समझने मे बडी सहायता मिली है।

लगभग पन्द्रह पुस्तको का लेखक हूँ। पहले साहित्य-कला की सेवा के उद्दे
से लिखता था। अब पेट के लिए लिखता हूँ।

जीवन मे बहुत से काम किये लेकिन टिक कर एक भी न कर सका
आजकल एक फिल्म कम्पनी से सम्बन्धित हूँ। फिल्मी कहानीकार भी हूँ औ
फिल्मी ऐक्टर भी। अर्थात् जिस तरह बिगडा शायर मरसिया-गो बन जाता
उसी प्रकार बिगड़ा कहानीकार ऐक्टर बन जाता है।

मेरा पता यह है : हैदराबाद कॉलोनी, कराची।

'व्यंग' तलवार की धार पर चलने से कम आपत्तिजनक और कम तपस्या
पूर्ण काम नहीं। कदाचित यही कारण है कि संसार के साहित्य-भंडार मे अच्छ
व्यंग बहुत कम मात्रा मे मिलता है। आधुनिक उर्दू साहित्य मे 'पितरस
रशीद अहमद सद्दीकी, और कन्हैयालाल कपूर के बाद जिन लेखकों ने गभीरत
पूर्वक इस कला की ओर ध्यान दिया हे उनमे इब्राहीम जलीस का नाम विशे
रूप से उल्लेखनीय है।

इब्राहीम जलीस की अधिकतर कहानियाँ, कहानियाँ कम और 'स्केच
अधिक हैं। वह चरित्र-चित्रण पर अधिक ध्यान नहीं देता और कभी-कभी त
उसकी रचना चुटकलेबाजी तक सीमित होकर रह जाती है (शायद बेतहाश
लिखने के कारण); लेकिन इन त्रुटियों के होते हुए भी उसकी हर रचना
हम प्रभावित होते हैं और उसकी कुछ रचनायें तो आधुनिक उर्दू साहित्य
अपना एक स्थायी स्थान रखती हैं। वह उपमाओ तथा संकेतों की अपेक्षा हर बा
बड़ी स्पष्टता से कहने का आदी है और चूंकि अपने अग्रगण्य व्यंग लेखकों
अपेक्षा उसके राजनैतिक बोध मे अधिक निखार और प्रौढता है अत. वह संसा
की प्रत्येक वस्तु और समाज की समस्त मान्यताओं पर अपने व्यंग के तीर सी
करने की बजाय केवल उन नासूरो पर नश्तर लगाता है, जिनके कारण मान
समाज मे गन्दगी और मानव विकास मे बाधा उत्पन्न होती है।

उर्दू के व्यंग-साहित्य को इब्राहीम जलीस से बड़ी आशायें हैं।

इब्राहीम जलीस

जानवर

"कल आधी रात को मौलवी फतह अली गोल बाग मे एक औरत के साथ पकडे गये।"

हर कोई यही कह रहा था और पूछ रहा था कि क्या यह सच है ? मुझे कुछ मालूम नही था, मैं एक तरह से सच और झूठ के बीच खडा था। कभी खयाल आता, इतने लोग झूठ नही बोल सकते। कभी सोचता, आदमी भीतर कुछ और होता है और ऊपर कुछ और। जो आदमी गिलाफ के भीतर होता है, वह प्राय उस आदमी से भिन्न होता है जो हमारी नजरो के सामने होता है। अब यह मौलवी फतह अली—जिन के माथे पर सिजदे कर-कर के दाग पड गया है, ये हाथ भर लम्बी गगा-जमुनी दाढी है और मोहल्ला पुरानी अनारकली के ऐसे आदरणीय और सर्वप्रिय निवासी हैं कि लोग-बाग अपने झगडे-टटे पुलिस थाने मे चुकाने की बजाय इन्ही के पास चुकाते थे। बडे इमाम की अनुपस्थिति मे उन के पीछे नमाज़ अदा करते थे—और तो और घर मे एक सदाचारी पत्नी, दो जवान लडके और तीन व्याहने योग्य लडकियाँ भी मौजूद थी। इस पर मौलवी फतह अली की यह अश्लील हरकत ! फिर यह कि क्या उनकी आयु ऐसे कुकर्मो की आज्ञा देती थी ? पैंतालीस-पचास के लगभग हो रहे थे। कब्र मे पाँव लटकाये बैठे थे और कब्र के किनारे भी औरत—इलाही तौबा !

बात सारे मोहल्ले मे फैल गई थी। बात—बातें बन गई थी। लोग हँस रहे थे, हैरान हो रहे थे, लेकिन मुझे विश्वास न होता था। लेकिन आज जब मौलवी फतह अली दिन भर दफ्तर न आये तो मुझ मे और मेरे विश्वास में बहुत थोडा सा फासला रह गया था। दफ्तर के दूसरे क्लर्क-साथी कह रहे थे—"अगर यह बात झूठ हे तो वह यो मुँह छुपाये क्यो घर बैठ रहे ?—जरूर कोई बात हे।" एक क्लर्क ने तो चुपके से सुपरिन्टेंडैंट को उनके स्थान पर अपनी बढती के लिए आवेदन-पत्र भी दे दिया था। उसका ख्याल था कि अब वे कभी दफ्तर न आयेगे। ऐसी अश्लील घटना के बाद उनके पास दफ्तर आने का कौनसा मुँह रह गया था ?

दफ्तर मे मौलवी फतह अली का बडा आदर होता था। वे हम सब से सीनियर क्लर्क थे। मेहनती इतने कि सुबह सात बजे दफ्तर आते तो शाम के आठ बजे निकलते। ड्राफ्ट तो इतने अच्छे लिखते थे कि अग्रेज अफसर तक उन मे से कोई शब्द न काटता, बस चुप-चाप हस्ताक्षर कर देता था। वेतन न अधिक था न कम। लेकिन महगाई के इस युग मे जब कि हर क्लर्क के सपनों में रिश्वत के रुपयो के चमकीले ढेर लगे होते थे, मौलवी फतह अली ने कभी एक पैसे की रिश्वत न ली थी। लोग उनकी हथेली चमकाना चाहते तो वे मुस्करा कर उन्हे अपनी हथेली की रेखाये दिखा देते—हाथ मे कैंची है, रुपया तो मेरे हाथ में है ही नही। आपका काम तो अल्लाह पूरा कर देगा।"

उसके बाद वे स्वय ही उसका काम कर देते थे।

इस प्रकार उनकी चर्चा पुरानी अनारकली के अतिरिक्त उस लाहौर में भी होने लगी थी जो डिप्टी कमिश्नर के कार्यालय के आस-पास फैला हुआ था।

लेकिन यही मौलवी फतह अली कल आधी रात को गोल बाग में एक औरत के साथ····

दफ्तर से घर जाते हुए रास्ते मे 'पाकिस्तान टी स्टाल' के पास मुझे गुलाम मोहम्मद मिला जिसने अपनी बडी-चढी भयानक मूछो मे बल देते हुए पूरे गुंडेपन के साथ एक आँख मारकर मुझ से पूछा "सुनाओ जी, बाबूजी—आपके दोस्त मौलवी फतह अली कहाँ है ?"

इससे पहले कि मैं उनसे कुछ पूछू या कोई उत्तर दू उसने एक जोरदार कहकहा लगाया, जैसे उसके प्रश्न का उत्तर एक ऐसा ही भरपूर कहकहा हो सकता है।

मैंने उसे रोककर कुछ वाते करनी चाही लेकिन उसके साथ कोई आवारा औरत थी जिसे वह साइकल पर सामने 'के डडे पर बिठाकर सवार हो गया और दौड गया।

गुलाम मोहम्मद की इस हरकत के बाद मुझे ऐसा लगा कि मौलवी फतहअली की उस अश्लील हरकत का गुलाम मोहम्मद से भी कोई गहरा सम्वध है क्योकि गुलाम मोहम्मद, मौलवी का पडौसी था और यह पडौस बहुत पुराना था। पाकिस्तान बनने या लाहौर आने से पहले जब मौलवी फतहअली देहली मे फाटक हवशखा मे रहते थे, तब भी गुलाम मोहम्मद उनका पडौसी था। फिसादो के जमाने मे जब देहली लुटने लगी, जलने लगी, मरने लगी, उस समय किसी ने यह खबर फैला दी थी कि वह सब्जी मडी के बलवे मे मारा गया। मौलवी फतहअली उसकी बीवी और बच्चो को हुमायूं के मकबरे वाले शरणार्थी कैम्प मे ले आये, उन्हे बडी ढारस दी, और आयु भर खर्च देने का जिम्मा लिया, लेकिन हुमायूं के मकबरे पहुँचकर उन्होने बडे आश्चर्य से देखा कि गुलाम मोहम्मद जीवित है और मकबरे की सीढियो पर बैठा अपने बीवी-बच्चो के लिए दहाडे मार-मारकर रो रहा है। जब उसने मौलवी फतहअली और अपनी बीवी और बच्चो को देखा तो उनके पैरो पर गिर पडा। वह गुडा जो फाटक हवशखां के अतिरिक्त दिल्ली के दूसरे मोहल्लो मे भी बदमाशी और गुडागर्दी मे हीरो माना जाता था, जिसने पुलिस के आगे कभी सिर न झुकाया था, सदा-सदा के लिए मौलवी का बेदाम गुलाम हो गया। फिर दोनो एक साथ शरणार्थियो के आखरी काफले के साथ लाहौर पहुँचे और यहाँ आकर गुलाम मोहम्मद ने एक के बजाय दो मकानो पर अधिकार जमा लिया। बडा मकान स्वय ले लिया और छोटा मौलवी फतहअली को दे दिया।

लेकिन लाहौर आकर दोनो के सम्वध धीरे-धीरे बिगडते गये। एक कारण तो यह था कि दोनो पडौसी थे, तो फिर झगडा क्यो न हो ? दूसरा कारण

यह था कि मौलवी फतहअली यदि मसजिदे थे तो गुलाम मोहम्मद मधुशाला- गुलाम मोहम्मद ने यहाँ आकर भी वही गुडागर्दी शुरू कर दी जिसके कारण वह देहली मे एक बार जेल भी जा चुका था। मौलवी फतहअली उसे हमेशा समझाते, मनाते, उपदेश देते, डाटते, प्यार करते—गुलाम मोहम्मद उनका थोडा-बहुत सम्मान तो करता था लेकिन एक बार तो उसने उनके उपकारो का खूब बदला चुकाया।

एक बार रमज़ान शरीफ की रात थी। मौलवी फतहअली तसवीह पढ़कर आधी रात को घर लौट रहे थे कि गोलबाग के पास एक औरत के चीखने चिल्लाने की आवाजे आई। मौलवी फतहअली दौडे-दौडे उस तरफ गये तो देखा कि गुलाम मोहम्मद और उसके तीन-चार साथी एक चौदह-पन्द्रह वर्ष की लडकी को घेरे खडे हैं। लडकी ने ज्योही मौलवी को देखा, लपककर उनसे लिपट गई और चीखने लगी—"मुझे बचाओ—खुदा के लिए इन गुंडो से बचाओ—खुदा के लिए ..."

गुलाम मोहम्मद मौलवी का सारा आदर-सम्मान दिल से निकाल कर गुर्राया—

"मौलवी जी ! इधर क्या नमाज़ पढने आये हो ? यह बाग है, मसजिद नही है। छोड दो इस लडकी को, यह हमारी है।"

मौलवी फतहअली ने गुलाम मोहम्मद को खूब डाँटा-फटकारा लेकिन उस पर कोई असर न हुआ। उसने जेब से एक चाकू निकाला लेकिन उसी समय टाउन हाल की ओर से आती हुई एक कार की रोशनी अँधेरे मे फैल गई। गुलाम मोहम्मद और दूसरे गुंडे भाग खडे हुए। कार जैसे ही निकट आई मौलवी ने आवाज देकर रोक ली। कार मे कोई नौजवान जोडा था। मौलवी ने सारी बात उन्हे सुनाई और लडकी को उसी कार मे बिठाकर उसके घर छोड आये।

दूसरे दिन सुबह इसी बात पर मौलवी फतहअली से गुलाम मोहम्मद झगड पडा कि उन्होंने शेर के सामने से मांस हटा लिया था। लेकिन मौलवी फतह अली कहते थे कि उन्होंने उस लडकी को नहीं बचाया है बल्कि गुलाम मोहम्मद की बीवी और बच्चो को दूसरी बार बचाया है।

इस घटना के बाद से मौलवी फतहग्रली और गुलाम मोहम्मद मे बडे जोरो की ठन गई और वह मौलवी से वदला लेने के लिए उनके विरुद्ध वडी वे-सिर-पैर की और गन्दी वाते उडाने लगा। मैने समझा कि कल रात मौलवी साहव का किसी औरत के साथ पकडा जाना भी एक ऐसी ही घटना है जो कम्पनी वाग मे घटने की वजाय गुलाम मोहम्मद के गदे मस्तिष्क मे घटी है। मै गुलाम मोहम्मद की उस गोल वाग वाली घटना को अच्छी तरह जानता था इसीलिए मुझे विश्वास हो गया कि गुलाम मोहम्मद ने मौलवी फतहग्रली को अपमानित करने के लिए ही यह ओछा हथियार प्रयुक्त किया है और अपने जीवन की उस अँधेरी और वलात्कार की रात को जवर्दस्ती मौलवी फतहग्रली के जीवन मे दाखिल कर दिया है, और उस रात के दृश्य मे अपने स्थान पर मौलवी फतहग्रली को खडा किया है।

अव मुझे कुछ सन्तोष-सा प्राप्त हुआ। मैंने अपने घर जाने की वजाय पहले मौलवी फतहग्रली के घर जाना उचित समझा क्योकि मेरे मन से वह मिथ्या-विचार वहुत हद तक दूर हो गया था, और अव उनसे मिलने मे न मुझे कोई झिझक थी और न ही उनके लज्जित होने की कोई सम्भावना।

रास्ते मे 'औरगजेव होटल' के पास मुझे अव्दुलरशीद मिला जो मेरा और फतहग्रली दोनो का गहरा मित्र था। हम तीनो हर शाम 'औरगजेव होटल' मे वैठते, रेडियो पर रात की खवरे सुनते, समाचार-पत्र पढते, चाय पीते और गप्पे हाँकते थे। अव्दुलरशीद आज नियम-विरुद्ध शाम से पहले ही होटल मे प्रवेश कर रहा था। मुझे देखकर उसने आवाज दी।

"ओह आओ-आओ—तुम्हे एक वडी अजीव खवर सुनाऊँ।"

भीतर पहुँचकर उसने चाय का आडर दिया और इधर-उधर देखकर वडे ऊँचे स्वर मे वोला·

"क्या वताऊँ दोस्त! अपने मौलवी ने तो रात लुटिया ही डुबो दी। तुमने सुना रात मौलवी⋯ ⋯"

मैंने कहा, "हाँ मैंने सुना है लेकिन मेरा खयाल है कि यह झूठ है। इसमे

मुझे गुलाम मोहम्मद का कोई षड्यन्त्र दिखाई देता है।"

अब्दुलरशीद ने कहा, "नही यार किसी का षड्यन्त्र नही। मुझे अभी इ मिला था जो यहाँ के थाने का सिपाही है। उसने मुझे बताया कि उसी ने क रात मौलवी को एक औरत के साथ पकडा है। मौलवी और वह औरत रा भर हवालात मे रहे।"

मैंने पूछा, "वह औरत कौन थी ?"

रशीद ने उत्तर दिया "न जाने कौन थी ? किन्तु जो भी थी बडी आवार मालूम होती थी जो एक पैतालीस-पचास के बूढे के साथ चली गई।"

मैंने फिर पूछा, "क्या तुम आज मौलवी से मिले थे ?"

उसने उत्तर दिया, "अब उससे क्या मिलना है और वह क्या हमसे मि सकता है ?"

मैंने कहा, "आओ, चलो, उससे मिलें। कम से कम हमें तो उससे मिलन ही चाहिए। सच पूछो तो, जाने क्या बात है, मुझे विश्वास ही नही आता मुझे विश्वास कर लेना चाहिए, सब यही कह रहे हैं, और तुम भी यही क रहे हो। इसके बाद संशय की कोई बात नही रह जाती, लेकिन···लेकिन फ भी मेरे दिल मे संशय और विश्वास मे एक विलक्षण संघर्ष हो रहा है।"

अब्दुलरशीद ने कहा "मैं तो अब उससे मिलना व्यर्थ समझता हूँ, वह नहीं मिलेगा।"

मैंने उसे विवश किया, "तुम चलो तो सही—यह समझकर मिलेंगे अं अन्तिम बार मिल रहे है।"

हम दोनो औरंगजेब होटल से बाहर निकले। अमृतसरी भाइयों की तम्बाकू शाप तक ही पहुँचे थे कि मौलवी फतहअली का बडा लडका रफी मिला जो दवाइयों का बक्स उठाये जा रहा था, और जिसके पीछे डाक्टर मन्सूरअली एम० बी० बी० एस० चल रहा था। मैंने रफी से पूछा

"क्यो रफी, क्या बात है कुशल ?"

रफी बडा परेशान, घबराया हुआ सा नज़र आ रहा था। उसने केवल इतना कहा "अम्मी ' अम्मी जी ।"

और यह कहकर वह चुप हो गया और तेज-तेज चलने लगा। अब्दुल-रशीद ने यह सुनकर मुझ से कहा, "मालूम होता है बेचारी भली महिला मौलवी की इस लज्जाजनक करतूत का सदमा नही सह सकी।"

रफी चुपचाप चलता रहा। हम दोनो मौलवी के घर पहुँचे। दरवाज़ा खटखटाया। डाक्टर भीतर था। रफी बाहर निकला और बोला—"ठहरिये अभी अब्बा जी को बुलाता हूँ।"

हम दोनो को बाहर सडक पर ही ठहरना पडा क्योकि मौलवी के घर मे कोई बैठक नही थी। केवल दो कमरो का घर था। इसीलिए मौलवी ने औरगजेब होटल को अपना ड्राइगरूम, दीवानखाना, बैठक, सभी कुछ बना रखा था।

बडी देर तक मौलवी बाहर न आया। जब डाक्टर बाहर निकला तो हमने डाक्टर से बात मालूम करनी चाही। मालूम हुआ कि मौलवी की बीवी ने आत्महत्या करने के लिए डेढ तोला अफीम खा ली थी।

रफी फिर डाक्टर के साथ शायद दवा लेने चला गया।

हमे विश्वास हो गया कि मौलवी ने सचमुच मौलवियो की प्राचीन परम्पराओ का पालन किया हे। वह अब हमसे मिलना नही चाहता। हम वापस जाने को ही थे कि अचानक मेरी नजर दरवाजे पर पडी जो जरा सा खुला हुआ था और जिसमे से मौलवी चोर की तरह झाँक रहा था। मैंने उसे पहचान लिया और पास जाकर कहा —

"मौलवी ! दरवाजा खोलो। छुपने से क्या फायदा। हम तुम्हारे बेतकल्लुफ और शुभचिन्तक मित्र है। यदि तुम्हे अब भी हमारी सहायता की आवश्यकता है तो हम तैयार है। हम इसीलिए तुम्हारे पास आए है।"

मौलवी ने दरवाजा खोल दिया। हम भीतर दाखिल हुए। वह कमरा नही था बल्कि किचन, स्नान-घर, कबाडखाना सभी कुछ था, जिसमे एक ओर चूल्हा था, दूसरी ओर नल था। एक ओर ट्रक रखे थे और एक कोने मे

वरतन पानी की वाल्टी के पास पडे थे। मौलवी ने हमे ट्रको पर बैठने के लिए कहा और स्वय मैले कपडो की वडी-सी गठरी पर बैठ गया। उसका सिर झुका हुआ था, चेहरा मुरझाया हुआ था। थोडी देर तक हम तीनो चुप रहे। फिर मैंने पूछा, "क्यो भई, भाभी अब खतरे से वाहर है ना ?"

मौलवी ने बुझे हुए स्वर मे उत्तर दिया, "हाँ, वच गई।"

रशीद ने पूछा, "क्यो भई, यह वात क्या हुई थी ?"

मैंने क्रोध भरी नजरो से रशीद की ओर देखा। मैं नही चाहता था कि उस समय रशीद कोई ऐसी वात पूछे जिसका सम्वध कल वाली घटना से हो।

मौलवी ने रशीद की ओर देखा और फिर मेरी ओर और एकदम तेज तीखे स्वर मे वोला "तुम मेरा घर देख रहे हो ? एक वड़े मकान के लिए कोई पन्द्रह-वीस दर्ख्वास्ते दे चुका हूँ, कुछ नही होता। यह—यही दो कमरे—वल्कि एक ही—यह—यह कमरा है ? इसे कमरा कहा जा सकता है ?"

वह हम दोनो की ओर देखकर घूरने लगा, जैसे उत्तर चाहता हो। जैसे उसे मालूम हो कि हम कोई उत्तर नही दे सकते। जैसे हम उसके प्रतिदिन मिलने वाले मित्र नही वल्कि 'पुनर्वास विभाग' के अफसर हो।

उसने पुन कहना शुरू किया, "मुझे पाकिस्तान आये दो वरस हो गये हैं। दो वरस से मैं अपनी वीवी, दो जवान लडको और तीन जवान लडकियो के साथ इसी कमरे मे कैद हूँ—वताओ मैं कव तक कैद रहूँ ? मैं भी इन्सान हूँ, मैं पागल हो जाऊंगा—जाओ मुझे इसी कैद मे घुटकर मर जाने दो, यहा से चले जाओ—जाओ।"

और वह स्वय ही उठकर भीतर चला गया। भीतर से उसकी पत्नी के कराहने की आवाज़ आ रही थी। हम दो-तीन क्षण वही बैठे रहे फिर उठकर वाहर चले आये।

रास्ते भर रशीद विल्कुल मौन रहा। मेरी समझ मे कुछ नही आता था कि क्या वात की जाय। हम फिर औरगजेव होटल मे आ बैठे। वहा मोहल्ले का थानेदार खान रयाज मोहम्मद भी बैठा चाय पी रहा था। उसने हमे देखकर चाय पीने का निमन्त्रण दिया। हम उसकी मेज पर जा बैठे तो उस

प्याली से चाय प्लेट मे उँडेली। दो घूंट पिये और चाय मे भीगी हुई अपनी वडी-बडी मूंछो को रूमाल से पोछते हुए वोला .

"यार रशीद ! वह तुम्हारा दोस्त मौलवी फतहअली भी अजीब आदमी निकला—अपनी वीवी को सैर कराने आधी रात को गोल वाग चला आया—लाहौल-वला-कुव्वत ! ऐसे कामो के लिए घर मे कोई जगह नही थी ··· ?"

रशीद और मैने एकदम तडपकर आश्चर्य से पूछा :

"क्या ? क्या वह उसकी वीवी थी ?"

थानेदार अपनी रौ मे वोले चला जा रहा था—"तौवा, तौबा ! इन्सान जानवर से भी वदतर हो गया है। इतनी लम्बी-लम्बी दाढियो वालो को भी पाकिस्तान की इज्ज़त का कोई खयाल नही, तो फिर पाकिस्तान का क्या होगा ? क्यो जी ??"

लेकिन हम पुनर्वास विभाग के अफसरो की तरह चुपचाप वुत वने वैठे थे।

कन्हैयालाल कपूर



नाम कन्हैयालाल कपूर। शरीर बहुत दुर्बल। कद छः फुट के लगभग। अपने शरीर के अतिरिक्त सब से अधिक अपने नाम से चिढ़ है, क्योंकि यह पन्द्रहवीं शताब्दि का प्रतीत होता है।

जन्म २७ जून सन् १९१० को हुआ। शिक्षा एम० ए० (अंग्रेजी)। १९३४ से १९४७ तक डी० ए० वी० कालेज लाहौर मे अंग्रेजी पढ़ाता रहा। इसके पश्चात् डी० एम० कालेज मोगा मे नौकरी कर ली। अभी तक यही हूँ और उस समय तक रहूँगा जब तक कोई मुझे उठाकर किसी अच्छे शहर मे नहीं ले जाता।

पाँच पुस्तकों का लेखक हूँ जिनके नाम है 'सग-ओ-खिश्त', 'शीशा-ओ-तेशा', 'चग-ओ-रबाब', 'नोके-नश्तर', 'बाल-ओ-पर'। साराश यह कि पजाबी बोलता हूँ, उर्दू लिखता हूँ और अंग्रेजी पढाता हूँ। पत्नी केवल एक, लेकिन बच्चे छः हैं। युवा तो युवावस्था मे भी न था, अब क्या हूँगा ?

उर्दू साहित्य मे जब एक नया नाम और उसके साथ एक विचित्र-सी रचना नज़र आई तो लोग एकदम चौंक उठे। कुछेक ने फब्तियाँ कसीं, कुछेक ने कीचड़ उछाला और कुछेक भीतर ही भीतर कुढ़े लेकिन कन्हैयालाल कपूर अपनी जगह से टस से मस न हुआ और बराबर समाज और समाज के विभिन्न पात्रो के खोखलेपन का भंडाफोड करता रहा। अपनी शैली के विशेष चटखारे द्वारा वह लोगो के होंटो पर मुस्कराहट की रेखायें और हँसी और अट्टहास उत्पन्न करता है, लेकिन हँसी-हँसी मे ऐसा कुठाराघात भी करता है कि हँसते और कहकहे लगा चुकने के बाद हमे अनुभव होने लगता है कि हम किसी अन्य पर नही स्वयं अपने आप पर हँसते रहे है; स्वयं ही अपना मजाक उडाते रहे है।

कपूर की दृष्टि बडी दूरगामी है। बड़े से बडे विषय को निभाने के साथ साथ प्राय. वह ऐसी बातें भी हमारे सम्मुख रखता है जिन्हें साधारण जीवन मे हम कोई विशेष महत्व नही देते, लेकिन कपूर का हाथ लगते ही जब उन पर से प्याज के छिलकों की तरह तहे उतरने लगती हैं और हर तह अपने भीतर एक पूरा इतिहास, मनोविज्ञान का एक पूरा ग्रन्थ लिए हुए हमारे सामने आती है, तो हम एकदम सोचने और गम्भीर हो जाने पर विवश हो जाते हैं। और मै समझता हूँ उसका यही कमाल उसे अन्य व्यंग-लेखको से अलग और उच्च करता है और इसी विशेषता के कारण वह आधुनिक उर्दू साहित्य का सबसे बड़ा व्यंग-लेखक है।

कन्हैयालाल कपूर

वाक़फ़ियत

कुछ दिन हुए एक वुजुर्ग गाव से पधारे। कहने लगे, "खान अकड वाज खाँ सब-इन्स्पैक्टर फला पुलिस-स्टेशन को जानते हो ?" मैने कहा "नही।" "हवलदार तलवारसिंह से परिचय है ?" "नही।" "गाम लाल सिपाही को पहचानते हो ?" "नही।" मेरे उत्तर सुनकर वे झल्लाकर वोले "वेडा गर्क।" मैने पूछा, "किसका ?" फर्माया, "मेरा, तुम्हारा और अख्तर का।" मैने घवराकर पूछा, "वात क्या है ?" उन्होंने माथे से पसीना पोछते हुए उत्तर दिया "अख्तर का स्वभाव तुम खूव जानते हो। आये-दिन झगडा मोल लिए विना उसे चैन नही पडता। परसो अपने सुपरिन्टैन्डैन्ट पर चाकू से हमला कर दिया। पुलिस छान-वीन कर रही है। मैने सोचा तुम्हारी पुलिस वालो से दोस्ती होगी और मिल-मिलाकर मामला ठडा हो जायेगा। लेकिन तुमने तो लुटिया ही डुवो दी।" मैने गभीरता-पूर्वक कहा "लाहौर मे केवल दो आदमियो को जानता हूँ— एक है मातादीन पनवाडी और दूसरा चिरजीलाल धोवी।" उन्होने एक वार फिर जोर से कहा "वेडा गर्क" और तशरीफ ले गये। तीन सप्ताह के वाद फिर मेरे पास आये और पूछने लगे "हीरालाल सव-जज को जानते हो ?" "नही।" "मोतीलाल रीडर से जान-पहचान है ?" "नही।" "चान्दी लाल चपडासी से सिफारिश कर सकते हो ?" "नही!"

क्रोध मे आकर उन्होने अपना तकिया कलाम दोहराया और चले गये।

उनके चले जाने के बाद मुझे अपनी सीमित जान-पहचान पर सच-मुच आश्चर्य हुआ। मैने सोचा—'आज तो अख्तर का मामला है, कल यदि स्वय मुझ पर कोई आपत्ति आ जाये तो ?' बहुत कुछ सोचने के बाद इस परिणाम पर पहुँचा कि वाकफियत का दायरा विस्तृत किया जाये। मेरे मोहल्ले मे एक सब-जज रहते है। मैने कहा, चलो वाकफियत का श्रीगणेश उनसे ही किया जाये। एक इतवार की सुबह को उनकी कोठी पर उपस्थित हुआ। कार्ड भेजा। वेटिंगरूम मे, जहा बहुत से 'मुलाकाती' विराजमान थे, मुझे भी बिठा दिया गया। समाचार-पत्रो के पन्ने उलटे, जभाइया ली। एक पैकेट सिग्रेटो का समाप्त किया। दरबान की मिन्नते कीं। आखिर जब सब मुलाकाती एक-एक करके विदा हो गये तो मेरी बारी आई। कमरे मे प्रवेश करते ही झुककर सलाम किया। सब-जज साहब ने चश्मा उतारा। एक सैकिड के लिए मेरी ओर देखा। चश्मा लगा लिया। कुर्सी पर बैठने का सकेत किया। फिर चश्मा उतारा और फर्माया "कहिये ?"

मैंने मुस्कराकर कहा "फर्माइये ?"

"कैसे आना हुआ ?"

"योही"

कुछ क्षणो तक हम दोनो चुपचाप बैठे रहे। सहसा मुझे खयाल आया कि अब विषय बदलना चाहिये। मैंने कहा .

"बहुत गर्मी पड रही है।"

"हूँ।"

"लाहौर की गर्मी मे भगवान बचाये।"

"हूँ।"

"लेकिन जनाब लाहौर की सर्दी तो गर्मी से भी अधिक कष्टदायक होती है।"

"हूँ।"

उन्होने माथे पर त्योरी डालकर कहा, 'अब केवल पतझड की बात रह

गई हे उसके बारे मे भी कुछ कह डालिये।"

मैंने सादर निवेदन किया, "हजूर! वसन्त ऋतु को तो आप भूल ही गये।"

कुछ क्षणो तक फिर चुप्पी रही। मैंने सोचा, अब फिर विषय बदलना चाहिये।

"आखिर जग खत्म हो ही गई।"

"जी हाँ!"

"आखिर हिटलर मर ही गया।"

"जी हाँ!"

आखिर आस्ट्रेलियन टीम जीत ही गई।"

उन्होने तुनक कर कहा, "काम की बात कीजिये।"

मैंने निवेदन किया, "अगर मेरी बाते पसन्द नही तो आप ही कोई बात सुनाइये।"

"मैं आपकी तरह बेकार नही हूँ।"

मैंने बेतकल्लुफी का वातावरण उत्पन्न करने की कोशिश करते हुए कहा, "यो कहिये आपको बाते बनाना नही आती।"

उन्होने झुँझला कर फर्माया "आपका मतलब ?"

"कुछ नही" मैंने बात टालते हुए उत्तर दिया, "सुनिये, मैं आपको एक बहुत दिलचस्प बात सुनाता हूँ। हमारे मोहल्ले मे, मेरा मतलब है, जिस मोहल्ले मे आप भी रहते है, मातादीन पनवाडी की दुकान हे। उसके पास एक बकरी हे जिसकी पाच टाँगें है। आपने शायद वह बकरी नही देखी। सुना है यह बकरी तीन सेर दूध..."

"क्षमा कीजिये। मेरे पास व्यर्थ की बातो के लिए समय नही है। आप तशरीफ ले जाइये।"

"जरूर-जरूर, लेकिन कभी-कभी मिला कीजिये। मेरा मकान करीब ही है। मातादीन पनवाडी से पूछ लीजियेगा।"

वे कुछ बुडबुडाये। मै लज्जित-सा होकर कमरे मे बाहर चला आया।

सब-जज साहब के यहा दाल गलती न देखकर मैंने पुलिस-स्टेशन की ओर

रुख किया। सोचा, पुलिस वाले वडे काम के लोग होते है, उनसे ही दोस्त गाठी जाये। पुलिस-स्टेशन के निकट पहुँचा। देखा कि एक सिपाही बन्दूक उठा पहरा दे रहा है, दो सिपाही एक मुलजिम की मरम्मत कर रहे हैं और एक हवलदार एक वहिशती को गालियाँ दे रहा है। दफ्तर मे प्रवेश किया। मुहर्रि को सलाम किया। उन्होने पत्थर खैंच मारा "आप कौन है ? यहाँ क्यो आये हैं ?" निवेदन किया "इन्स्पैक्टर साहव से मुलाकात करना चाहता हूँ।" पूछा, "आप का नाम ?" नाम वताया। फिर पूछा, "वाप का नाम ? जाति, पेशा, निवास-स्थान ?" मैंने कहा, "ये सव मत पूछिये, मैं सिर्फ दो-चार मिनट के लिए इन्स्पैक्टर साहव से मिलना चाहता हूँ। फर्माया कि इन्स्पैक्टर साहव शहर के कुछ सम्मानित नागरिको से वातचीत कर रहे है। इसलिए आध घंटे से पहले नही मिल सकते। दफ्तर मे वैठ गया और इधर-उधर झाँकने लगा। वाईं दीवार पर पन्द्रह-वीस हथकडिया लटकी हुई थी। दाईं दीवार पर लटके हुए ब्लैकवोर्ड पर हवालात मे वन्द कैदियो की सख्या लिखी हुई थी। सामने की दीवार पर उन लोगो के चित्र फ्रेम मे लगे हुए थे जो विभिन्न अपराध करने के वाद गायव हो गये थे और जिनकी गिरफतारी के लिए सरकार ने पुरस्कार नियत कर रखे थे। एक वात रह-रहकर मेरे दिल मे खटक रही थी, उनमे से वहुतो का हुलिया मुझ मे मिलता था। मै सोचने लगा कि यदि इन्स्पैक्टर साहव को सन्देह हो गया तो ? इतने मे हैडक्लर्क ने कहा, "आप अन्दर जा सकते हैं।"

इन्स्पैक्टर साहव को झुककर सलाम किया और वातचीत का प्रारभ इस वाक्य से किया

"इन्स्पैक्टर साहव, आपका पेशा भी अजीव है। हमेशा चोरो, वदमाशो से पाला पडता है।"

वे कुछ नाराज मे हो गये और कहने लगे, "हमेशा नही। अभी आपके आने मे पहले कुछ वडे प्रतिष्ठित लोगो मे वातचीत कर रहा था।"

मैंने धीरे से कहा "मैं शिक्षा-विभाग मे काम करता हूँ। शिक्षा विभाग सब से अधिक शिष्ट विभाग है।"

"आप यहाँ कैसे तशरीफ लाये ?"

"इन्स्पैक्टर साहब ! मै आपसे एक बात पूछना चाहता हूँ । मान लीजिये कि मेरा कोई मित्र हँसी-मजाक मे, मेरा मतलब है क्रोध की अवस्था मे, किसी की हत्या कर बैठे, तो आप उसके साथ क्या सलूक करेंगे ?"

"मै उसे जेरदफा ३०२ ताजीराते-हिन्द गिरफ्तार कर लूगा ।"

"देखिये इन्स्पैक्टर साहब, भगवान के लिए ऐसा न कीजियेगा । कम से कम इस बात का लिहाज कीजियेगा कि वह मेरा मित्र है, मैं शिक्षा-विभाग मे काम करता हूँ और शिक्षा-विभाग सब से अधिक शिष्ट "

"कर्तव्य कर्तव्य है" उन्होने गरजकर कहा ।

"सुनिये इन्स्पैक्टर साहब ! वायदा कीजिये कि आप उसे कुछ नही कहेगे । और मैं वायदा करता हूँ कि प्रिन्सिपल साहब से सिफारिश करके आपके लडके की फीस आधी करा दूँगा ।"

"मुझे ऐसी भीख की जरूरत नही । आप मुझे यह बताइये कि हत्यारा कौन है, इस समय वह कहाँ है और घटना किस जगह हुई है ?"

"इन्स्पैक्टर साहब ! आप भी अजीब आदमी है ! हद है, मैं तो ऐसे अपराध के सम्बन्ध मे कह रहा था जो अभी हुआ नही और आप अपराधी को फासी पर लटकवाने के सपने देख रहे है ।"

"अगर यह बात है तो आप व्यर्थ मे मेरा समय नष्ट कर रहे है ।"

"अच्छा सुनिये । मैं कोशिश करके सारी फीस माफ करा दूगा । कहिये यह सौदा आपको स्वीकार है ?"

"व्यर्थ की बाते न बनाइये और पुलिस-स्टेशन से अभी बाहर चले जाइये ।"

पुलिस-स्टेशन से वापस घर आ रहा था । रास्ते मे पागलखाना पडता था । मैंने सोचा, चलो पागलखाने के सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब से ही परिचय प्राप्त किया जाये । न जाने किस समय कोई मित्र पागल हो जाये । सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब से मुलाकात की । अभी मैंने जबान हिलाई ही थी कि एक नौकर ने आकर कहा "जनाब, नम्बर पच्चीस तीन घंटे से चिल्ला रहा है, मैं हुक्म का बन्दा हूँ । क्या किया जाये ?" सुपरिन्टैन्डैट साहब चीखे "उस हरामी के कोड़े लगाओ,

ठीक हो जायेगा ।" इतने मे एक और नौकर यह सन्देश लाया—"हजूर, नम्बर बत्तीस ने सलाखो के साथ सिर पटक-पटक कर अपने आप को लहूलुहान कर लिया है ।" सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब ने फर्माया, 'उसकी मुश्के कस दो और हस्पताल मे पहुँचा दो ।"

यह आदेश देने के बाद मेरी ओर मुडे "आप कैसे पधारे ? किसी रिश्तेदार से मुलाकात करना चाहते है ?"

मैने कहा, "मै आपसे मिलने आया हूँ ।"

"फर्माइये !"

"सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब, अगर मेरा कोई लेखक-मित्र पागल हो जाये और पुकारना शुरू कर दे 'मै प्रेमचन्द हूँ, मैं टैगोर हूँ, मै कालीदास हूँ ।'—तो आप उसके साथ क्या सलूक करेगे ?"

"मैं उसे प्यार से समझाऊँगा कि प्यारे, तुम प्रेमचन्द नही दुनीचन्द हो।"

"अगर वह न माने ?"

"तो मैं उसे कोडे लगाऊगा ।"

"ऐसा गजब न कीजियेगा सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब ! लेखक तो पहले ही अधमरे होते हैं ।'

"आपको शायद पता नही कि पागल आदमी केवल चाबुक से डरता है।"

"क्या आप यह नहीं कर सकते कि उसे शम्स-उल-उलेमा या महामहोपाध्याय की उपाधि दिला दें ?"

"आप अजीब बाते करते हें ।"

"मै अजीब बाते करता हूँ या आप ! जरा किसी से पूछिये तो ।"

"किससे पूछू ? यहाँ सब पागल रहते है ।"

"पागल लोग बडे समझदार होते है सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब ! शेक्सपियर ने कहा है—प्रेमी, कवि और पागल एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं !"

सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब ने अर्थपूर्ण नजरो से मेरी ओर देखा और धीरे से कहा, "हूँ ! तनिक मेरे निकट आइये और मुझे अपनी आँखो मे एक मिनट के लिए झाँकने दीजिये ।"

मैंने कहा, "अजी मैं किस योग्य हूँ ? यदि आपको सचमुच आँखो मे आँखे डालने की लालसा है तो किसी अच्छी चीज़ से आँखे लडाइये।"

सुपरिन्टैन्डैन्ट साहब पैतरा बदलकर कहने लगे, "आप क्या काम करते हैं ?"

"पढाता हूँ।"

"कितने घंटे काम करते है ?"

"बारह घटे।"

"दूध पीते है ?"

"कभी-कभी।"

"नीद का क्या हाल है ?"

"जिस दिन पाच पीरियड (Period) पढाता हूँ, उस दिन नीद नही आती।"

"हुं ! मुझे पहले ही सदेह था।"

यह कहकर उन्होंने ज़ोर से घटी बजाई। एक चपडासी भागा हुआ आया। मेरी ओर सकेत करके कहने लगे, "इन्हे पहचानते हो ? मेरा खयाल है, यह वही है जो पिछले साल कमरा नम्बर चालीस से भागे थे।"

चपडासी ने बडे ध्यान से मेरी ओर देखने के बाद निर्णय दिया कि मैं चालीस नम्बर से मिलता अवश्य हूँ, किन्तु चालीस नम्बर नही हूँ।"

सुपरिन्टैन्डैंट साहब ने कहा, "आप तशरीफ ले जा सकते हैं। देखिये, काम की मात्रा तनिक कम कर दीजिये।"

घर मे प्रवेश करने से पहले क्षण भर के लिए मैं मातादीन पनवाड़ी की दुकान पर रुका। मातादीन ने कहा, "कहिये क्या हाल है ?"

"आपकी कृपा है। बकरी का क्या हाल है ?"

"अजी साहब, बकरी तो कमाल कर रही है, अब सवा तीन सेर दूध देती है।"

"सच ?"

"हाँ साहब ! लेकिन आज आपकी आँखे क्यो लाल हो रही हैं ?"

"धूप मे चलता रहा हूँ ।"

"नही साहब, यह बात नही है, आपका जिगर बढ गया है, बकरी का दूध पिया कीजिये । कहे तो भिजवा दूँ ।"

"ज़रूर-ज़रूर ।"

"हाँ साहब स्वास्थ्य का अवश्य खयाल रखा कीजिये । स्वास्थ्य नही तो कुछ भी नही ।"

रामानन्द सागर



मेरा नाम रामानन्द, उपनाम 'सागर' है। मै २९ दिसम्बर १९१७ को लाहौर के निकट अपने ननिहाल के गाँव मे उत्पन्न हुआ था। सुना है उस दिन बहुत जोर का तूफान आया था। यातायात के समस्त रास्ते बन्द हो गये थे। गाँव एक टापू बन गया था, फिर भी मै आ गया। बस जीवन मे भी हमेशा यही व्यवहार रहा है। बडे से बडे तूफानो से डर कर कभी पीछे नही हटा, हमेशा क़दम बढाता रहा हूँ।

पाँच साल की आयु मे एक सम्बन्धी ने गोद लेकर मुझे मेरे माता-पिता से अलग कर दिया। बचपन तथा किशोरावस्था बहुत क्रूर प्रकृति के लोगों के साथ गुज़री। इसीलिए एक पीडित की घुटन ने जवानी से पहले ही एक बीमार-सी गम्भीरता उत्पन्न कर दी। लिखने का शौक इसी घुटन का परिणाम है।

मैंने शिक्षा डी ए वी हाईस्कूल व एस. पी. कालेज श्रीनगर मे पाई।

सत्रह वर्ष की आयु मे गोद लेने वालो से शादी के मामले मे दहेज की बात पर बिगाड हो गया और मैं घर छोड-छाड़ कर आजाद जीवन व्यतीत करने लगा। तब से आज तक मोटर-लारी के क्लीनर से लेकर फिल्म के कहानी और सम्वाद लेखक व डायरेक्टर और प्रोड्यूसर तक बहुतेरे काम किये, जिनमे बीस

रुपये से लेकर कई हजार रुपये तक मासिक वेतन पाया। आजकल बम्बई में हूं और 'फिल्मी धंधा' करता हूँ।

कहानियो का पहला सग्रह 'ज्वारभाटा' १९४३ मे और 'आइने' १९४४ मे छपा। भारत-विभाजन के बाद एक उपन्यास 'और इन्सान मर गया' उर्दू-हिन्दी दोनो भाषाओ मे प्रकाशित हुआ।

मेरा पता : २४—भाटिया बिल्डिग, लेडी हार्डिग रोड, माहम, बम्बई।

इधर एक समय से रामानन्द सागर ने लिखना छोड़ रखा है और पंजाब के फसादो पर एक उपन्यास 'और इन्सान मर गया' के बाद तो उसने एक भी कहानी नहीं लिखी। लेकिन आज से आठ-दस साल पहले की लिखी हुई उसकी कहानियाँ 'वख्शीशें', 'टंगमर्ग के अड्डे पर', 'तश्ना तकमील', 'क्लर्क' और 'इक और ताजियाना' ऐसी कहानियाँ अपने वातावरण और शैली की गम्भीरता के साथ-साथ व्यंग और स्वाभाविक कथावस्तु के कारण सदैव याद की जाएँगी।

कृष्णचन्द्र की तरह सागर की प्रारम्भिक कहानियाँ अधिकतर काश्मीर से सम्बन्धित हैं, लेकिन उसने वहाँ की खबसूरती और बदसूरती के भेद को जिस कला-कौशल से प्रस्तुत किया है, वह पढने वाले को बहलाता कम और चौंकाता अधिक है। काश्मीर के अतिरिक्त उसने मैदानों अर्थात् शहरो और ग्रामों से भी अपनी कहानियो के लिए विषय लिये हैं, और उनके साथ भी पर्याप्त न्याय किया है। आठ-दस साल पहले की उर्दू साहित्य की काम-धारा मे मन्टो, इस्मत और मुमताज मुफ्ती की तरह वह भी बेतरह बहा, लेकिन इसके साथ-साथ चूंकि उसने विभिन्न सामाजिक समस्याओ को विस्मृत नहीं किया, इसलिए उसके यहाँ काम-प्रवृत्ति अपेक्षाकृत कम नजर आती है। इस पर उसके यहाँ निरीक्षण एवं प्रेक्षण को जो महत्व दिया जाता है उससे उसकी कहानियाँ हमारे दैनिक जीवन की घटनायें मालूम होती हैं और मेरी नजर मे इसी निरीक्षण एवं प्रेक्षण मे ही उसके एक सफल कहानीकार होने का भेद निहित है।

रामानन्द सागर

एक और कोड़ा

रास्ते भर उसका हृदय अशान्त रहा। दफ्तर ही से वह कुछ वेसिर-पैर के वाक्य धीरे-धीरे बुडबुडाता आ रहा था लेकिन वास्तव मे ये एक ही विचार-क्रम की कडिया थी जो यौवन की उठान की भान्ति कही-कही से उभर आई थी। एक विचारक्रम—जिसका प्रारम्भ मालिक की तनी हुई भौंहो से हुआ था और जिसका मकडी-तार दफ्तर की डाक, पैंडिग रैक, अर्जेन्ट-फाइलो और समय से एक घण्टा बाद होने वाली छुट्टी मे से होता हुआ अब तारकोल की सडक के शोकातुर चेहरे मे प्रतिबिम्बित होते हुए डूबते सूरज मे विलीन होता दिखाई दे रहा था।

' बडा बना फिरता है 'मालिक कही का मैं छुट्टी नही दूँगा। क्लर्क हूँ दास तो नही हूँ मेरा काम भी तो आवश्यक है जिस पर मेरे भविष्य का आधार है ऐसे अवसर कब रोज-रोज़ मिलते हे। वेतन कुछ नही, कुल साठ रुपये। यहाँ से तो फिर भी पन्द्रह अधिक है जगह भी अच्छी हे। वास्तव मे विदेशी लोग ही मूल्य आँक सकते है। मनुष्य चाहे कितना ही योग्य क्यो न हो जाय, अपनो को तो वह उसी लगोटवन्द, भिखमगे के से रूप मे नजर आता रहता है जो उसके बचपन की याद दिलाता था। सुना है वह मालिक वडा गुणज्ञ है। ऐसे व्यक्ति स्वय बहुत योग्य होते है और मनुष्य को पहचानने

वाले भी। मुझे तो वहाँ यह भी कहने की आवश्यकता न होगी कि मैं अपनी कक्षा मे वहुत अच्छा लडका गिना जाता था। चौथी कक्षा मे ही मैंने शिक्षा-वृत्ति प्राप्त की थी। दसवी मे भी करता, किन्तु वीमारी के कारण उप-स्थितियाँ कम हो गई थी। यो तो मैं छठी कक्षा तक उस शिशुपाल की टक्कर के नम्वर लेता रहा, जिसने वाद मे मैट्रिक, एफ० ए० और वी० ए० मे विश्व-विद्यालय के रिकार्ड तोडे थे। मैं तो घरेलू परिस्थितियो से विवश हो कालेज मे एफ० ए० भी न कर सका फिर मरती हुई वूढी दादी की पोपली आशाओ की भेंट चढकर स्त्री का फन्दा गले मे डलवा लिया और फिर वच्चो का गधे-जैसा वोझ उठाकर भी किन-किन विपत्तियो से, रातो को जाग-जागकर, वी० ए० किया है। लेकिन सुना है वह तो मनुष्य को देखते ही अनुमान लगा लेता है—स्वय ही हजारो मे से पहचान लेगा कि वह है रत्न'''और फिर'' क्लर्क '''सुपरिन्टैंडैन्ट ''डायरेक्टर' 'डायरेक्टर-इचीफ ''रायवहादुर ' ओ० वी०ई० '''के० सी०'' ।'

उसकी वगल मे एक वेवी-कार मन मे निकल गई। अव तक डूवते सूरज का प्रतिविम्व भी डूव चुका था और फ्लेमिग रोड शोकातुर, तारकोल लपेटे, उदास-सी, किसी अपाहज भिखमगे की तरह, धूल मे लथपथ पडी थी।

' उस दिन आ जायगा—"मुझे रायवहादुर जी से मिलना है"'''डाय-रेक्टर से मिलने के लिए कितने-कितने यत्न नही करेगा आज भविष्य के इस वडे व्यक्ति को दो दिन की छुट्टी तक नही दे सकता ये लोग भी कितने अधे होते है कितने स्वार्थी कुछ भी हो, वह मेरा रास्ता तग नही कर सकता '''मैंने भी प्रार्थना-पत्र दे ही डाला है। अधिक से अधिक यही होगा न कि मैं विना आज्ञा चला जाऊँगा ' नौकरी से निकाल देगा ? अच्छा ही है, मुझे नये काम पर जाने के लिए त्याग-पत्र देने की आवश्यकता न रहेगी ''दो-चार दिन के वाद ही'''

सिपाही की निरन्तर सीटियो ने उसे सडक के चौथाई भाग से वापस लौट जाने पर विवश कर दिया। सामने कांस्टेवल की लाल और नीली पगडी के ठीक ऊपर एक वड़ा-सा लैम्प लटक रहा था जिसका प्रकाश विल्कुल चान्दनी

की नकल था। इस कृत्रिम चाँदनी मे माल-रोड कुछ ऐसी दिखाई दे रही थी जैसे कोई सावली-सलोनी स्त्री जहाँगीर-काल की ढाका की बनी हुई शवनम का दोपट्टा ओढे पडी हो। सामने चौक के ठीक बीचो-बीच कास्टेवल खडा था। दातो मे ह्विसल दवाये और दाहिने वाजू को घडी के पैंडुलम की तरह नियमवद्ध हिलाता हुआ ''उसके सामने से कारें, लैंडोवाडी, रेसिंग, टूरिंग, लखनवी रडियो की-सी नुकीली, रगदार, चमकदार ''हर प्रकार की कारे, पक्ति-दर-पक्ति, सुन्दर, सजीली तथा लचकीली सवारियो को उठाये शवनम के दोपट्टे मे लिपटी हुई कई सावली-सलोनी स्त्रियो की छातियो को रौंदती भागी जा रही थी। सवारियाँ स्वर्णिम साडियों, जारजैट के ब्लाउज़ो, वाटा की सैंडलो, वोरजुये के पाउडरो और 'ईवनिंग्ज इनहेल' लिपस्टिको के वोझ से इस बुरी तरह दवी हुई थी कि उनके हाथ सिपाही को सकेत तक न कर सकते थे। अतएव मोटरो के पहलुओ से सुर्ख शीशे के बने हुए हाथ उठते और जिधर को जाना होता था, उधर को सकेत कर देते थे। वह उन सवका रक्षक था उन्हे दुर्घटनाओ से वचाने वाला' 'लेकिन स्वय ? क्लव से पी-पिलाकर आने वाले 'साहवो' की डगमगाती कारो और चोटियो के गिर्द लिपटे हुए मोतियो के हारो की सुगन्धि से बसे हुए इस अर्ध-अन्धेरे-अर्ध-उजाले वातावरण से पूरा-पूरा लाभ उठाने वाले, जो फ्रन्ट सीट पर पहलू मे वैठी हुई सुन्दरियो की ओर झुक-झुक जाते थे, उन सवके वीचो-वीच खडा वह स्वयं कितना अरक्षित था'''किसी एक की मस्ती भरी चूक और टैनिस के वाल की तरह एक निर्जीव शव उछलकर परे गन्दी नाली के गढे मे जा गिरेगा ' यदि कार के कोई आघात आ गया तो तुरन्त बीमा कम्पनियो मे भगदड मच जायगी। उसी मस्ती भरी चूक के कारण चाँदी के हजारो सिक्के उन्हे मिल जायेंगे'' इधर कई मुसीवते 'अफसरो की कोठियो पर एक विधवा और चार वच्चो का नहार-मुँह जा वैठना और दफ्तर जाते समय उनके सामने भिखमगो की तरह हाथ वाँधकर खडे हो जाना ''महीनो की दफ्तरी कारवाहियाँ' 'और फिर उनके लिए आधे वेतन के साढे आठ रुपये मासिक की स्वीकृति और फिर एक नया व्यक्ति घटे के पैंडुलम की तरह अपने दाहिने वाजू को हिला-हिलाकर उनकी रक्षा

कर रहा होगा···लेकिन वह स्वय ··?

यह इसी प्रकार होता रहेगा···हम अरक्षित सहारो पर खडे होकर उनकी रक्षा करते रहेगे ··उनकी कारो की रक्षा···फटी हुई जिल्दो वाली भारी लैजरो, कैश-बुको की रक्षा· उसके बदले मे हमे माँगने पर दो दिन की छुट्टी नही मिलेगी · एक विधवा और चार बच्चो को साढे आठ रुपये मासिक मिलेंगे ·· चार बच्चे और एक विधवा· लेकिन ये इतने बच्चे क्यो उत्पन्न हो जाते हैं · सत्रह रुपये मे चार बच्चे पल भी सकते थे ? मेरा वेतन पैंतालीस रुपये है और तीन बच्चे ··एक के लिए पायजामा नही, दूसरा केवल एक पायजामा ही पहने फिरता है और तीसरे के लिए तो केवल एक लगोटी ही मौजूद है · और चौथा ·जिसके उत्पन्न होने मे अभी महीना-पन्द्रह दिन बाकी हैं, लेकिन जो पिछले हफ्ते ही से उतावला मालूम होता है और फिर बधाइयों की बौछार ··भाँड · हीजडे···नाई ··धोबी· डोम·· भगी· हर-ओर मे बधाई की आवाज लेकिन बच्चे मरे हुए भी तो उत्पन्न हो सकते हैं ··होते भी हैं। भाग्यवानो के यहाँ तो बच्चे कोठो से भी गिर पडते है, मोटरो तले भी कुचले जाते हैं, भीड-भडक्के मे खो जाते हैं ··काश· ·काश !

इन्ही विचारो मे वह चौक को बहुत पीछे छोड आया। गणेशघाट के निकट से गुज़रते समय उसे न जाने क्या खयाल आया कि वह नित्यानन्द ज्योतिषी की बैठक को चला गया··· ·

"पण्डित जी ! मैं पिछले कई दिनो से तरह-तरह के सपने देख रहा हूँ। आपसे उनका अर्थ पूछने आया हूँ।"

पण्डित जी ने अपनी खशखशी दाढी को खुजलाते हुए सामने रखी हुई जन्मपत्री पर से नजरें हटाकर उसकी ओर देखा।

"क्या सपने देखते हो ?"

"कल तो मैंने देखा, जैसे मैं मोटे-मोटे रस्सो मे जकड दिया गया हूँ और एक काला भुजग भयकर-सा व्यक्ति मेरी नगी पीठ पर कोडे लगाए चला जा रहा है। जब सडाप से चोट पडती है तो ऐसा लगता है कि उसकी रस्सी माँस मे धस जाती है और जब वह उसे वापस खीचता है तो लम्बोतरे घावों

से खून रिसना शुरू हो जाता है···यो सैकडो कतरे उसी काले आदमी के पैरो पर गिरते चले जा रहे है, वह हँसता चला जा रहा है और कोडे की हर नई चोट पर पीछे से कोई पुकार उठता है—बधाई !"

पण्डित जी ने ऐनक अपने माथे से फिसलाकर आँखो के सामने कर ली और एक पोथी निकाल कर उसमे कुछ देखने लगे। वह भी खुले पन्ने पर झुककर पढने लगा।

'·· ··रात के पहले पहर मे जो सपना देखा जाये उसका फल चार महीनो तक' 'जो प्रभात समय देखा जाय उसका फल दो सप्ताह के भीतर मिलेगा··· स्वप्न मे राजा, गाय, ब्राह्मण को देखना अच्छा है ' लाल वस्त्रो की कोई स्त्री देखो तो मकान को आग लगेगी' पानी मे कूदो तो सख्त खतरा है···हाँ पार कर जाओ तो समझो कि बच गये···पहाड की चोटी पर चढना······'

वह यहाँ-वहाँ से व्याख्याएं पढ रहा था कि एकाएक पण्डित जी ने सिर उठाया।

"बडा अच्छा सपना है तुम्हारा ····"

"क्या है अर्थ इसका ?"

"ग्रथकार तो लिखता है कि ऐसे व्यक्ति को कोई बहुत बडा लाभ होगा। उसका पद अचानक बढने वाला है, जिससे उसे चारो ओर से बधाइया मिलेगी।"

उसने एक चवन्नी पण्डित जी की पोथी पर रख दी और चला आया।

"ज्योतिषी भी कितने विद्वान् होते है, भाग्य की बात बता देते हैं ' पद बढने वाला हे, इसमे अब सदेह ही क्या है। व्यक्तिगत परिश्रम से मैंने शिक्षा ग्रहण की है, इसका मूल्य बाहर वाले ही जानते हें। ऐसे ही परिश्रमी जीवो ने ससार मे अपनी धाक जमाई हे······अमरीका के प्रधान बने हैं ' प्रधान-मत्री बने हैं ' फ्यूहरर बने हैं' ।

"तुम्हारा इकबाल दूना हो बाबू···एक बेवा पर भी तरस खाना जा ' तुम जैसे बडे लोगो के सहारे ही हम जीते है · "

फुट-पाथ के एक ओर एक सिमटी-सिमटाई बुर्कापोश औरत अपनी झोली

फैलाये बैठी थी। उसके समीप ही तीन नन्हे-नन्हे, अध-नंगे बच्चे सिर प
आती हुई रात के धुदलके मे अपने चेहरे छुपाए पडे थे 'यह बुढिया कुछ
से भी मेरे बडप्पन को महसूस कर रही है। कहा करते है कि बडे आदमी को
देखते ही उसकी महानता का अनुभव हो आता है। अवश्य ही उनके इर्द-गिर्द
के शून्य मे कोई शक्ति रहती होगी !

उसने जेब मे हाथ डाला और बडी लापरवाही से तीन सिक्के निकालकर
उसकी झोली मे डाल दिये। उसने देखा तक नही कि क्या दिया है। कदाचित्
उसकी 'महानता' इतनी हीनता सहन न कर सकती थी। इस समय उसे ऐसा
लग रहा था जैसे उसे इसीलिए 'महानता' प्रदान की गई है कि वह दुखी,
विशेषत आर्थिक रूप से पीडित, लोगो का आश्रय बन जाय।

दहलीज के भीतर पैर रखते ही नन्हे बद्री ने शोर मचाना शुरू कर दिया'
पैसा'' पैसा ''

और जब तक उसने कपडे उतारे, बद्री ने रोना भी शुरु कर दिया। उसने
एक पैसा उसके हाथ मे थमा तो दिया लेकिन बद्री के रोने से उसका मस्तिष्क
खराब-सा गया।

"एक अलग कमरा होना चाहिये मेरे लिए—जहाँ मै अपनी मानसिक
शान्ति के साथ पाँच मिनट बैठ सकू' यहाँ एक ही कमरा है जो, ड्राइंग-रूम,
स्लीपिंग-रूम, वेटिंग-रूम' 'अर्थात् सब कुछ है 'खैर'''"

वह इसी कमरे के साथ के एक पाँच फुट चतुष्कोण कमरे मे प्रविष्ट हुआ।
उसकी पत्नी अगीठी को फूकने का असफल प्रयत्न कर रही थी। बढे हुए पेट
के कारण वह झुक न सकती थी। उसके पास ही एक डेढ साल का बच्चा
"रें—रें" कर रहा था। पत्नी हर दो मिनट के बाद पेट के निचले भाग को
हाथ से दबाकर मुँह सिकूरती थी।

"क्या आज ज्यादह तकलीफ है ?"

"कुछ है तो सही' आप अभी तक कुछ भी सामान नही लाए। बाद

जाने से फायदा ? और आपने दाया को भी नही कहलाया…"

"मैं सब कुछ ला दूंगा' अभी दाया को क्या करोगी''उनके हाथ गदे होते है। वे नाखून तक नही काटती। तुम्हारे लिए नर्स का इन्तजाम करू ?"

"नर्स के लिए पाँच रुपये रोज की फीस भी तो है।"

"ओह ''कोई बात नही खैर, अब के तू गुज़र करले—आगे को खास नर्स रखा करूगा अच्छा, क्या-क्या कहा था लाने को ''जायफल, मीठा तेल, घी और…।"

"सोठ, गुड, खाड और'' ।"

"खाँड ? खाँड पर तो कंट्रोल हो गया है। खैर ।"

दुकानदार ने पुड़ियाँ बाँधते-बाँधते हिसाब करके कहा।

"आठ रुपये।"

"आठ रुपये ? आठ रुपये किस तरह ?"

"देख लीजिये, आपके सामने धरा है सब सौदा। यह दो रुपये का घी, एक रुपये का……।"

"दो रुपये का घी ? दो का नही भाई, एक ही का कर दो, मेरी जेब मे फुटकर सात ही रुपये है, वरना सौ का नोट है।"

दुकानदार घी वापस निकालने लगा। उसने बटुवा अपनी हथेली पर उलट लिया। पाँच का एक नोट, एक रुपया और दो पैसे अपने लाल और श्वेत चेहरे दिखाने लगे। उसने बटुवे को बहुतेरा उल्टाया, घुमाया। कोनो मे उँगलियाँ ठोस कर उसे एक जगह से उधेड भी दिया, लेकिन वह सातवाँ रुपया कहाँ था ? वह हिसाब करने लगा।

"सवा पाँच आने मेरी जेब मे थे। सात रुपये रफी टाइपिस्ट से उधार लिए। पण्डित जी को चवन्नी दी ' '''घर आकर बद्री को एक पैसा दिया और, हाँ, उस बुर्के वाली को जाने क्या दिया था 'और तो कही खर्च नही किया… ' तो इसका मतलब है बुर्के वाली को एक रुपया दो पैसे दिये ' '' तभी

इतने गुण गा रही थी। दुआयें तो एक पैसे मे भी बीस प्राप्त की जा सकती है ···· 'एक रुपया ··· 'एक रुपये मे उससे क्या कुछ प्राप्त नही किया जा सकता था · ···"

"लीजिये बाबू जी ! क्या कोई कुली भी चाहिए ?"

"कुली ?" उसने चौककर दुकानदार की ओर देखा जैसे अभी-अभी दुकानदार ने कहा हो—'क्या एक और कोडे की चोट सहन कर सकते हो ?'

उसने चाहा कि पूरा सौदा सिर पर उठा ले और दुकानदार से कह दे कि 'नही। अभी तुम लोग और कितने कोडे मारोगे ? ये सब कोडे ही तो हैं, यह जायफल, यह सोठ, यह खाँड के बने हुए मीठे कोडे, ये बच्चे और फिर यह कुली ·· बेगाना कुली क्यो ? आखिर हम बच्चे किसलिए उत्पन्न करते हैं—ये बच्चे जिनका बोझ पश्चिमी राज्य अपने ऊपर ले लेते हैं, फिर भी यह सरकारी बर्थ कट्रोल कलक है और हमारे यहाँ वह महात्मा जी का उपदेश—ब्रह्मचर्य रखो, स्त्री से बहन का-सा व्यवहार करो—अर्थात् यदि किसी के सुन्दर बदन को देखकर हममे कोडे की चोटे सहन करने की शक्ति विद्यमान रहती है तो वह भी न रहे · 'अर्थात् प्रकृति ने लिंगाकर्षण, अंगो की भिन्नता और और सब कुछ व्यर्थ मे बनाया है। अन्य जीवो के बिल्कुल विपरीत हमे पत्नियो को माँ-बहने बनाने को कहा जा रहा है। यह भी तो एक कोडा है कोडा जिसकी चोट पूरी की पूरी जाति को मौत की नीद सुला सकती है · "

"आप क्या सोच रहे है बाबू जी कुछ खो गया है क्या ?"

दुकानदार ने दूसरे ग्राहक को आते देखकर कहा।

"नही, कुछ नही, अच्छा यह लो दाम "

"यह तो छ रुपये है !"

"हैं हाँ ··घी नही चाहिये कल ही एक टीन ओकाडा से मगवाया था, मुझे भूल ही गया था।"

"मैंने कहा, कुली बुलवाऊँ ?"

"हाँ जी, कुली के बिना कैसे होगा ?"

और वह चोट खाकर भागने वाले की तरह फुर्ती से एक ओर चल दिया—मानो इस प्रकार चोट की पीडा कम हो जाती हो।

'आखिर कुली के विना किस तरह काम चल सकता है ? रास्ते मे भी तो अच्छे-अच्छे लोग मिलते है। काक साहव ही है, कितने बडे आदमी हे। लेकिन यो मिलते है जैसे मैं असेम्वली का प्रेजीडैंट हूँ और वे एक उम्मीदवार। जिन्हे बडा वनना हो, नि.सन्देह पहले ही उनके इर्द-गिर्द के शून्य मे शक्ति विराजमान रहती होगी। यदि वे रास्ते ही मे मिल गये तो ? कम्वख्त नाई भी तो कितने ही दिनो से नही मिला। मेरे नाखून कितने वढ रहे है '

उसने नाखूनो की ओर देखा। 'और यह वूट पालिश का धब्बा ! उसने दोनो हाथ कोट की जेव मे छुपा लिए, जैसे काक साहव सामने खडे वाते कर रहे हो और उनका नजरे उसके हाथो पर ही केन्द्रित हो गई हो। उसने जेव के भीतर ही भीतर हाथो को घिसाकर पालिश का धब्बा साफ करने का प्रयत्न किया और फिर अपने सूट पर एक छिछलती-सी नजर डाली जिस पर पूरे एक मास का वेतन खर्च हुआ था। अपना सूट देखकर वह फिर सन्तुष्ट-सा हो गया।

अचानक वगल से एक खूवसूरत कार निकल गई। वह उसकी दूर होती हुई नम्वर-प्लेट वडे ध्यान से देखता रहा—काक साहव की कार ! उन्होने देखा नही होगा ! कार तो वडी खूवसूरत है लेकिन है शिवरले। मै तो जव खरीदूंगा फोर्ड ही खरीदूंगा ! भला फोर्ड का क्या मुकाविला ? व्यूक, पौण्टेक, चजलर···भला यह भी कोई गाडियाँ है ! जरा-सी खरावी उत्पन्न हो जाय तो मुसीवत आ जाती है। मैं तो···'

उस रात उसे कई वार जागना पडा। पत्नी को पीडा हो रही थी। समय से पूर्व की प्रसव-पीडा का एक ही हितकर परिणाम हो सकता था कि वच्चा जीवित नही होगा।

पत्नी ने पूछा, "आप घी क्यो नही लाये ?"

"उसके पास था नही, कहता था, सुवह दुकान खोलते ही दे दूंगा।" लेकिन

दिल मे वह सोच रहा था कि "बच्चा ही मुर्दा होगा तो फिर घी को क्या करेगी ! वह तो न तेरा दूध पीयेगा न मेरा खून..."

दफ्तर जाते समय उस बेचारी से खाना भी तो न पकता था। उसने कहा "आज दफ्तर से छुट्टी ही ले लेते।"

"आज किस तरह ले लूं ? कल मुझे फिर चाहिये। आज दरख्वास्त का जवाब आने वाला है। कल मुझे इटरव्यू के लिए जाना होगा। इसी पर हमारे भविष्य का आधार है। यो भी घबराना नही चाहिये। शाम तक कुछ नहीं होगा। ये काम इतनी जल्दी नही हो जाते "

माँ के निकट बैठा हुआ छोटा बच्चा कोई चिंगारी आ पडने से अचानक चीख उठा। पत्नी ने बच्चे को उसकी ओर ढकेलते हुए कहा, "ज़रा इसे सम्भालियेगा।"

"एक तो बच्चो ने नाक मे दम कर रखा है। आदमी कोई स्कीम ही सोचे, कोई बडी बात ही सोचे, लेकिन ये कहाँ सोचने देते है ''इन्हे खिलाने का काम तो नौकरो का होता है..."

पत्नी की आँखो मे आँसू आ गये।

"नौकर आयेंगे कहाँ से ? आप तो हवाई क़िले बनाते-बनाते बिगड जाते है। इन बेचारो को हर वक्त 'खाऊँ, खाऊँ' करते रहते हैं।"

पत्नी के आँसू देखकर उसे कुछ ग्लानि हुई। वह अपने पेट के निचले भाग को थामकर मुँह बिसूर रही थी।

"मुझ से तुम्हारा कष्ट देखा नही जाता। लेकिन तुम मुझे पागल समझती हो। विश्वास करो, यह बस कुछ ही दिनो की बात है, फिर मैं तुम्हे बताऊँगा कि जीवन-स्तर क्या होता है ? हमने तो अपनी ३५ वर्ष की आयु मे अभी तक जीवन ही नही पाया। मुझे बच्चे बुरे तो नहीं लगते। मैं तो इनके बारे मे भी बडी बाते सोचता रहता हूं। देखो आज सवेरे बद्री एक छोटी-सी लकडी को तलवार की तरह कमर से लटकाए फिरता था। इससे स्पष्ट है कि उसके स्वभाव मे सैनिक प्रवृत्ति है। विलायत वाले अपने बच्चो को उनकी प्रवृत्तियो के अनुसार बचपन ही से शिक्षा देते हैं और वे बडे आदमी बनते हैं।

तुम देख लेना, अगले महीने दूसरी नौकरी से जब अधिक वेतन आयेगा तो मैं इसे एक फौजी वर्दी, लौंग-बूट और खेलने की तलवारे, बन्दूके ले दूँगा। विश्वास रखो, हमारा बद्री किसी दिन मेजर होगा या कर्नल·· और हमारा शील तो कोई कवि है। तुमने देखा नही कि किस प्रकार जहाँ पानी देखे, घटो बैठा रहता है। उसे अपने बाग मे नन्हे-नन्हे तालाब और बोट बनवा दूँगा और उसे चारो भाषाओ का साहित्य पढाऊँगा और फिर'

दफ्तर मे डाकिये ने उसे एक लिफाफा दिया। उसने जो प्रार्थना-पत्र भेजा था, सर्टीफिकेटो की भरमार से उसका वज़न अधिक हो गया था, अतएव दो पैसे का बैरग होकर, और लेने वाले के इन्कार करने पर, उसके पास वापस आ गया था।

उसने चुपके से इकन्नी डाकिये के हवाले कर दी। उधर से रफी टाइपिस्ट भागा-भागा आया।

"तुम्हें बाहर कोई बुढिया बुलाती है।"

बाहर आकर देखा तो पडोस की विधवा ब्राह्मणी थी।

"जल्दी चल, तेरे घर लडका-वा है "

"ज़िन्दा है ?"

"तेरी जीभ को क्या-वा रे। चन्दा-सा है, चन्दा-सा। सकल देखोगे तो बधाई दूँगी।"

अचानक पीछे मे कोई पुकार उठा—"बधाई हो !"

मुडकर देखा तो रफी टाइपिस्ट दूसरे क्लर्को को बुला रहा था।

"अरे जल्दी आओ, इसे बधाई दो, मिठाई खाने का मौका है।"

कई आवाज़े पुकार उठी—"बधाई··बधाई··बधाई !"

एक साथ इतनी चोटे वह सहन न कर सका। उसका दिमाग़ धुँधला गया और उसमे आडी-तिरछी रेखायें, बेजोड चित्र बडी तेज़ी से घूमने लगे··

चन्दा-सा लडका'' सर'''डायरेक्टर-इचीफ ' कर्नल'''मेजर 'घडी के पैंडुलम की तरह बाजू हिलाता हुआ कास्टेबल 'जार्जट के ब्लाउज'''किसी की मस्ती-भरी चूक ''और एक विधवा के पहलू मे बैठा हुआ अध-नगा, अबोध, अनाथ, भिखमगा लडका' 'साढे आठ रुपये मासिक कुली'''मोटे-मोटे रस्सों मे जकडा हुआ व्यक्ति'' लम्बोतरे घावो से रिसता हुआ लहू ''बधाई'' बधाई'''

इस्मत् चुग़ताई



भई, मेरी जीवनी बिल्कुल इस योग्य नहीं है कि उसे गर्व से बताया जा सके। बचपन घर मे पिटते-पिटाते गुजरा। शिक्षा बड़े बेढंगेपन से हुई। अध्यापक हमेशा मुझ से निराश रहे। अलीगढ और लखनऊ मे पढी हूँ। अध्ययन का शौक बड़ा बेढब है। नहीं पढती तो दैनिक-पत्र तक नही पढती और जो पढ़ना शुरू करती हूँ तो दिन-रात एक हो जाते हैं। यही हाल लिखने का है।

सब से पहला लेख 'बचपन' लिखा था जो 'तहज़ीब-ए-नसवा' (पत्रिका) को भेजा जिसके सम्पादक इमत्याज अली साहब ने लिखा कि "इस लेख मे तुमने क़ुरान की तालीम का मज़ाक उड़ाया है" अतएव लिखने का इरादा ठप्प ! फिर किसी तरह 'फसादी' (कहानी) लिखी और साहस करके 'साकी' को भेज दी, परन्तु यह भी लिख दिया कि खुदा के लिए कहानी पर मेरा नाम मत छापियेगा।

वास्तव मे मुझे बदनामी का भय था कि लोग क्या कहेंगे, कितना 'गंदा' लिखा है। पता नहीं इतनी गुमनाम होते हुए भी बदनामी का भय क्यो था।

यह १९३८ का जिक्र है। उस समय से बराबर लिख रही हूँ। अब तक कहानियों के चार संग्रह, ड्रामा 'धानी बाके,' नावलट 'जिद्दी' और उपन्यास 'टेढी लकीर' प्रकाशित हो चुके हैं। आजकल फिल्म लाइन मे हूँ और करीब-करीब लिखना छूट गया है।

जीवनी के प्रसंग में शायद मुझे यह भी वताना पडेगा कि शादी कब हुई ? लेकिन यह बताने में मुझे हानि पहुँचने का डर है क्योंकि एक बार एक आलोचक महोदय ने फर्माया था कि जब से मैंने शादी करके हंडिया-चूल्हा संभाला है मेरी रचनाओ में वह रस और जीवन नही रहा। अगर आपको मालूम हो गया तो आप हिसाब लगाकर न जाने मेरी कौन-कौन-सी कहानिया रद्दी की फहरिस्त मे दाखिल कर देंगे।

पता . ३—इन्डस कोर्ट, फर्स्ट फ्लोर, ए० लेन, मेरिन ड्राइव, बम्बई—१

इस्मत चुगताई का नाम लेते ही १९३९-४० का वह ज़माना याद आ जाता है जब 'भद्र' लोग उसके नारी होने पर सन्देह करते थे। उसकी स्पष्टोक्ति और 'धृष्टता' पर उसे गालियाँ देते थे। जिस पत्र-पत्रिका मे उसकी कहानी छपती थी उसे घर की महिलाओ से बचा-बचाकर रखते थे लेकिन स्वय छुप-छुपकर पढ़ते थे और आनन्दित होते थे।

इस्मत चुगताई ने समाज की कुछ ऐसी मजबूत दीवारो मे छिद्र किये हैं कि जब तक वे अडोल खड़ी थीं, कई मार्ग आँखो से ओझल थे। पर्दे की लानत और घर की कड़ी चारदीवारियो मे घिरी हुई जवानियाँ, जो जवान होने से पहले ही बूढी हो जाती हैं; और अपने जन्म से अपनी मृत्यु तक का सफर विचित्र निराशा, पीडा लेकिन मूक भाव से तय करती हैं, इस्मत की कहानियो की विशेष पात्र हैं। अपने इन जवान लेकिन बूढ़े पात्रो द्वारा उसने जीवन के जिन सूक्ष्म अगो का आपरेशन किया है और अपनी नजर का तीखा नश्तर चलाया है, वह किसी नारी का, और वह भी इस्मत चुगताई ही का, भाग था। इस प्रकार की कई विशेषताओ के अतिरिक्त जो चीज इस्मत को अन्य महिला कहानी-लेखिकाओ से ऊँचा उठाती है, वह है उसकी भाषा तथा शैली की महानता। महिलाएँ ही क्यो, मेरी राय मे तो उर्दू में अभी तक कोई पुरुष कहानी-लेखक भी ऐसा उत्पन्न नहीं हुआ जो इस्मत की भाषा के रस तथा लालित्य का मुकाबला कर सके।

इस्मत का व्यक्तित्व उर्दू साहित्य के लिए अत्यन्त गौरवशाली है।

बहू-बेटियाँ

यह मेरी सबसे बडी भाभी है। मेरे सबसे बडे भाई की सबसे बडी पत्नी। इससे मेरा अभिप्राय कदापि यह नही है कि मेरे भाई की, भगवान न करे, बहुत-सी पत्नियाँ हैं। वैसे यदि आप इस ओर से उभरकर प्रश्न करे तो मेरे भाई की कोई पत्नी नही। वह अब तक कँवारा है। उसकी आत्मा कँवारी है। यो लोगो की नज़र मे वह बडी भाभी का स्वामी और ईश्वर, तथा पौन दर्जन बच्चो का पिता है। उसका विवाह हुआ, वह दूल्हा बना, घोडे पर चढा, दुल्हन को घर लाकर पलग पर बिठाया, फिर स्वय भी पास बैठ गया और तब से बराबर बैठ रहा है लेकिन दार्शनिक बाते समझने वालो ही को मालूम है कि वह कँवारा है और सदा कँवारा रहेगा। उसका दिल न व्याहा जा सका और न कभी व्याहा जाएगा। वह न कभी दूल्हा बना, न घोडे पर चढा, न दुल्हन को लाया, न उसके संग उठा-बैठा। वह तो उसका पिता था, जिसने उसका विवाह तै किया—ऐरे-ग़ैरे नत्थू-खैरे की राय से। वह विद्रोह की ज्वाला मे झुलसता रहा लेकिन चूँ न कर सका, क्योकि वह जानता था कि उसके पिता के हाथ बहुत तगडे और जूते उससे भी तगडे हैं। इसलिए उसने उचित समझा कि वीरगति तो वह प्राप्त कर ही रहा है, जूते द्वारा वीरगति प्राप्त न करे तब भी कोई फर्क नही पडता। अतएव वह दूल्हा बना और सेहरे के पीछे ताटने

वालो ने ताड लिया कि एक और सेहरा बँधा है जो उसकी अभिलाषाओ के रक्त मे डूबे हुए आँसुओ से गूँथा गया है, जिसमे सुनाई न देने वाली सिसकियाँ पिरोई हुई है, जिसमे उसकी मसली हुई भावनाएँ और कुचली हुई प्रसन्नताये बँधी हुई हे। वह घोडे पर नही चढा, उसका शव माता-पिता की हठधर्मी के घोडे पर लटका दिया गया है। वह अपनी दुल्हन नही लाया वल्कि वह उसके माता-पिता की दुल्हन थी, उन्ही की व्याहता थी।

लेकिन एक आज्ञाकारी पुत्र की तरह, विना चीखे-चिल्लाए, वह दुल्हन के पास भी गया। उसका घूँघट भी हटाया। लेकिन वह यही सोचता रहा कि वह स्वय वहाँ नही हे, वरन् यह उसका पिता है जो उस दुल्हन का दूल्हा है। लेकिन चूँकि मेरी भाभी उस समय वडी न थी—मेरा मतलव है शारीरिक रूप से वह दुवली-पतली तथा नाजुक-सी छोकरी थी—इसलिए क्षणभर के लिए मेरे वडे भाई का शरीर उसमे व्याह गया। लेकिन वहुत शीघ्र ही वह दुवली-पतली स्त्री वढने लगी। मेरे भाई ने उसके ऊपर चढते हुए माँस को न रोका। उसकी जूती रोकती! वह उसकी थी ही कौन?

लेकिन वे वच्चे · उसके माता पिता के वच्चे, जिन्हे वह कभी भूले से भी न छूता, सख्या मे वढते रहे। नाके सुडसुडाते, मैली टाँगे उछालते, वावेला मचाते लेकिन मेरे भाई के दिल के दरवाजे वैसे ही वद रहे। वह वैसा ही कँवारा और वाँझ रहा। मेरी भाभी कुछ ऐसी समस्याओ मे फँसी कि उसने पलटकर भी भैया की ओर न देखा। जैसे कहती हो—मै पहले सास-सुसर की वहू हूँ, ननद की भाभी हूँ, वच्चो की माँ हूँ, नौकरो की मालकिन हूँ, मोहल्ले-टोले की वहू-वेटी हूँ, फिर यदि समय मिला तो तुम्हारी पत्नी भी वन जाऊँगी।

भैया को इस प्रकार की साझे की हाँडी वडी फीकी और वेमजा लगी। उसने अपना दिल सँभालकर उठाया, विखरे कण समेटे और तलाश मे निकल खडा हुआ। उसने कितनी ही दहलीजो पर उन चकनाचूर काँच के टुकडो को जाकर रखा लेकिन कोई मरहम, कोई दवा ऐसी न मिली जो उन टुकडो को जोड देती। इसलिए वह अव भी अपना कँवारा दिल लिये फिर रहा है, किसी दिलवाली की तलाश मे।

उसने दिलवालियो को वेश्याओ के कोठो पर ढूंढा, गदी गलियो मे घूमने वाली टकयाइयो मे तलाश किया। रेडियो-स्टेशनो मे गाने वाली सुन्दरियो और कलाकारो मे टटोला। अस्पतालो की नर्सो मे भी खोजा, फिल्मी परियो की गुफाओ मे भी भटका और एक्स्ट्रा लडकियो के झुरमुट मे भी झाँका। गाँव की उजड्ड गँवारियो, सडक कूटने वालियो, मछेरनो और भटियारियो के आगे भी हाथ फैलाया। ड्राइग-रूम मे उगने वाली और बॉल-रूम मे थिरकने वाली शिष्ट महिलाओ से भी भीख माँगी, लेकिन उसे कही दिल वाली न मिली। लाखो ही घूँघट पलट डाले लेकिन वही स्त्री, वही सास-सुसर की वहू, वही उसके वाल-वच्चो की माँ दिखाई दी।

मेरी भाभी सवसे वडी सही लेकिन अधिक बुद्धिमान कदापि नही। उसने पति को झूठे वहलावे कभी न दिये, जैसे पहली ही रात को वह समझ गई हो कि अपनी जान घिसाना मूर्खता है—इन तिलो मे तेल नही निकलेगा। काले-कलूटे, टेढे-मेढे बच्चे तो स्वय ही उसके पेट मे पनपते रहे और उसने उवकाइयाँ लेने और वेडौल वनने के अतिरिक्त कुछ भी न किया और ये वच्चे मेरे भैया से प्रतिशोध लेने का वडा सुन्दर साधन वने। जव नाक चाटते, नग-धडग वसूरते हुए केंचवे किसी महफिल-पार्टी मे मेरे भैया को छू देते हैं तो वह ऐसे उछल पडते है जैसे विच्छू ने काट लिया हो और जव कभी भूले से कोई मूर्ख मेहमान घर मे घिर जाता है तो सभ्यता तथा शिष्टता के शत्रु उसकी छाती पर मूँग दलकर उसको डूव मरने की प्रेरणाए दिया करते है।

इनके अतिरिक्त घर के मैले विछौने, मैले फर्श और छछलोटे वरतन एक स्वच्छता-प्रिय आत्मा को स्थायी मरघट मे सुलगाने के लिए पर्याप्त न पाकर मेरी भाभी ने समस्त कल्याणकारी विधियो तथा मधुर वोलो के सुनहले नुस्खे प्रयोग मे ला, आने-जाने या स्थायी रूप मे रहने वाले सम्वन्धियो का पत्ता भी काट दिया।

इसीलिए तो वेचारा दिलवालियो की तलाश मे तन-मन-धन लुटाता फिरता है। कभी-कभी उसे कोई प्रेयसी मिल भी जाती है। वह उसे लेकर एक नये वँगले मे एक नई आशा के भरोसे पर एक नया संसार वना डालता है। लेकिन

इस जीर्ण केन्द्र पर घूमने का अभ्यस्त यह ससार शीघ्र ही पुराना हो जाता है। वह प्रेयसी अवसर पाकर उसका फर्निचर वेचकर, मकान पगडी पर उठाकर, यहाँ तक कि उसके कपडे भी अपने नये प्रेमी के लिए लेकर भाग जाती है और वह फिर वैसा ही लडोरा और अनाथ रह जाता है।

वैसे भी उसे प्रेम रारा नही आता। ससार-भर के लोग क्या कुछ नही करते लेकिन घटियाँ किसी के गले मे नही लटक जाती। वह तो यदि भूले से किसी की ओर मुस्करा कर भी देख ले तो वह स्त्री तुरन्त गर्भवती हो जाती है और उसकी सेवा मे एक नया उपहार भेंट कर देती है जिसे वह बिल्ली के गू की तरह जगह-जगह छुपाता फिरता है। वह अपने वैध बच्चो से ज़रा नही शर्माता लेकिन उनकी दुर्वृत्तियो से उसकी इज्जत पर बट्टा लगने का भय है। वह बडा इज्जतदार है ना!

वह अपनी इस मुसीबत को ससार की सबसे बडी विपत्ति समझता है। जब उसके दिल की दुनियाँ उजाड पडी है तो लोगो को भूख, महँगाई और बेकारी जैसी तुच्छ बातो के बारे मे कुछ सोचने का क्या अधिकार है। दिल है तो सब कुछ है। आप समझेंगे कि वह कोई यौन-सम्बन्धी रोगी है, स्त्री का भूखा है। जी नही, इस अत्याचारी स्त्री के कारण तो उसे कई बार बडे भयकर ढग का अजीर्ण रोग भी हो चुका है। बात वास्तव मे यह है कि वह ऐसे वातावरण की उपज है जहाँ सासारिक दु खो को परलोक के सुखो की आड मे छुपाना सिखाया जाता है। जहाँ प्रत्येक शारीरिक त्रुटि का आरोप भाग्य के सिर और मानसिक पिपासा का ठेका प्रेयसी के जिम्मे। वह भाग्य के पीछे डडा लेकर पडा हुआ है। एक दिन भाग्य उसे कही दुबका हुआ मिल जायेगा और वह उसका सिर फोड डालेगा। फिर वह होगा और उसकी प्रेयसी। लेकिन उसे इतना भी नहीं मालूम कि उसका भाग्य उसकी पीठ पर बैठा है और उसकी चर्बी चढी आँखो को कभी नजर नही आयेगा।

और इन कडवे-कसैले माँ-बाप और जीर्ण व्यवस्था की छाया मे पौन दर्जन बच्चे परवान चढ रहे हैं। आने वाली पौद उग रही है और जीवन साचो मे ढल रहे हैं—किसी अज्ञात मज़िल तक घिसटने के लिए, ससार मे बट्टा तथा

निर्धनता की पाल-पोस करने के लिए।

यह मेरी दूसरी भाभी है। मेरे भाई की अनमोल दुल्हन, उसके भाग्य का चमकता-दमकता सूरज, मार्ग सुझाने वाली मशाल। मेरा भाई बहुत ही भाग्यशाली है। उसने एक निर्धन घर मे जन्म लिया। दिये के अधमरे प्रकाश मे पढ-पढकर एक दिन जब प्रकाशमान सितारे की तरह जगमगाने लगा तो एक बडी-सी मछली आई और उसे पूरे का पूरा निगल गई।

ज्योही उसने बी० ए० पास किया, नवाब घम्मन की कृपादृष्टि उस पर पड गई। न जाने किधर के रिश्ते-नाते जोडकर प्रोफेसरो के द्वारा काटा मारा और देखते ही देखते एक छोड हज़ार जान से उस पर आसक्त हो गये। फिर उसे अपनी सबसे चहेती बाँदी की सबसे लाडली बेटी बख्श दी। बाबा बहुतेरे फुदके लेकिन एक ओर तो थी नवाबजादी और इग्लैंड जाने का खर्चा और दूसरी ओर खूसट बाप और अपाहज माँ और बिन ब्याही बहनो की पलटन और अध-पढे भाइयो की सेना। प्रत्यक्ष है कि बाजी बडे कण्ठ वाली मछली के हाथ रही और शेष जोके मुँह देखती रह गईं। चट मँगनी पट ब्याह। माँ का समधिन बनने का चाव और बहनो के चोचले दिल के दिल मे रह गये और पूत पतगा बनकर सात समुदर पार उड गया।

माँ ने जी पर पत्थर रख लिया था कि बला से हड्डी नोची है तो दहेज ही से आँसू पुंछ जायेंगे। इतने सामान से पलटन के दो-चार सिपाही तो लेस हो ही जायेंगे। दूल्हा की सलामी से ही दो-तीन भाइयो की नाव पार उतर जायेगी। लेकिन सब अरमान, सारे हौसले फुर्र से उड गये जब नवाब की एक कोठी दुल्हन का मायका और दूसरी कोठी सुसराल बनी और वह एक कोठी से दूसरी कोठी को ब्याह दी गई।

इग्लैंड से लौटकर दूल्हा सुसराल चला गया और माता-पिता नये सिरे से दूसरा पौधा सीचने पर जुट गये। फिर किसी दिन उस पौधे के चिकने-चिकने पात किसी माली को नजर आ गये तो वह इसे भी इस घूरे से समेटकर अपने 'समर हाउस' मे ले जाकर रख देगा और माता-पिता एडियाँ रगडते-रगडते अंतिम मंजिल को जाकर पकड लेंगे।

अब यह पहला पौधा अपने सुसर की रियासत मे मुफ्तखोरो वाले किसी पद पर चौकडी मारे बैठा है। वेतन के अतिरिक्त मोटर, घोडागाडी, कोठी, बँगला, नौकर-चाकर और एक नग नवाबज़ादी उसे मिली हुई है। सुबह उठकर दरबार मे तीन सलाम झाड चुकने के बाद वह दिनभर पडा कोठी मे एठता रहता है। कभी-कभी उसे ऐसा लगता है जैसे उसका महत्व नसल बढाने के लिए इस्तेमाल किये जाने वाले साँड से अधिक नही जो थान पर बँधा जुगाली किये जा रहा है।

उसकी पत्नी अर्थात् नवाबजादी कभी उसके गदे घर मे पाँव न रखती लेकिन जब बूढे बाप ने दुनिया की जग से तग आकर हथियार डाल दिये तो वह अपने पूरे ताम-झाम के साथ दो घडी के लिए आई। उस समय बेचारे नवाबी जँवाई की लज्जावश बुरी हालत हो गई। जैसे गवर्नर, वायसराय की सवारी आ रही हो तो एक साफ-सी सडक चुनकर झडियाँ लगा दी जाती है ताकि वायसराय समझे कि पूरा देश ऐसा ही साफ और झडियो से सजा हुआ है, उसी प्रकार घर का सारा कूडा-कचरा नजरो से ओझल रख दिया गया। शव उठने से पूर्व ही नवाबजादी उठकर चल दी और साथ-साथ वह जँवाई भी।

लेकिन बडा भावुक दिल रखता है वह। सब-कुछ समझता है और हर समय उसके दिल पर बरफ के घूँसे लगा करते है। इसलिए वह शीघ्रातिशीघ्र उस वातावरण मे स्वय को समोने का प्रयत्न करता रहता है। और आत्म-विस्मृति के लिए शराब पीता है। तब वह सब-कुछ भूल जाता है। यह भी भूल जाता है कि सुहावनी ऋतु आ गई है और आस-पास की रियासतो के रगीले सैर और शिकार को आ-जा रहे हैं। उसकी पत्नी अन्य नवाबजादियो की तरह हिरनी बनकर चौकडियाँ भर रही है। वह स्वय तीन सलाम झाड रहा है। आरामदेह कमरे मे सिर-पैर से बेसुध पडा है। अब तो उसे अपनी जीवन-साथी की आँखो मे से गुज़रते हुए प्रश्न भी नही जगा सकते। वह यही तो कहती है कि "तुम्हारा मूल्य क्या है? मेरे माता-पिता की जल्दबाज़ी ने तुम्हे इस स्वर्ग मे ला डाला है, इसे बहुत जानो। जो यह न होता तो जूतियाँ चटखाते फिरते।"

ऐसे अवसर पर उसका जी चाहता है कि वह ससार को दोनो हाथो से उठाकर दे पटखे और……

लेकिन वह इस विचार को अपने मस्तक मे जड पकडने मे पहले ही उखाड फेंकता है। दुनिया जानती है कि वह इगलैंड से कोई डिगरी या डिपलोमा तो ला नहीं सका। उसके जाते ही भद्र महिला को दिल के दौरे पडने लगे और उसने रो-रोकर उसे वापस बुला लिया। इस बेचारे की हालत उस अधपकी रोटी जैसी है जो पकने से पूर्व ही तवे से फिसलकर घी मे आ गिरी हो। ऊपर से आलस्य और बेकारी की फफूंद ने उसे और भी अपव्ययी बना दिया है। वह एयर-कडीशन कमरो मे सो-सोकर अपनी पुरानी कच्ची खपरैल की याद मे काँपने लगा है। फ्लश का आदी होकर उसे गदे कच्चे सडास के विचारमात्र से बुखार चढता है। उसके भाग्य का नक्षत्र ऊँचाइयो पर टिमटिमा रहा है जिसे पकडने के लिए वह आवारा बगूले की तरह सिर पटख रहा है।

और जब वह बहुत थक जाता है तो क्रोध मे आकर ह्विस्की की मात्रा पैग मे दुगनी करके शातमयी जम्हाइयाँ लेने लगता है। यही उसका जीवन-सघर्ष है। नमक की खान मे जाकर वह नमक बन चुका है।

जब इन नमक की खानो पर फावडो की चोट पडेगी और इनके परखचे उडाकर रोटियो मे गूँध डाले जायेंगे तो इस विशेष नमक के टुकडे की रोटी नमकीन नही बल्कि किरकिरी होगी। फिर इस किरकिरी रोटी का कौर भी थूक दिया जायेगा।

मेरी एक और भाभी भी है। वह शिक्षित कहलाती है। उसे एक सफल पत्नी बनने की पूर्ण शिक्षा मिली है। वह सितार बजा सकती है। पेंटिंग कर सकती है। टैनिस खेलने, मोटर चलाने, और घोडे की सवारी मे प्रवीण है। बच्चे का पालन-पोषण आया से बडी अच्छी तरह से करवा सकती है। एक समय मे सौ डेढ सौ मेहमानो की आव-भगत कर सकती है—मेरा मतलब बैरा लोग को अपनी निगरानी मे लेकर। बडे लाड-प्यार से कान्वैंट मे उसकी शिक्षा-दीक्षा हुई और जब अठारह वर्ष की हुई तो मनस्वी माता-पिता ने उसकी सेवा मे योग्य उम्मीदवारो की एक रेजिमैंट को प्रस्तुत होने की आज्ञा दे दी।

उनमे आई सी एस भी थे। सुन्दर और शिक्षित भी थे। कुरूप और दो-धारी गायें भी। अशरफियो की थैलियो के साथ-साथ मुँह का मजा बदलने को कुछ लेखक और कवि भी थे। और फिर उससे कह दिया गया कि बेटी तेरे आँखे भी है और नाक भी, खूब ठोक-बजाकर एक बकरा छाट ले।

सो उसने खूब जाच-पडताल कर अपने ही पल्ले का एक भारी-भरकम चुन लिया और उस पर मोहित हो गई, जिसकी प्रशसा उसके माता-पिता ने बहुत बडे दहेज के रूप मे दी।

लोग इस हस-हसनी के जोडे को ईर्ष्या की नजरो से देखते है और वे भी प्रेम-सागर मे डूबकर एक दूसरे को "डार्लिग" कहते है।

दोनो पति-पत्नी एक ही साँचे के बने हुए है। एकसा उनका स्वभाव तथा पसद नापसद है। अर्थात् हर बात एकसी है। दोनो एक ही क्लब के मैम्बर है, दोनो एक ही सोसाइटी के चहेते पात्र—एक ही थैली के चट्टे-बट्टे है। यही कारण है कि उन्हे एक-दूसरे से इतनी घोर घृणा है। वे महीनो एक-दूसरे की शक्ल नही देखते, अवकाश ही नही मिलता।

पति का एक दूसरे उच्च अधिकारी की पत्नी से विख्यात प्रकार का प्रेम चल रहा है और पत्नी को उनके एक सहयोगी मे दिलचस्पी है जिसकी पत्नी अपनी सहेली के पति से अटकी हुई है। यह सहेली एक सार्जेट के प्रेम-जाल मे गिरफ्तार है जिसकी अपनी पत्नी एक बोझल से सेठ के पास रहती है जिसकी पुरानी चेचक मारी पत्नी मैनेजर से उलझी हुई है जो एग्लो-इण्डियन लड़कियो के चक्कर मे पडा हुआ है, जो मिलिट्री के तरुण.... 'ऊँह, छोडिये भी; यो टाग अडाने मे क्या लाभ! मेरे बाल नाई के पास, नाई का उस्तरा मेरे पास, मेरा उस्तरा घसियारे के पास। इस प्रकार यह जजीर एक कडी के मुँह मे दूसरे की पूँछ लिए दुनियाँ के गिर्द चक्कर काट रही है। मेरी भाभी भी इस जजीर की एक कडी है और वहा तब तक लटकी रहेगी जब तक जजीर इस भूमण्डल को जकडे रहेगी।

और मेरी तीसरी भाभी तो जग-दुल्हन है। वह उस सडक के समान है जिस पर सब चलते है। उस छाँव की तरह है जो हर थके-मादे को अपनी

गोद में थपकिया देकर आत्मविसर्जन के साधन जुटाती है। वह साझे की हाडी है जो अंत मे चौराहे में फूटेगी। वे, जिनमे मुंह का स्वाद बदलने के लिए अपने खाद्य-भण्डार मे माल-मसाला रखने की सामर्थ्य नही, वे इस प्रीति-भोज से लाभ उठाते है।

वह रोज शाम को नये दूल्हा की दुल्हन बनती है और सुबह को विधवा हो जाती है। वह अपनी उन बहनो से कम भाग्यवान है जो भगवान की कृपा से एक रात मे दस-बारह बार दुल्हन बनती है। दस बराते चढती है और दस बार राड होती है। कुछ लोग नक-चढी पटोसिनो की तरह उस पर टेढी-टेढी नज़रें डालते है। उनका खयाल है कि वह कुछ नीच है। कोई पाप कर रही है।

लेकिन स्वय उसकी समझ मे नहीं आता कि वह कौन-सा पाप कर रही है। ससार मे क्या नही बिकता और क्या नही खरीदा जाता ? जो लोग उसे शरीर बेचता देखकर इतना बिलबिला उठते है, क्या वे लोग पैसे के बदले में अपना मस्तक नही बेचते ? अपनी रचनाओ का सौदा नहीं करते, अपनी आत्मा नही बेचते ? मासूमो का लहू भी तो आटे मे गुध कर बिकता है। कारीगर का गाढा पसीना भी तो कपडे के थान रग कर बेचा जाता है। एक क्लर्क का पूरा जीवन चालीस रुपये मासिक पर बिक जाता है, एक अध्यापक का आयु-भर का सौदा इतने ही दामो पर हो जाता है। तो फिर इस पार्थिव शरीर के लिए इतनी ले-दे क्यो ?

और उसका पिता काले बाज़ार का सम्मानित स्तम्भ था। उसका भाई अवैध साधनो से अवैध लोगो तक पहुँचता था। उसका दूसरा भाई पुलिस का जिम्मेदार पात्र होते हुए भी गैर जिम्मेदार हरकतें किया करता था और दुनिया इन सब को जानते हुए भी उन्हे छाती से लगाये बैठी है। वह भी तो आखिर उन्ही में से एक है। जहां आवे का आवा ही टेढा है, वहा इसकी भी खपत होनी चाहिये।

वैसे वह कोई खानगी वेश्या नही है। इसमे उसका क्या दोष, वह कला की सेवा करने फिल्म-जगत् मे गई और वहाँ से लोग न जाने कब

और कैसे उसे धीरे-धीरे इस कोने मे खैंच लाये। उसने यही तो किया कि फिल्म-स्टार बनने के लिए हर दहलीज पर माथा टिकाया। फाइनैंशर से लेकर एक्स्ट्रा तक के घर की खाक छानते-छानते वह स्वय छलनी बन गई। इस गडबड मे वह न जाने कौन-सा रिहर्सल गलत कर गई जो वह फिल्म-आकाश का चमकीला सितारा बनने की बजाय यहाँ सडक के किनारे टिमटिमाने लगी।

यह नही कि उसने विवाह न किया हो। उसने इस गली से गुज़र कर भी देख लिया। लेकिन विवाह के कुछ ही महीने बाद उसका पति, नियमानुसार इधर-उधर जाने लगा। वह शायद तगी-तुर्शी मे भी गुज़ारा कर लेती लेकिन वह तो जितने पैर सिकोडती गई, उतनी ही वह चादर कतरता गया।

सिवाय पत्नी बनने के उसे कोई कला न आती थी। वह चाहती तो तीस-पैंतीस की अध्यापिका बन सकती थी लेकिन इतने पैसो से तो उसे शेम्पू का खर्च चलाने की भी आदत न थी। या अस्पताल मे नर्स बनने का प्रयत्न करती और साठ रुपयो के बदले मे रक्त, पीप, खासी, बुखार, कै, दस्त मे कलाबाजियाँ खाती लेकिन वह अच्छी तरह जानती थी कि इस प्रकार की मूर्खताओ मे जान खपाने का शौक उसकी प्रकृति का अग नही है। विवश हो उसे फिल्म-जगत् का दरवाज़ा खटखटाना पडा।

भारत मे रगीन फिलम बनते तो उसका श्वेत रग शायद कुछ बिजली गिरा सकता लेकिन इन काले-श्वेत फिलमो मे उसकी चौडी-चकली नाक और चुधी आँखो ने उसकी लुटिया डुबो दी। दो-चार थकी-हारी फिलमे बनाकर वह फाइनैंशर की गोद से गिरकर डायरेक्टर के पास आई। वहाँ से फिसली तो हीरो और साइड-हीरो के हत्थे चढी। उसके बाद एक कैमरामैन ने लपका। वहाँ से भी टपकी तो गुमनामी के कुए मे खिसक गई और जब आँख खुली तो उसने स्वय को इस बाज़ार मे लटकते पाया। लेकिन अब वह बडी समझदार हो गई है। अपने ग्राहको को बडी चतुराई से नापती-तोलती है। यदि किसी दिन कोई मोटी मुर्गी, कुरूप पत्नी और गदे बच्चो की हफ़ाँली हाथ आगई तो वह उसे अपना स्थायी ग्राहक बना डालेगी और राज्य से इस भद्रता

का प्रमाणपत्र ले काले बाज़ार के भावी स्तभ स्थापित करना प्रारभ कर देगी।

ये हैं आदम और हव्वा के उत्तराधिकारी। निर्माण के ध्वजवाहक और जगत की गाडी को चलाने वाले जो बजाय चलाने के उसे लात-घूसो से आगे-पीछे ढकेल रहे है।

लेकिन ठहरिये, मेरी एक और भाभी भी है, पर वह न जाने कहाँ है। मैंने एक-आध वार केवल उसकी झलक देखी है। कभी उसके माथे पर ढलके हुए आँचल को देखा है लेकिन उसे पताका बनते नही देखा। उसके दूध ऐसे माथे पर परिश्रम की बिंदिया देखी है। इस बिंदिया में ऊदे, पीले, नीले सब रग है लेकिन सुहाग की सुर्खी की झलक नज़र नही आती। मैंने उसकी सुन्दर उगलियाँ तो देखी हे लेकिन उन्हे उलझे केशो को सुलझाते नही देखा। उसके सावली सध्या को शर्माने वाले केशो की घटाये देखी हे लेकिन उन्हे किसी के थके हुए कधो पर बिखरते नही देखा। मैंने उसका चिकना, मैंदे की लुई-ऐसा, पेट तो देखा है लेकिन उसमे अभी आशा के पौधे को फूटते नही देखा। मैंने उसकी चितवने देखी है लेकिन उन्हे खडग बनते नही देखा।

सुनते है सुनहले देशो मे वह आन बसी हे और माथे की बिंदिया अमर सुहाग का सेंदूर बन चुकी हे '' उसके महकते केश चौडे-चकले कधो पर बिखर रहे है उसकी पतली-पतली उगलियाँ उलझे केश ही नही सुलझा रही बल्कि बदूको मे कारतूस भर रही है और वह तलवारो की धार पर अपनी तीखी चितवनो से सान रख रही हे।

मेरा इरादा हे कि एक दिन मैं भी किसी सुनहरी धरती पर जाऊँगी और उन सुहागनो के माथे का थोडा-सा सेंदूर माग लाऊँगी और उसे अपनी माग मे रचा लूंगी।

और फिर वह मेरी चहेती भाभी मेरे देस के कोने-कोने मे आ बसेगी। यदि इन मान-ननदो के डर से मेरी भाभी बनकर न आ सकी तो मैं पूरे विश्वास से कह सकती हूँ कि वह मेरी वहू बनकर तो अवश्य आएगी।

गुलाम अब्बास



१७ नवम्बर १९०९ को अमृतसर मेरा जन्म हुआ। शिक्षा-दीक्षा लाहौर मे हुई। चार लड़कियो और एक लडके का बाप हूँ।

तेरह-चौदह वर्ष की आयु मे लिखना शुरू कर दिया। पहले बच्चो के लिए कहानियाँ और ड्रामे लिखे, जिन्हे पंजाब प्रकाशन विभाग ने १९२७ मे प्रकाशित किया। फिर साहित्यिक पत्रिकाओ ('हजारदास्तान', 'हुमायूँ,' 'नैरंगे-ख़याल,' 'मख़जन' आदि) मे बाकायदा कहानियाँ लिखीं। १९२८ मे 'फूल' का सम्पादक और 'तहज़ीबे-निसवा' का उप-सम्पादक नियत हुआ। यह सिलसिला नौ वर्ष तक चलता रहा। बाद मे, अर्थात् १९३७ मे, आल-इण्डिया रेडियो की उर्दू व हिन्दी पत्रिकाओं 'आवाज' और 'सारंग' का सम्पादक बना। भारत विभाजन के बाद १९४८ मे 'रेडियो पाकिस्तान' के लिए 'आहंग' निकाला। १९४९ में बी० बी० सी० ने अपने पाकिस्तानी सैक्शन के लिए मुझे बुला भेजा। तीन वर्ष लन्दन मे रहा। १९५२ मे वापस आया। उस समय से 'रेडियो पाकिस्तान' के प्रकाशन विभाग का सम्पादक हूँ।

मेरी दो एक उल्लेखनीय पुस्तकें ये है :

'अलहमरा' १९३० मे लिखी। वास्तव मे यह वाशिगटन इर्विंग की कहानियो का स्वतन्त्र अनुवाद है। 'जज़ीरा-ए-सुखनवरां' एक सक्षिप्त व्यगात्मक उपन्यास है जिसका मौलिक विषय फ्रांसीसी भाषा से लिया गया है। 'आनदी' कहानियो का पहला सग्रह है। इस पर पाकिस्तान सरकार ने १९४८ की सर्वोत्तम साहित्यिक रचना के तौर पर पुरस्कार दिया।

पता—७—एच० (ब्लाक ६), पी० ई० सी० एच० सोसाइटी, नियर ग्रीन नर्सरी, करावी—४

गुलाम अब्बास ने बहुत कम कहानियाँ लिखी हैं, लेकिन जो लिखी हैं खूब लिखी हैं। प्रसिद्ध लेखक पितरस के कथनानुसार उसकी कहानियाँ समस्त उर्दू कहानियो से निराली है और उनमे से कुछेक तो ऐसी हैं कि यदि उनका अनुवाद योरुप की किसी भाषा मे हो जाये तो अन्य देशो के लोग भी उनसे आनन्दित हों।

और इसमे किसी सन्देह की गुन्जायश नही है कि उसकी लगभग प्रत्येक कहानी तकनीक और विषय-वस्तु मे अपना उदाहरण आप होती है और सूक्ष्म चित्रण मे तो वह उर्दू के उन कहानीकारो मे से एक है जिनका नाम उँगलियों पर नहीं बल्कि एक उँगली पर गिना जा सकता है। जीवन की विभिन्न समस्याओ की तह मे उतरने और एक अनुभवी गोताखोर की तरह बड़ी सफाई से आवश्यक और हितकर वस्तु बाहर निकाल लाने मे गुलाम अब्बास को जो क्षमता प्राप्त है, उसकी जितनी प्रशसा की जाय कम है। अनुभव तथा निरीक्षण द्वारा उसने ऐसी दृष्टि पाई है कि उसकी कहानियो के अध्ययन से इस बात का तीव्र अनुभव होता है कि हमारे आस-पास बहुत सी ऐसी बातें थीं जो गुलाम अब्बास के बिना आज तक नजरो से ओझल रहीं और जिनके कारण अब जीवन के बहुत से अँधेरे कोने रगारग हो उठे हैं।

काश ! वह कुछ तेजी से कथा-साहित्य की रचना करके उर्दू साहित्य को मालामाल करे !

आनन्दी

म्युनिसिपल कमेटी की बैठक ज़ोरो पर थी। हॉल खचाखच भरा हुआ था और पुरानी परिपाटी के विपरीत आज एक भी सदस्य अनुपस्थित नही था। विचाराधीन समस्या यह थी कि वेश्याओ को शहर से बाहर निकाल दिया जाय क्योकि उनकी मौजूदगी मानवता, शिष्टता और सभ्यता के स्वच्छ दामन पर काला धब्बा है।

कमेटी के एक भारी-भरकम सदस्य, जो देश तथा जाति के सच्चे हितैषी तथा शुभचिंतक समझे जाते थे, बडा युक्तियुक्त भाषण दे रहे थे -

"...और फिर सज्जनो! आप यह भी सोचिये कि उनका ठिकाना शहर के एक ऐसे भाग मे है जो न केवल शहर के बीचोबीच राजपथ है बल्कि शहर का सब से बडा व्यापार-केन्द्र भी है। अतएव हर भद्र-पुरुष को विवश हो उसी बाज़ार से होकर गुज़रना पडता है। इसके अतिरिक्त हम सब की बहू-बेटियाँ इस बाज़ार के व्यापारिक महत्व के कारण यहाँ आने और आवश्यक वस्तुएँ खरीदने पर मजबूर हैं। महानुभावो! जब ये भद्र महिलाएँ इन सतीत्व बेचने वाली, अर्धनग्न वेश्याओं के बनाव-शृंगार को देखती हैं तो स्वाभाविक रूप से उनके मन मे भी बनाव-शृंगार की नई-नई उमगें और अभिलाषाएँ उत्पन्न होती हैं और वे अपने निर्धन पतियो से तरह-तरह के पाउडरों, लेवेंडरो,

भडकीली साडियो और मूल्यवान आभूषणो की माँग करने लगती है। परिणाम यह होता है कि उनकी स्वर्ग जैसी घर-गिरस्ती सदा के लिए नरक के समान बन जाती है···

"···और सज्जनो ! फिर आप यह भी सोचिये कि हमारे देश के नौनिहाल जो पाठशालाओ मे विद्या ग्रहण कर रहे हैं और जिनसे देश की उन्नति की आशाएँ सम्बन्धित है—और नि सन्देह इन्ही के सिर एक-न-एक दिन देश की नाव को भँवर से निकालने का सेहरा बधेगा—इन्हे भी सुबह-शाम उसी बाजार से होकर आना-जाना पडता है। ये चरित्रहीन स्त्रियाँ जो हर समय सोलह शृगार किये हर राहगीर पर अपने नैन-बाण बरसाती हैं और उनका आचार भ्रष्ट करती हैं, क्या उन्हे देखकर हमारे भोले-भाले, अनुभवहीन, जवानी के नशे मे मस्त, अच्छाई-बुराई से बेपरवाह देश तथा जाति के सुपुत्र अपने विचारो तथा अपने उच्च जीवन-चरित्र को पाप की घिनौनी प्रेरणाओ से सुरक्षित रख सकते हैं ? सज्जनो ! क्या उनका रमणीय सौंदर्य हमारे बच्चो को सही मार्ग से भटका कर उनके दिलो मे पाप के रहस्यमय आनन्दो की कामना उत्पन्न कर के एक बेचैनी, एक विकलता, एक उथल-पुथल न मचा देता होगा · "

इस अवसर पर एक सदस्य, जो किसी समय अध्यापक रह चुके थे, और आकडो मे विशेष दिलचस्पी रखते थे, बोल उठे

"सज्जनो ! याद रहे कि परीक्षाओ मे असफल रहने वाले विद्यार्थियो का अनुपात पिछले पाँच वर्ष की अपेक्षा ड्योढा हो गया है।"

एक सदस्य ने, जो चश्मा लगाए हुए थे और एक साप्ताहिक पत्र के अवैतनिक सम्पादक थे, भाषण देते हुए कहा—"सज्जनो ! हमारे शहर मे दिन-प्रतिदिन लज्जा, सुशीलता, पौरुष तथा संयम-सदाचार उठते जा रहे हैं और इनकी जगह निर्लज्जता, बदमाशी, नपुसकता, चोरी और उठाईगीरी का बोलबाला होता जा रहा है। नशो का प्रयोग बहुत बढ गया है। हत्या, मारधाड, आत्महत्या और दीवाले निकलने की दुर्घटनाएँ बढती जा रही हैं। इसका केवल-मात्र कारण इन वेश्याओ का अपवित्र अस्तित्व है, क्योकि हमारे भोले-भाले नागरिक इनकी नजर के तीरो से घायल हो अपने होश खो बैठते हैं और

उन तक पहुँचने की अधिक से अधिक कीमत अदा करने के लिए हर उचित-अनुचित ढग से पैसा प्राप्त करते हैं। कभी-कभी वे इस कोशिश मे मानवता की सीमा भी लाघ जाते हैं और घोर अपराध कर बैठते हैं। परिणामस्वरूप या तो अपने बहुमूल्य जीवन मे हाथ धो बैठते हैं या जेलखाने मे पडे सडते हैं।"

एक पैन्शन पाए हुए बूढे सदस्य जो एक विशाल कुटुम्ब के अभिभावक थे और ससार की ऊँच-नीच देख चुके थे और अब जीवन-सघर्ष से थककर शेप आयु सुस्ताने और अपने पुत्र-पौत्रो को अपनी छत्र-छाया मे फलते-फूलते देखने के इच्छुक थे, भाषण देने उठे। उनकी आवाज काँप रही थी और स्वर मे फरियाद की झलक थी। बोले—"सज्जनो! रात-रात भर इन लोगो के तबले की थाप, इनकी गले बाजियाँ—इनके चाहने वालो की धीगामुश्ती, गाली-गलौच, शोर-गुल, हा, हा, हा, हो, हो, हो, सुन-सुनकर आस-पास के रहने वाले शरीफ लोगो के कान पक गए हैं। जान मुसीबत मे फँस गई है। न दिन को चैन, न रात को आराम। इसके अतिरिक्त इनके सम्पर्क से हमारी बहू-बेटियो के आचार पर जो बुरा प्रभाव पडता है उसका अनुमान सन्तान रखने वाला प्रत्येक व्यक्ति लगा सकता है ··· ।"

अन्तिम वाक्य कहते-कहते उनका कण्ठ भर आया और वे इससे अधिक कुछ न कह सके। सब सदस्यो को उनसे सहानुभूति थी क्योंकि दुर्भाग्यवश उनका मकान उस बाजार के ठीक बीच मे था।

उनके बाद एक सदस्य ने, जो प्राचीन सभ्यता के प्रशसक थे और रूढियो को अपनी सतान से भी प्रिय समझते थे, भाषण देते हुए कहा .

"सज्जनो! बाहर से जो पर्यटक इस ऐतिहासिक नगर को देखने आते हैं, जब वे इस बाजार मे से गुजरते हैं और इस सम्बन्ध मे पूछते हैं तो विश्वास कीजिये कि हम पर घडो पानी पड जाता है।"

अब प्रधान महोदय भाषण देने उठे। यद्यपि कद नाटा और हाथ-पाँव छोटे-छोटे थे लेकिन सिर बडा था जिसके कारण बडे प्रतिभावान व्यक्ति मालूम होते थे। स्वर मे अत्यन्त गम्भीरता थी। बोले—"सज्जनो! मैं इस बात पर बिल्कुल आपसे सहमत हूँ कि इन लोगो का अस्तित्व हमारे नगर तथा हमारी

सभ्यता एव सस्कृति के लिए अत्यन्त हानिकारक है। लेकिन कठिनाई यह है कि किया क्या जाय ? यदि इन लोगो को विवश किया जाय कि अपना यह जलील पेशा छोड दे तो प्रश्न उठता है कि वे लोग खाएँगे क्या ?"

एक सज्जन बोले . "ये औरते शादी क्यो नही कर लेती ?"

इस पर एक कहकहा लगा और हॉल के गम्भीर वातावरण मे ज़रा देर के लिए रौनक-सी आ गई। जव पुन. चुप्पी हुई तो सभापति महोदय बोले, "सज्जनो ! यह प्रस्ताव कई वार इन लोगो के सामने रखा जा चुका है। इनकी ओर से हमेशा यह उत्तर आता है कि समृद्ध लोग सम्मानित कुल की मान-मर्यादा के खयाल से उन्हे अपने घरो मे घुसने नही देंगे और निर्धन और निचले वर्ग के लोगो को जो केवल उनके धन के लिए उनसे शादी करने पर तैयार होंगे, उन्हे वे स्वय मुँह नही लगाएँगी · "

इस पर एक सदस्य बोले "कमेटी को इनके निजी मामलो मे पडने की ज़रूरत नही। कमेटी के सामने तो यह समस्या है कि ये लोग चाहे कुएँ मे जाएँ, लेकिन यह नगर खाली कर दे।"

प्रधान ने कहा, "सज्जनो ! यह भी आसान काम नही है। उनकी सख्या दस-बीस नही, सैंकडो तक पहुँचती है और फिर उनमे से बहुत-सी औरतो के अपने मकान हैं।"

इस समस्या पर म्युनिसिपल कमेटी मे महीने-भर तक बहस होती रही और अन्त मे सर्व-सम्मति से यह बात तय हुई कि वेश्याओ के निजी मकानो को खरीद लेना चाहिए और उन्हे रहने के लिए शहर से काफी दूर कोई अलग-थलग इलाका दे देना चाहिए। उन औरतो ने कमेटी के इस फैसले का बहुत विरोध किया। कुछेक ने अवज्ञा कर भारी जुर्माने और कैदें भुगती, लेकिन कमेटी के फैसले के आगे उनकी एक न चली और विवश हो उन्हे चुप रह जाना पडा।

इसके बाद कुछ समय तक उन वेश्याओ के मकानो की सूचियाँ और नक्शे तैयार होते रहे और मकानो के ग्राहक पैदा किए जाते रहे। अधिकतर मकानो को नीलाम द्वारा वेचने का फैसला हुआ। उन औरतो को छ महीने तक शहर

मे अपने पुराने मकानो मे ही रहने की आज्ञा दे दी गई ताकि इस बीच मे वे उस इलाके मे जो उनके लिए तय किया गया था, मकान आदि बनवा सके।

उन औरतो के लिए जो इलाका चुना गया, वह शहर से छ कोस दूर था। पाँच कोस तक तो पक्की सडक जाती थी और उससे आगे कोस-भर का रास्ता कच्चा था। किसी ज़माने मे वहाँ कोई बस्ती होगी लेकिन अब तो खडहरो के सिवा कुछ न रहा था जिनमे साँपो और चमगादडो का निवास था और दिन-दहाडे उल्लू बोलते थे। इस इलाके के आस-पास कच्चे घरौदो वाले कई छोटे-छोटे गाँव थे। किसी का फासला यहाँ से दो-ढाई मील से कम न था। इन गाँवो के बसने वाले किसान दिन के वक्त खेती-बाडी करते या यो ही फिरते-फिराते उधर निकल आते, अन्यथा आमतौर पर उस उजाड वीराने मे मनुज्य की सूरत नज़र न आती थी। कभी-कभी दिन के प्रकाश ही मे गीदड उस इलाके मे फिरते देखे गये थे।

पाँच सौ से कुछ ऊपर वेश्याओ मे से केवल चौदह ऐसी थी जो अपने चाहने वालो की चाहत या किसी अन्य कारण से शहर के निकट स्वतत्र रूप मे रहने पर विवश थी और अपने धनाढ्य चाहने वालो की स्थायी आर्थिक सहायता के भरोसे—'मरता क्या न करता' के अनुसार—उस इलाके मे रहने पर राज़ी हो गई थी, अन्यथा शेष औरतो ने सोच रखा था कि वे या तो उसी शहर के होटलो को आबाद करेगी, या शरीफ औरतो का रूप भरकर शहर के शरीफ मोहल्लो मे जा छुपेगी, या फिर उस शहर ही को छोडकर किसी और नगर मे जा बसेंगी।

ये चौदह औरते अच्छी-खासी मालदार थी। इस पर शहर मे उनके अपने मकान थे जिनके दाम अच्छे मिल गये थे और इस इलाके मे ज़मीन का मूल्य नाम मात्र था और सबसे बढकर यह कि उनके मिलने-जुलने वाले जी-जान से उनकी सहायता करने को तैयार थे। अत उन्होंने उस इलाके मे जी खोलकर बडे-बडे आलीशान मकान बनवाने की ठान ली। एक ऊँचा और समतल स्थान जो टूटी-फूटी कब्रो से हटकर था, चुना गया। ज़मीन साफ कराई गई और अपने काम मे निपुण नक्शा-नवीसो से मकानो के नक्शे बनवाये गये और कुछ

ही दिनो मे काम शुरू हो गया।

दिन भर ईंट, मिट्टी, चूना, शहतीर, गार्डर और अन्य इमारती सामान लारियो, छकडो, खच्चरो, गधो और आदमियो पर लदकर आता और मुन्शी साहव हिसाव-किताव की कापियाँ वगलो मे दवाए उन्हे गिनवाते और कापियो मे दर्ज करते। इमारत का इन्चार्ज राजगीरो को काम के वारे मे हिदायते देता। राजगीर मज़दूरो को डाँटते-डपटते। मजदूर इधर-उधर भागते फिरते, मज़दूरनियो को चिल्ला-चिल्लाकर पुकारते और अपने साथ काम करने के लिए बुलाते। अर्थात् दिनभर एक शोर, एक हगामा मचा रहता और सारा दिन आसपास के गाँवो के देहाती अपने खेतो मे और देहातने अपने घरो मे हवा के झोको के साथ दूर से आती हुई खट-खट की धीमी आवाजें सुनती रहती।

इस बस्ती के खडहरो मे एक जगह मस्जिद के चिह्न थे और उसके पास ही एक कुआँ था जो वद पडा था। राजगीरो और मजदूरो ने कुछ तो पानी प्राप्त करने, कुछ वैठकर दम लेने और कुछ पुण्य कमाने और अपने नमाजी भाइयो की सहूलियत के लिए सवसे पहले उसकी मरम्मत की। चूंकि यह लाभदायक तथा पुण्य कार्य था इसलिए किसी ने आक्षेप नही किया। अत दो-तीन दिन मे ही मस्जिद तैयार हो गई।

दिन के वारह वजे जैसे ही खाना खाने की छुट्टी होती, दो ढाई सौ राजगीर मज़दूर, इमारतो के इन्चार्ज, मुन्शी और उन वेश्याओ के सम्वन्धी या कर्मचारी जो मकानों के निर्माण-कार्य की निगरानी पर नियत थे, उस मस्जिद के आस-पास एकत्रित हो जाते और अच्छा-खासा मेला-सा लग जाता।

एक दिन एक देहाती वुढिया जो पास के किसी गाँव मे रहती थी, उस वस्ती की खवर सुनकर आ गई। उसके साथ एक छोटा-सा लडका था। दोनो ने मस्जिद के निकट एक पेड के नीचे घटिया सिग्रेट, वीडी, चने और गुड की वनी हुई मिठाइयो का खोमचा लगा दिया। वुढिया को आए अभी दो दिन भी न हुए थे कि एक वूढा किसान कही से एक मटका उठा लाया और कुएँ के पास ईंटो का एक छोटा-सा चवूतरा वनाकर पैसे के दो-दो शक्कर के शर्वत के गिलास वेचने लगा। एक कुंजडे को जो खवर हुई तो वह एक टोकरे मे खरवूजे भर लाया

और खोमचे वाली बुढिया के पास बैठकर "ले लो खरबूजे, शहद से मीठे खरबूजे" की हाँक लगाने लगा। एक व्यक्ति ने क्या किया कि कुछ माल पका, देगची मे रख, खोमचे मे लगा, थोडी-सी रोटियाँ, मिट्टी के दो-तीन प्याले और टीन का एक गिलास लेकर आगया और उस बस्ती के कर्मचारियो को जगल मे घर की हड्डियो का मजा चखाने लगा।

सुबह-शाम की नमाज़ के समय इमारतो के इन्चार्ज, मुन्शी, राजगीर और अन्य लोग मजदूरो से कुएँ से पानी निकलवा-निकलवाकर 'वुज़ू' करते नज़र आते। एक व्यक्ति मस्जिद मे जाकर अज़ान देता। फिर एक को अमाम बनाया जाता और दूसरे लोग उसके पीछे खडे होकर नमाज़ पढते। किसी गाँव मे एक मुल्ला के कान मे जो यह भनक पडी कि फलाँ मस्जिद मे अमाम की ज़रूरत है तो वह दूसरे ही दिन सवेरे सब्ज जुज़दान (वस्ता) मे कुरान शरीफ, पजसूरा, रहल और मसले-ममायल की कुछ छोटी-मोटी पुस्तिकाएँ बाँध आ मौजूद हुआ और उस मस्जिद की अमामत बाकायदा तौर पर उसे सौंप दी गई।

प्रतिदिन तीसरे पहर गाँव का एक कबाबी सिर पर अपने सामान का टोकरा उठाए आ जाता और खोमचे वाली बुढिया के पास ज़मीन पर चूल्हा बना कबाब, कलेजी, दिल और गुर्दे सीखो पर चढा बस्ती वालो के हाथ बेचता। एक भटियारिन ने जो यह हाल देखा तो अपने पति को साथ ले मस्जिद के सामने मैदान मे धूप से बचने के लिए फूस का एक छप्पर डाल तन्दूर गरम करने लगी। कभी-कभी एक नौजवान देहाती नाई फटा-पुराना झोला गले मे डाले जूती की ठोकर से रास्ते के रोडो को लुढकाता इधर-उधर गश्त करता देखने मे आ जाता।

इन वेश्याओ के मकानो के निर्माण की निगरानी उनके सम्बन्धी या कर्मचारी तो करते ही थे, किसी-किसी दिन दोपहर के खाने से निबटकर अपने चाहने वालो के साथ वे स्वयं भी अपने-अपने मकानो को बनता देखने आ जाती और सूर्यास्त से पहले न जाती। इस अवसर पर भिखमंगो की टोलियो की टोलियाँ न जाने कहाँ से आ जाती और जब तक भीख न ले लेती

अपने आशीर्वादो से बराबर शोर मचाती रहती और उन्हे बात तक न करने देती। कभी-कभी शहर के लुच्चे-लफगे शहर से पैदल चलकर वेश्याओ की इस नई बस्ती की सैर करने आ जाते और यदि उस दिन वेश्याएँ भी आई होती तो जैसे उनकी पाँचो घी मे हो जाती। वे उनसे दूर हटकर उनके इर्दगिर्द चक्कर लगाते रहते। वाक्य कसते, बेतुके कहकहे लगाते, अजीब-अजीब शक्लें बनाते और ऊटपटाँग हरकतें करते। उस दिन कबाबी की खूब बिक्री होती।

इस इलाके मे जहाँ पहिले गहरा सन्नाटा छाया रहता था अब चारो ओर चहल-पहल और गहमा-गहमी नजर आने लगी। शुरू-शुरू मे इस इलाके की वीरानी के कारण उन वेश्याओ को यहाँ आकर रहने के खयाल से जो घबराहट होती थी, वह बडी हद तक जाती रही थी और अब वह हर बार खुश-खुश अपने मकानो की सजावट और अपने प्रिय रगो के बारे मे राजगीरो को हिदायतें दे जाती थी।

बस्ती मे एक जगह एक टूटा-फूटा मजार था जो अवश्य ही किसी बुजुर्ग का होगा। ये मकान आधे से अधिक बन चुके तो एक सुबह बस्ती के राजगीरो और मजदूरो ने देखा कि मजार के पास धुआँ उठ रहा है और एक लाल-लाल आँखो वाला लम्बा तडगा मस्त फकीर लगोट बाँधे सिर मुडाए उस मजार के इर्द-गिर्द फिर रहा है और ककर-पत्थर उठा-उठाकर परे फेंक रहा है। दोपहर को वह फकीर एक घडा लेकर कुएँ पर आया और पानी भर-भरकर मजार पर ले जाने और उसे धोने लगा। एक बार आया तो कुएँ पर दो-तीन राज मज-दूर खड़े थे। उन्मत्त-सा हो वह उनसे कहने लगा—"जानते हो वह किसका मजार है? कडक शाह पीर बादशाह का! मेरे बाप दादा इसके मजावर (रक्षक थे)।" इसके बाद उसने हँस-हँसकर और आँखो मे आँसू भर-भरकर पीर कडक शाह के कुछ तेजस्वितापूर्ण चमत्कार भी उन राज-मजदूरो को सुनाए।

शाम को यह फकीर कही से माग-ताग कर मिट्टी के दो दिए और सरसो का तेल ले आया और पीर कडक शाह की कब्र के सिरहाने और पैताने दिए जला

दिये। रात के पिछले पहर कभी-कभी उस मजार से 'अल्ला-हू' का मस्त नारा सुनाई दे जाता।

छः महीने गुजरने न पाए थे कि ये चौदह मकान बनकर तैयार हो गए। ये सब के सब दो-मंज़िला और लगभग एक जैसी ही बनावट के थे। सात एक ओर और सात दूसरी ओर। बीच में चौड़ी-चकली सड़क थी। हर मकान के नीचे चार-चार दुकानें थीं। मकान की ऊपर की मंजिल में सड़क की ओर विशाल बरामदा था। उसके आगे बैठने के लिए नाव की आकृति की रौंस बनाई गई थी जिसके दोनों सिरों पर या तो संगमरमर के मोर नृत्य करते हुए बनाये गए थे या जलपरियों की मूर्तियाँ तराशी गई थीं, जिनका आधा धड़ मछली का और आधा औरत का था। बरामदे के पीछे जो बड़ा कमरा बैठने के लिये था उसमें संगमरमर के नाजुक-नाजुक खम्भे बनाये गये थे। दीवारों पर बड़ी सुन्दर पच्चीकारी की गई थी। फर्श चमकदार पत्थर का बनाया गया था। जब संगमरमर के खम्भों का प्रतिबिम्ब उस चमकीले फर्श पर पड़ता तो ऐसा लगता जैसा श्वेत पंखों वाले राजहंसों ने अपनी लम्बी-लम्बी गरदनें झील में डुबो दी हैं।

बुध का शुभ दिन इस बस्ती में आने के लिए नियत किया गया। इस दिन उस बस्ती की सब वेश्याओं ने मिलकर बहुत दान दिया। बस्ती के खुले मैदान में जमीन को साफ कराकर शामियाने गाड़ दिये गये। देगें खड़कने की ध्वनि और मांस और घी की सुगन्धि बीस-बीस कोस से भिखारियों और कुत्तों को खींच लाई। दोपहर होते-होते पीर कड़क शाह के मजार के पास जहाँ लंगर बटना था इतनी संख्या में भिखारी एकत्रित हो गये कि ईद के दिन किसी बड़े शहर की जामा मस्जिद के पास भी न हुए होंगे। पीर कड़क शाह के मजार को खूब साफ करवाया और धुलवाया गया और उस पर फूलों की चादर चढ़ाई गई और मस्त फकीर को नया जोड़ा सिलवाकर पहनाया गया जिसे उसने पहनते ही फाड़ डाला।

शाम को शामियाने के नीचे दूध-सी उजली चान्दनी का फर्श कर दिया गया, गाव तकिये लगाये गये और राग-रंग की महफिल सजाई गई। दूर-दूर से

बहुत सी वेश्याओ को बुलाया गया जो उनकी सहेलियाँ या बिरादरी की थी। उनके साथ उनके बहुत से मिलने वाले भी आये जिनके लिए एक अलग शामियाने मे कुर्सियो का प्रबन्ध किया गया और उनके सामने की ओर चिके डाल दी गई। अनगिनत गैसो के प्रकाश से यह स्थान दिन का रूप धारे हुए था। उन वेश्याओ के काले भुजग और तोदियल साजिंदे भारी काम की शेरवानियाँ पहने, इत्र मे बसे हुए फोये कानो मे उडसे इधर-उधर मूँछो को ताव देते फिरते। और भडकीले वस्त्र और तितली के पख से भी पतली साडियाँ पहने, गाजो और सुगधियो मे बसी हुई सुन्दरियाँ अठखेलियो से चलती। रात भर नाच-गाना होता रहा और जगल मे मगल हो गया।

दो-तीन दिन बाद जब इस उत्सव की थकन उतर गई तो ये वेश्याए सामान आदि जुटाने और मकानो की सजावट मे व्यस्त हो गई। झाड, फानूस मानवाकार आइने, निवाडी पलग, चित्र और सुनहले चौखटो मे जडे हुए ग़जलो के शेर लाए गए और करीने से कमरों मे लगाए गए और कोई आठ दिन मे जाकर ये मकाने कील-काटे से लैस हुए। ये औरतें दिन का अधिकतर भाग तो उस्तादो से नृत्य की शिक्षा लेने, गज़ले याद करने, धुने बिठाने, पाठ पढने, तख्ती लिखने, सीने-पिरोने, काढने, ग्रामोफोन सुनने, उस्तादो से ताश और कैरम खेलने और नोक-झोक से मन बहलाने और सोने मे व्यतीत करती और तीसरे पहर गुसलखानो मे नहाने जाती जहाँ उनके नौकरो ने हाथ के पम्पो से पानी निकाल-निकाल कर टब भर रखे होते। उसके बाद वे बनाव-शृगार मे जुट जाती।

जैसे ही रात का अधेरा फैलता, ये मकान गैसो के प्रकाश से जगमगा उठते, जो यहाँ-वहाँ सगमरमर के अर्धखिले कमलो मे बडी सफाई से छुपाये गये थे और उन मकानो की खिडकियो और दरवाजो के किवाडो के शीशे जो फूल-पत्तियों के आकार के काटकर जडे गये थे, उनकी इन्द्रधनुष की सी रोशनियाँ दूर से झिलमिल-झिलमिल करती हुई बहुत भली मालूम होती। ये वेश्याए बनाव-शृंगार किये बरामदो मे टहलती, आस-पास वालियो से बातें करती, हँसती, खिलखिलाती। जब खडे-खडे थक जाती तो भीतर कमरे मे चादनी के फर्श पर गाव-तकियो से लगकर बैठ जाती। उनके साजिन्दे साज़ मिलाते रहते और वे

छालियाँ कुतरती रहती। जब रात जरा भीग जाती तो उनके मिलने वाले टोकरो में शराब की बोतले और फल-फुलारी लिए अपने मित्रो के साथ मोटरों या तांगो मे बैठकर आते। उस बस्ती मे उनके कदम रखते ही एक विशेष गहमागहमी और चहल-पहल होने लगती। राग-रग, साज़ों के सुर, नृत्य करती हुई सुन्दरियो के घु घरुओ की ध्वनि शराब की सुराही की कल-कल मे मिलकर एक अजीब नशा-सा पैदा कर देती और मालूम भी न होता और रात बीत जाती।

उन वेश्याओ को इस बस्ती मे आये कुछ ही दिन हुए थे कि दुकानो के किरायादार उत्पन्न हो गये जिनका किराया इस बस्ती को आबाद करने के खयाल से बहुत ही कम रखा गया था। सब से पहले जो दुकानदार आया वह वही बुढिया थी जिसने सबमे पहले मस्जिद के सामने पेड के नीचे खोमचा लगाया था। दुकान को भरने के लिए बुढिया और उसका लडका सिग्रेटो के बहुत से खाली डब्बे उठा लाये और उन्हे ऊपर-तले सजा कर रख दिया गया। बोतलो मे रगदार पानी भर दिया गया ताकि मालूम हो, शर्बत की बोतलें हैं। बुढिया ने अपनी सामर्थ्य के अनुसार कागजी फूलो और सिग्रेटो की खाली डिबियो से बनाई हुई बेलो से दुकान की कुछ सजावट भी की। कुछ ऐक्टर और ऐक्ट्रेसो के चित्र भी पुरानी फिल्मी पत्रिकाओ से निकाल कर लेई से दीवारो पर चिपका दिए। दुकान का असल माल दो-तीन प्रकार के सिग्रेटो के तीन-तीन, चार-चार पैकेटो, बीडी के आठ-दस बडलो, दियासलाई की आधी दर्जन डिबियों, पानो की ढोली, पीने के तम्बाकू की तीन-चार टिकियो और मोमबत्ती के आधे बडल से अधिक न था।

दूसरी दुकान मे एक बनिया, तीसरी मे हलवाई, चौथी मे कसाई, पाँचवी मे कबाबी और छठी मे एक कु जडा आ बसा। कु जडा आस-पास के गावो से सस्ते दामो चार-पाच किस्म की सब्जिया ले आता और यहाँ अच्छे लाभ पर बेच देता। एकाध टोकरा फलो का भी रख लेता। चूंकि दुकान खासी खुली थी, एक फूल वाला उसका साझी बन गया। वह दिन भर फूलो के हार, गजरे और तरह-तरह के गहने बनाता रहता और शाम को उन्हें चगेरी मे डालकर एक-एक मकान मे ले जाता और न केवल फूल ही बेच आता, बल्कि हर जगह

एक-एक दो-दो घडी बैठकर साज़िन्दो से गपशप भी हाँक लेता और हुक्के का दम भी लगा आता। जिस दिन तमाशबीनो की कोई टोली उसकी उपस्थिति मे ही कोठे पर चढ आती और गाना-बजाना शुरू हो जाता, तो वह साज़िन्दो के नाक-भौं चढाने पर भी वहाँ उठने का नाम न लेता। मजे से गाने पर सिर धुनता और मूर्खों की तरह हरेक की सूरत ताकता रहता। जिस दिन रात अधिक हो जाती और कोई हार बच जाता तो वह उसे अपने गले मे डाल लेता और बस्ती के बाहर गला फाड-फाड़ कर गाता फिरता।

एक दुकान मे एक वेश्या का बाप और भाई जो दर्जी का काम जानते थे, सीने की मशीन रखकर बैठ गए। होते-होते एक नाई भी आ गया और अपने साथ एक रगरेज़ को भी लेता आया। उसकी दुकान के बाहर अलगनी पर लटके हुए तरह-तरह के रगो के दुपट्टे हवा मे लहराते हुए आँखो को बहुत भले लगते।

कुछ ही दिन गुजरे थे कि एक टटपूँजिया बिसाती, जिसकी दुकान शहर मे चलती नही थी, बल्कि दुकान का किराया निकालना भी कठिन हो जाता था, शहर को छोडकर इस बस्ती मे आगया। यहाँ उसे हाथो-हाथ लिया गया और उसके तरह-तरह के लैवेंडर, पाउडर, साबुन, कघिया, बटन, सुई-धागा, लेस-फीते, सुगन्धित तेल, रूमाल, मजन आदि की खूब बिक्री होने लगी।

इस बस्ती के रहने वालो के सद्भावनापूर्ण व्यवहार के कारण इसी प्रकार दूसरे-तीसरे कोई-न-कोई टटपूँजिया दुकानदार, कोई बजाज, कोई पनसारी, कोई हुक्के के नेचे बनाने वाला, कोई नानबाई मदे के कारण या शहर के बढे हुए किराये से घबराकर उस बस्ती मे आ शरण लेता।

एक बडे-मियाँ अत्तार जो अपने आपको हकीम कहलाना पसद करते थे, उनका जी शहर की घनी आबादी और हकीमो, वैद्यो और औषधालयो की भरमार मे जो घबराया तो वे अपने शिष्यो को साथ ले शहर से उठ आये और उस बस्ती मे एक दुकान किराए पर ले ली। सारा दिन बडे-मियाँ और उनके शिष्य औषधियो के डिब्बो, शर्बत की बोतलो, और मुरब्बे, चटनी, अचार के बयामो को अलमारियो मे अपने-अपने ठिकाने पर रखते रहे। एक अलमारी मे

कुछ वैद्यक सम्बधी पुस्तके रख दी। किवाडो की पुश्त पर और दीवारो मे जो जगह खाली बची, वहाँ उन्होंने अपनी बनाई हुई विशेष रामबाण औषधियो के विज्ञापन काली स्याही से मोटे-मोटे अक्षरो मे लिखकर और गत्तो पर चिपका कर लटका दिये। प्रतिदिन सुबह को वेश्याओ के नौकर गिलास ले-लेकर आ मौजूद होते और शर्बत बजूरी, शर्बत बनफशा, शर्बत अनार और ऐसे ही और स्वादिष्ट और आनन्ददायक शर्बत और अर्क और दिल को ताकत पहुँचाने वाले मुरब्बे चाँदी के वर्कों समेत ले जाते।

जो दुकाने बच रही, उनमे उन वेश्याओ के भाई-बदो और साज़िन्दो ने अपनी चारपाइया डाल दी। दिन भर ये लोग उन दुकानो मे ताश, चौसर और शतरज खेलते, बदन पर तेल मलवाते, भग घोटते, बटेरो की लडाइयाँ कराते, तीतरो से 'सुबहान तेरी कुदरत' की रट लगवाते और घडा बजा-बजाकर गाते।

एक वेश्या के साजिन्दे ने एक दुकान खाली देखकर अपने भाई को, जो साज़ बनाना जानता था, उसमे ला बिठाया। दुकान की दीवारों के साथ-साथ कीले ठोककर टूटी-फूटी मरम्मत-योग्य सारगियाँ, सितार, तबूरे, दिलरुबा आदि टाग दिये। यह व्यक्ति सितार बजाने मे भी कमाल रखता था। शाम को वह अपनी दुकान मे सितार बजाता जिसकी मीठी आवाज़ सुनकर आस-पास के दुकानदार अपनी दुकानो से उठ-उठकर आ जाते और देर तक बुत बने सितार सुनते रहते। इस सितार बजाने वाले का एक शिष्य था जो रेलवे के दफ्तर मे क्लर्क था। उसे सितार सीखने का बहुत शौक था। जैसे ही उसे दफ्तर से छुट्टी होती, वह सीधा साइकिल उडाता हुआ इस बस्ती का रुख़ करता और घटा-डेढ़-घटा दुकान ही मे बैठकर अभ्यास किया करता। अर्थात् इस सितार बजाने वाले के दम से बस्ती मे खासी रौनक रहने लगी।

मस्जिद के मुल्लाजी, जब तक तो यह बस्ती बनती रही रात को गाँव मे अपने घर चले जाते रहे, लेकिन अब जबकि उन्हे दोनो वक्त खूब तर माल पहुँचने लगा तो वे रात को भी यही रहने लगे। धीरे-धीरे कुछ वेश्याओ के घरो से बच्चे भी मस्जिद मे पढने आने लगे, जिससे मुल्लाजी को रुपये-पैसे की भी आय होने लगी।

एक शहर-शहर घूमने वाली घटिया दर्जे की नाटक कम्पनी को जब ज़मीन के चढे हुए किराए के कारण शहर मे कही जगह न मिली तो उसने इसी बस्ती का रुख किया और उन वेश्याओ के मकानो मे कुछ फासले पर मैदान मे तम्बू खडे करके डेरे डाल दिये। उसके अभिनेता अभिनय की कला से अनभिज्ञ थे। उनके वस्त्र फटे-पुराने थे जिनके बहुत से सितारे झड चुके थे और ये लोग तमाशे भी बहुत पुराने और घिसे-पिटे करते थे। किन्तु फिर भी इस कम्पनी का काम चल निकला। इसका कारण यह था कि टिकट के दाम बहुत कम थे। शहर के मजदूरी-पेशा लोग, कारखानो मे काम करने वाले और अन्य निर्धन लोग जो दिन भर के कडे परिश्रम की कसर शोरगुल, उछल-कूद और तुच्छ मनोरजन से निकालना चाहते थे, पाँच-पाँच छ-छ की टोलियाँ बनाकर, गले मे फूलो के हार डाले, हँसते बोलते, बासुरी और अलगोज़े बजाते, राह चलतो पर आवाजे कसते, गाली-गलौच बकते, शहर से पैदल चलकर नाटक देखने आते और लगे हाथो बाज़ारे-हुस्न की भी सैर कर जाते। जब तक नाटक शुरू न होता कम्पनी का एक मसखरा तम्बू के बाहर एक स्टूल पर खडा कभी कूल्हा हिलाता, कभी मुँह फुलाता, कभी आँखे मटकाता। अजीब-अजीब गदी हरकतें करता जिन्हे देखकर ये लोग जोर से कहकहे लगाते और गालियो के रूप मे दाद देते।

धीरे-धीरे अन्य लोग भी उस बस्ती मे आने शुरू हुए। अत शहर के बडे-बडे चौको मे तागे वाले आवाजे लगाने लगे "आओ कोई नई बस्ती को!" शहर से पाच कोस तक जो पक्की सडक जाती थी उस पर पहुँचकर तागे वाले सवारियो से इनाम पाने के लोभ में या उनके कहने पर तागो की दौडें कराते। मुँह से हार्न बजाते और जब कोई तागा आगे निकल जाता तो उसकी सवारियाँ नारो से आकाश सिर पर उठा लेती। इस दौड मे बेचारे घोडो का बुरा हाल हो जाता और उनके गले मे पडे हुए फूलो के हारो से बजाय सुगन्धि के पसीने की दुर्गन्ध आने लगती।

रिक्शा वाले तागे वालो से क्यो पीछे रहते! वे उनसे कम दाम पर सवारियाँ बिठा, फर्राटे भरते और घुँघरू बजाते उस बस्ती को जाने लगे। इसके

अतिरिक्त हर शनिवार की शाम को स्कूलो व कालिजो के विद्यार्थी एक-एक साइकिल पर दो-दो लदे, बेतहाशा पैडल मारते इस रहस्यपूर्ण बाज़ार की रौनक देखने आ जाते, जिससे उनके विचारानुसार उनके बडो ने खामखाह उन्हे वचित कर दिया था।

धीरे-धीरे इस बस्ती की चर्चा चारो ओर फैलने लगी और मकानो और दुकानों की माँग होने लगी। वे वेश्याएँ जो पहले इस बस्ती मे आने पर तैयार न हुई थी, अब उसकी दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति देखकर अपनी मूर्खता पर अफ़सोस करने लगी। कई-एक ने तो झट जमीने खरीद उन वेश्याओ के साथ-साथ उसी ढग के मकान बनवाने शुरू कर दिए। इसके अतिरिक्त शहर के महाजनो ने भी इस बस्ती के आस-पास सस्ते दामो मे ज़मीने खरीद-खरीदकर किराए पर उठाने के लिए छोटे-छोटे कई मकान बनवा डाले। परिणाम यह हुआ कि वे रडियाँ जो होटलो और शरीफ मोहल्लो मे गुप्त रूप से रहती थी, सहसा अपने तहखानो से निकल आई और इन मकानो मे आबाद हो गई। कुछ छोटे-छोटे मकानो मे इस बस्ती के वे किरायेदार आ बसे जो बच्चेदार थे और रात को दुकानो मे न सो सकते थे।

इस बस्ती मे आबादी तो खासी हो गई थी लेकिन अभी तक बिजली की रोशनी का प्रबन्ध नही हुआ था। अत उन वेश्याओ और बस्ती के नव निवासियों की ओर से सरकार के पास बिजली के लिए प्रार्थना-पत्र भेजा गया जो थोडे दिन के बाद स्वीकार कर लिया गया। उसके साथ ही एक डाकघर भी खोल दिया गया। एक बूढा डाकघर के बाहर एक सन्दूकचे मे लिफाफे, कार्ड और कलम-दवात रख, बस्ती के लोगो के खत-पत्र लिखने लगा।

एक बार बस्ती मे शराबियो की दो टोलियो मे झगड़ा हो गया जिसमे सोडा-वाटर की बोतलो, चाकुओ और ईंटो का खूब खुल कर प्रयोग किया गया और कई लोग बुरी तरह घायल हुए। इस पर सरकार को खयाल आया कि बस्ती मे एक थाना भी खोल देना चाहिए।

नाटक कम्पनी दो महीने तक रही और अपने खयाल मे खासा कमा ले गई। इस शहर के एक सिनेमा के मालिक ने सोचा कि क्यो न इस बस्ती मे

भी एक सिनेमा खोल दिया जाय। यह विचार आने की देर थी कि उसने झट एक मौके की जगह चुनकर खरीद ली और उसी दिन उसारी का काम शुरू करा दिया। कुछ ही महीनो मे सिनेमा हॉल तैयार हो गया। उसके अन्दर एक छोटा-सा बगीचा भी लगवाया गया ताकि सिनेमा देखने वाले यदि सिनेमा शुरू होने से पहले आ जाएँ तो आराम से बगीचे मे बैठ सके। उनके साथ बस्ती के लोग यो ही सुस्ताने या रौनक देखने के खयाल से आ-आकर बैठने लगे। यह बगीचा खासी सैरगाह बन गया। धीरे-धीरे सक्के कटोरा बजाते इस बगीचे मे आने और प्यासो की प्यास बुझाने लगे। सिर की तेल-मालिश वाले अत्यन्त घटिया प्रकार के तेज सुगन्धि तेलो की शीशियाँ वास्कट की जेबो मे खोंसे कन्धे पर मैला-कुचैला तौलिया डाले, 'दिल पसन्द', 'दिल बहार' की हाँक लगाते सिर-दर्द के रोगियो को अपनी सेवाएँ भेट करने लगे।

सिनेमा के मालिक ने सिनेमा हॉल की इमारत के बाहर दो-एक मकान और कई दुकाने भी बनवाई। मकान मे होटल खुल गया जिसमे रात को रहने के लिए कमरे भी मिल सकते थे और दुकानो मे एक सोडा वाटर की फैक्टरी वाला, एक फोटोग्राफर, एक साइकिल की मरम्मत वाला, एक लाण्डरी वाला, दो पनवाडी, एक बूट शाप वाला और एक डाक्टर आ बसे। होते-होते पास ही एक शराबखाना खोलने की आज्ञा मिल गई। फोटोग्राफर की दुकान के बाहर एक कोने मे एक घडीसाज ने आ डेरा जमाया और हर समय उभरा हुआ शीशा आँख पर चढाए घडियो के कल-पुर्जो मे उलझा रहने लगा।

इसके कुछ ही दिन बाद बस्ती मे नल, रोशनी और सफाई के बाकायदा प्रबन्ध की ओर ध्यान दिया जाने लगा। सरकारी कर्मचारी लाल झडियाँ, जरीबे और ऊँचाई-निचाई मापने के यत्र ले-लेकर आ पहुँचे और नाप-नाप कर सडको और गली-कूचो की नीव डालने लगे और बस्ती की कच्ची सडको पर सडक कूटने वाला इजन चलने लगा . . ."

\+ + +

इस बात को बीस साल हो चुके है। यह बस्ती अब भरापूरा शहर बन गई है, जिसका अपना रेलवे स्टेशन भी है और टाउन-हाल भी, कचहरी भी

और जेलखाना भी। आवादी ढाई-लाख के लगभग है। शहर मे एक कॉलिज, दो हाई स्कूल, एक लडको के लिए, एक लडकियो के लिए, और आठ प्राइमरी स्कूल है जिनमे म्युनिसिपल कमेटी की ओर से नि शुल्क शिक्षा दी जाती है। छ सिनेमा है और चार बैंक जिनमे से दो ससार के बडे-बडे बैंको की शाखाएँ है।

शहर से दो दैनिक, तीन साप्ताहिक और दस मासिक पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित होती है। इनमे से चार साहित्यिक, दो सामाजिक और धार्मिक है। एक उद्योगो से तथा एक औषध-विज्ञान से सम्बन्ध रखता है। एक नारियो के लिए है और एक बच्चो के लिए। शहर के विभिन्न भागो मे बीस मस्जिदे, पन्द्रह मन्दिर और धर्मशालाए, छ यतीम-खाने, पाच अनाथालय, और तीन बडे सरकारी हस्पताल है जिनमे से एक केवल स्त्रियो के लिए है।

शुरु-शुरु मे कई साल तक यह शहर अपने निवासियो के आधार पर 'हुस्न आवाद' (सौन्दर्य नगर) के नाम से पुकारा जाता रहा लेकिन बाद मे इसे अनुचित समझकर इसमे थोडा-सा सशोधन कर दिया गया। अर्थात् 'हुस्न आवाद' की बजाय 'हस्न आवाद' कहलाने लगा। लेकिन यह नाम चल न सका क्योकि जनसाधारण 'हुस्न' और 'हस्न' मे से किसी एक पर कायम न रहते। आखिर बडी पुरानी पुस्तको के पन्ने उलटने और पुराने हस्त-लिखित लेखो की छान-बीन के बाद उसका असल नाम ढूढ निकाला गया जिस से यह बस्ती आज से सैकडों वर्ष पूर्व उजडने से पहले पुकारी जाती थी और वह नाम है—'आनन्दी।'

यो तो सारा शहर भरा-पूरा, साफ-सुथरा और सुन्दर है लेकिन सबसे सुन्दर, सबसे रौनक वाला और व्यापार का सबसे बडा केन्द्र वही बाजार है जिसमे वेश्याए रहती हैं।

× × ×

आनन्दी म्युनिसिपल कमेटी का अधिवेशन ज़ोरों पर है। हॉल खचाखच भरा हुआ है। पुरानी परिपाटी के विपरीत आज एक भी सदस्य अनुपस्थित नही। विचाराधीन प्रश्न यह है कि वेश्याओ को शहर से बाहर निकाल दिया

जाय क्योंकि उनकी मौजूदगी मानवता, शिष्टता और सभ्यता के स्वच्छ दामन पर काला धब्बा है।

देश तथा जाति के एक हितैषी तथा शुभचिंतक सदस्य भाषण दे रहे हैं—"न जाने इसमें क्या नीति थी कि इस अपवित्र और चरित्रहीन वर्ग को हमारे इस प्राचीन और ऐतिहासिक नगर के ठीक बीचोबीच रहने की आज्ञा दी गई ....."

इस बार इन औरतों के लिए जो इलाका नियत किया गया वह शहर से बारह मील दूर था।

सम्रादत हसन मन्टो[1]



·· ·· मेरे जीवन की सब से बड़ी घटना मेरा जन्म था। मैं पंजाब के एक अज्ञात गाव 'समराला' मे उत्पन्न हुआ। यदि किसी को मेरी जन्म-तिथि से दिलचस्पी हो सकती है तो वह मेरी मां थी, जो अब जीवित नहीं है। दूसरी घटना १९३१ मे हुई जब मैंने पंजाब यूनिवर्सिटी से दसवीं की परीक्षा लगातार तीन साल फेल होने के बाद पास की। तीसरी घटना वह थी जब मैंने १९३९ मे शादी की, लेकिन यह घटना दुर्घटना नहीं थी और अब तक नहीं है। और भी बहुत सी घटनाएं हुईं, लेकिन उनसे मुझे नहीं दूसरों को कष्ट पहुँचा। उदाहरण-स्वरूप मेरा कलम उठाना एक बहुत बड़ी घटना थी, जिससे 'शिष्ट' लेखकों को भी दुख हुआ और 'शिष्ट' पाठकों को भी।

मैंने कुछ साल बम्बई मे गुजारे और फिल्मी कहानिया लिखीं। आजकल लाहौर मे हूँ और फिल्मी नहीं, केवल साधारण कहानिया लिख रहा हूँ। लगभग दो दर्जन कहानी-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, जिनके नाम गिनवा कर

१ उर्दू के इस प्रतिभाशाली कहानीकार की १९५६ मे अकाल मृत्यु हो गई।

आपको परेशान नहीं करना चाहता। अपना मौजूदा पता भी इसीलिए नहीं लिख रहा, क्योंकि स्वयं भी परेशान नही होना चाहता।

मन्टो उर्दू का एकमात्र ऐसा कहानी-लेखक है, जिसकी रचनाए जितनी पसंद की जाती है उतनी ही नापसंद भी। और इसमे किसी सन्देह की गुन्जाइश नही है कि उसे गालियां देने वाले लोग ही सब से अधिक उसे पढते हैं। ताबड़-तोड़ गालियां खाने, और 'काली शलवार', 'बू', 'धुआं', 'ठंडा गोश्त' इत्यादि 'अश्लील' रचनाओ के कारण बारबार अदालत के कटहरो मे घसीटे जाने पर भी वह बराबर उस वातावरण और उन पात्रो के सम्बन्ध मे कहानियां लिख रहा है जिन्हे 'सभ्य' लोग घृणा की दृष्टि से देखते है, और अपने समाज मे कोई स्थान देने को तैयार नहीं। यह सही है कि जीवन के बारे मे मन्टो का दृष्टिकोण कुछ अस्पष्ट और एक सीमा तक निराशावादी है। स्वस्थ पात्रो की बजाए उसने हमेशा अस्वस्थ पात्रो को (जिनमे बडी सख्या काम-प्रवृत्ति रखने वालो की है) अपना विषय बनाया है और अपने युग का वह बहुत बड़ा Cynic है। लेकिन मानव-मनोविज्ञान को समझने और फिर उस के प्रकाश मे बनावट और झूठ को प्रकट करने की जो क्षमता मन्टो को प्राप्त है, वह निःसन्देह किसी अन्य लेखक को प्राप्त नहीं है।

जहाँ तक कलात्मक प्रौढता का सम्बन्ध है मेरे विचार मे उर्दू के आधुनिक युग का कोई कहानी लेखक मन्टो तक नही पहुँचता। हमे उसके सिद्धान्तों से मतभेद हो सकता है। हम यह कह सकते है कि कोई कलाकृति उस समय तक महान नहीं हो सकती जब तक कि कलात्मक प्रौढता के साथ-साथ उसमें रचनात्मक पहलू न हो। लेकिन उसकी लेखनी पर उँगली रखकर कभी यह नहीं कह सकते कि कला की दृष्टि से उसमे कोई झोल है या यह कि लेखक अपने सिद्धान्तो के प्रति (अगर उसके कोई सिद्धांत हैं) निष्कपट नहीं।

ममद भाई

फारस रोड से आप उस ओर भीतर गली मे चले जाइये जो सफेद गली कहलाती है तो उसके अन्तिम सिरे पर आपको कुछ होटल मिलेंगे। यों तो बम्बई मे कदम-कदम पर होटल और रेस्टोराँ होते हैं लेकिन ये रेस्टोराँ इसलिए बहुत दिलचस्प और अनूठे हैं क्योकि ये उस इलाके मे हैं जहाँ भाँत-भाँत की वेश्याएँ बसती हैं।

एक युग बीत चुका है। बस आप यही समझिये कि बीस वर्ष के लगभग, जब इन रेस्टोराओ मे मैं चाय पीया करता था और खाना खाया करता था। सफेद गली से आगे निकलकर 'प्ले-हाउस' आता है। उधर दिनभर शोर-शराबा रहता है। सिनेमा के शो दिन-भर चलते रहते थे। चम्पियाँ होती थी। सिनेमा-घर शायद चार थे। उनके बाहर बडे विचित्र ढँग मे सिनेमा के कर्मचारी घंटियाँ बजा-बजाकर लोगो को निमन्त्रण देते थे—"आओ, आओ,—दो आने मे—फर्स्ट क्लास खेल, दो आने मे।"

कभी-कभी ये घंटियाँ बजाने वाले जबर्दस्ती लोगो को भीतर ढकेल देते थे—बाहर कुर्सियो पर चम्पी कराने वाले बैठे होते थे जिनकी खोपडियो की मरम्मत बडे वैज्ञानिक ढँग से की जाती थी। मालिश अच्छी चीज है लेकिन मेरी समझ मे नही आता कि बम्बई के रहने वाले इन पर इतने मोहित क्यों

है। दिन को और रात को हर समय उन्हे तेल मालिश की आवश्यकता अनुभव होती है। आप यदि चाहे तो रात के तीन बजे बडी आसानी से 'तेल-मालिशिया' बुलवा सकते है। यो भी सारी रात, चाहे आप बम्बई के किसी कोने मे हो आप अवश्य ही यह आवाज सुनते रहेगे—"पी—पी—पी।"

यह 'पी' चम्पी का सक्षिप्त रूप है।

फारस रोड यो तो एक सडक का नाम है लेकिन वास्तव मे यह उस इलाके का नाम है जहाँ वेश्याएँ रहती है। यह बहुत बडा इलाका है। इसमे कई गलियाँ है, जिनके विभिन्न नाम है, लेकिन सुविधा स्वरूप इसकी हर गली को फारस रोड या सफेद गली कहा जाता है। इसमे जगले लगी हुई सैकडो दुकाने हैं, जिनमे छोटी-बडी आयु और अच्छे-बुरे रग की स्त्रियाँ अपना शरीर बेचती हैं। विभि दामो पर, आठ आने से आठ रुपये तक, आठ रुपये से आठ सौ रुपये तक—हर दाम की स्त्री आपको इस इलाके मे मिल सकती है।

यहूदी, पजाबी, मराठी, काश्मीरी, गुजराती, बंगाली, एग्लो-इडियन, फ्रासीसी, चीनी, जापानी अर्थात् हर प्रकार की स्त्री आपको यहाँ से प्राप्त हो सकती है—ये स्त्रियाँ कैसी होती है—क्षमा कीजिये, इस सम्बन्ध मे आप मुझसे कुछ न पूछिये—बस स्त्रियाँ होती है—और उनको ग्राहक मिल ही जाते हैं।

इस इलाके मे बहुत से चीनी भी आबाद है। मालूम नही ये क्या कारोबार करते हैं, लेकिन रहते इसी इलाके मे हैं। कुछ एक तो रेस्टोराँ चलाते है जिनके बाहर बोर्डो पर ऊपर-नीचे कीडे-मकोडो की शक्ल मे कुछ लिखा होता है—मालूम नही क्या।

इस इलाके मे हर बिजनेस और हर जाति के लोग आबाद हैं। एक गली है जिसका नाम अरब लेन है। वहाँ के लोग उसे अरब गली कहते है। उन दिनो, जिन दिनो की मैं बात कर रहा हूँ, इस गली मे लगभग बीस-पच्चीस अरब रहते थे जो स्वय को मोतियो के व्यापारी कहते थे, बाकी आबादी पजाबियो और रामपुरियो की थी।

इसी गली मे मुझे एक कमरा मिल गया था जिसमे कभी सूरज का प्रकाश

न आ पाता था। हर समय बिजली का बल्ब जलता रहता था। इसका किराया साढे नौ रुपये मासिक था।

आप यदि कभी बम्बई मे नही रहे तो शायद आप मुश्किल ही मे विश्वास करेगे कि वहाँ किसी को किसी दूसरे से सरोकार नही होता। यदि आप अपनी खोली मे मर रहे हैं तो आपको कोई नही पूछेगा। आपके पड़ोस मे हत्या हो जाय, क्या मजाल जो आपको उसकी खबर हो जाय—लेकिन वहाँ अरब गली मे केवल एक व्यक्ति ऐसा था जिसे अडोस-पडोस के हर व्यक्ति से दिलचस्पी थी—और उसका नाम ममद भाई था।

ममद भाई रामपुर का रहने वाला था। कमाल का फकेत, गतके और बनोट की कला मे निपुण—मैं जब अरब गली मे आया तो अक्सर होटलो मे उसका नाम सुनने मे आया लेकिन बहुत दिनो तक उससे मुलाक़ात न हो सकी।

मैं सुबह-सवेरे अपनी खोली से निकल जाता था और बहुत रात गए लौटता था—लेकिन ममद भाई से मिलने की बडी उत्सुकता थी, क्योकि उसके सम्बन्ध मे अरब गली मे बहुत-सी कहानियाँ प्रचलित थी—कि बीस-पच्चीस आदमी यदि लाठियो से लैस होकर उस पर टूट पडे, तो भी वे उसका बाल तक बाँका नही कर सकते। एक मिनट के अन्दर-अन्दर वह उन सबको चित कर देता है और यह कि उस जैसा छुरीमार सारे बम्बई मे नही मिल सकता। यो छुरी मारता है कि जिसके लगती है उसे पता भी नही चलता—सौ कदम तक बिना कुछ अनुभव किये चलता रहता है और अन्त मे एकदम ढेर हो जाता है। लोग कहते हैं कि यह उसके हाथ की सफाई है।

उसके हाथ की यह सफाई देखने की मुझे उत्सुकता नही थी लेकिन यो उसके बारे मे अन्य बाते सुन-सुनकर मेरे मन मे यह इच्छा अवश्य उत्पन्न हो चुकी थी कि मैं उसे देखूँ। उससे बातें न करूँ लेकिन निकट से देख लूँ कि कैसा है—इस पूरे इलाके पर उसका व्यक्तित्व छाया हुआ था। वह बहुत बड़ा 'दादा' अर्थात् बदमाश था, लेकिन इसके बावजूद लोग कहते थे कि उसने किसी की बहू-बेटी की ओर कभी आँख उठाकर नही देखा। "लगोट का बहुत पक्का है"—"गरीबो के दुख-दर्द का साझीदार है।" केवल अरब गली ही नहीं, आस-

पास जितनी गलियाँ थी उनमे जितनी दीन, दरिद्र स्त्रियाँ थी, सब ममद भाई को जानती थी क्योकि वह प्राय उनकी आर्थिक सहायता करता रहता था। लेकिन वह स्वय कभी उनके पास नही जाता था, अपने किसी कम आयु के शिष्य को भेज देता था और उनकी कुशलता पूछ लेता था।

मुझे मालूम नही कि उसकी आय के क्या साधन थे, अच्छा खाता था, अच्छा पहनता था। उसके पास एक छोटा-सा तागा था जिसमे बडा स्वस्थ टट्टू जुता होता था। वह स्वय ही उसे चलाता था। साथ दो-तीन शिष्य होते थे। भिडी बाजार का एक चक्कर लगाकर या किसी दरगाह मे होकर वह उस तागे पर वापस अरब गली आ जाता था और किसी ईरानी के होटल मे बैठकर अपने शिष्यो के साथ गतके और बनोट की बातो मे निमग्न हो जाता था।

मेरी खोली के साथ ही एक और खोली थी जिसमे मारवाड का एक मुसलमान नर्तक रहता था। उसने मुझे ममद भाई की सैकडो कहानियाँ सुनाई— उसने मुझे बताया कि ममद भाई लाख रुपये का आदमी है। एक बार उसे हैजा हो गया था। ममद भाई को पता चला तो उसने फारस रोड के सब के सब डाक्टर उसकी खोली मे इकट्ठे कर दिये और उनसे कहा, "देखो, अगर आशिक हुसैन को कुछ हो गया तो मैं तुम सब का मफाया कर दूँगा'" आशिक हुसैन ने बडे आदरपूर्ण स्वर मे मुझ से कहा—"मन्टो साहब! ममद भाई फरिश्ता है—फरिश्ता। जब उसने डाक्टरो को धमकी दी तो वे सब काँपने लगे। ऐसा लगकर इलाज किया कि मैं दो ही दिन मे ठीक-ठाक हो गया।"

ममद भाई के सम्बन्ध मे अरब गली के गन्दे और बेहूदा रेस्टोराओ मे मैं और भी बहुत कुछ सुन चुका था। एक व्यक्ति ने जो शायद उसका शिष्य था और स्वय को बहुत बडा फकेत समझता था, मुझसे कहा था कि ममद भाई अपने नेफे मे एक ऐसा आबदार खजर हमेशा उडसकर रखता है जो उस्तरे की तरह शेव भी कर सकता है—और यह खजर म्यान मे नही होता—खुला रहता है—बिल्कुल नगा और वह भी उसके पेट के साथ। उसकी नोक इतनी तीखी है कि यदि बातें करते हुए, झुकते हुए, उससे ज़रा-सी गलती हो जाय तो ममद भाई का एकदम काम तमाम हो जाय।

प्रत्यक्ष है कि उसको देखने और उससे मिलने की उत्सुकता दिन-प्रतिदिन मेरे मन मे वढती गई। मालूम नही, मैंने अपनी कल्पना मे उसके चेहरे-मोहरे का क्या रेखाचित्र वनाया था। जो हो, इतने समय के वाद मुझे केवल इतना स्मरण है कि मैं एक देवकाय व्यक्ति को अपनी मानसिक आँखो के सामने देखता था जिसका नाम ममद भाई था—उस प्रकार का व्यक्ति जो हरक्युलीस साइकिलो पर विज्ञापन-स्वरूप दिया जाता है।

मैं सुवह-सवेरे अपने काम पर निकल जाता था और रात के दस वजे के लगभग खाने आदि से निवटकर वापस आकर तुरन्त सो जाता था। इस वीच मे ममद भाई से कैसे मुलाकात हो सकती थी। मैंने कई वार सोचा कि काम पर न जाऊँ और सारा दिन अरव गली मे गुज़ार कर ममद भाई को देखने की कोशिश करूँ, लेकिन अफसोस कि मैं ऐसा न कर सका, इसलिए कि मेरी नौकरी ही वडी वेहूदा ढग की थी।

ममद भाई से मुलाकात करने की सोच ही रहा था कि अचानक इन्फ्लुएन्ज़ा ने मुझ पर घोर आक्रमण किया—ऐसा आक्रमण कि मैं वौखला गया। मुझे भय था कि यह विगडकर कही निमोनिया मे परिवर्तित न हो जाय, क्योकि अरव गली के एक डाक्टर ने ऐसा ही कहा था। मैं विल्कुल अकेला था। मेरे साथ जो एक व्यक्ति रहता था, उसे पूना मे एक नौकरी मिल गई थी, इसलिए वह भी पास न था। वुख़ार मे फुँका जा रहा था, प्यास इतनी लगती थी कि जो पानी खोली मे रखा था मेरे लिए काफी नही था, और मित्र-सम्वन्धी कोई पास नही था जो मेरी देख-रेख करता। मैं वहुत 'सख्त-जान' हूँ, देख-रेख की मुझे प्राय. आवश्यकता नही हुआ करती, लेकिन न जाने वह कैसा वुख़ार था, इन्फ्लुएन्ज़ा था, मलेरिया था या कुछ और था, लेकिन उसने मेरी रीढ की हड्डी तोड दी। मैं विलविलाने लगा। मेरे मन मे पहली वार इच्छा उत्पन्न हुई कि मेरे पास कोई हो जो मुझे ढारस दे। ढारस न दे तो कम से कम क्षण-भर के लिए अपनी शकल दिखाकर चला जाय, ताकि मुझे इसीसे ढारस हो जाय कि कोई मुझे पूछने वाला भी है।

दो दिन तक मैं विस्तर पर पडा कराहता रहा, लेकिन कोई न आया—

आता भी कौन ? मेरी जान-पहचान के आदमी ही कितने थे—दो, तीन या चार—और वे इतनी दूर रहते थे कि उन्हे मेरी मृत्यु का भी पता न चल सकता था। और फिर वहा बम्बई मे कौन किसको पूछता है—कोई मरे या जिये, उनकी बला से।

मेरी बहुत बुरी हालत थी। आशिक हुसैन नर्तक की पत्नी बीमार थी, इसलिए वह अपने घर जा चुका था। यह मुझे होटल के छोकरे ने बताया था। अब मैं किसको बुलाता ?

बडी निढाल स्थिति मे था और सोच रहा था कि स्वय नीचे उतरूँ और किसी डाक्टर के पास जाऊँ कि किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। मैंने सोचा कि होटल का छोकरा, जिसे बम्बई की भाषा मे 'बाहिर वाला' कहते है, होगा। बडे मरियल स्वर मे कहा, "आ जाओ।"

दरवाजा खुला और एक छरेरे बदन के व्यक्ति ने, जिसकी मूँछें मुझे सबसे पहले दिखाई दी, भीतर प्रवेश किया।

उसकी मूँछें ही सब कुछ थी। मेरा मतलब यह है कि यदि उसकी मूँछें न होती तो बहुत सम्भव है कि वह कुछ भी न होता। ऐसा मालूम होता था कि उसकी मूँछो ने ही उसके पूरे अस्तित्व को जीवन प्रदान कर रखा है।

वह भीतर आया और अपनी विलियम कैसर ऐसी मूँछो को एक उगली से ठीक करते हुए मेरी खाट के पास आया। उसके पीछे तीन-चार व्यक्ति थे। विचित्र मुखाकृतिया थी उनकी—मैं बहुत हैरान था कि ये कौन हैं और मेरे पास क्यो आए है ?

विलियम कैसर ऐसी मूँछो और छरहरे बदन वाले व्यक्ति ने मुझसे बडे कोमल स्वर मे कहा, "विम्टो साहब, आपने हद कर दी, साला मुझे इत्तला क्यो न दी ?"

'मन्टो' का 'विम्टो' बन जाना मेरे लिए कोई नई बात नही थी। इसके अतिरिक्त मैं इस मूड मे भी नही था कि मैं उसका सुधार करता। मैंने अपने क्षीण स्वर मे उसकी मूँछो से केवल इतना कहा—"आप कौन है ?"

उसने सक्षिप्त-सा उत्तर दिया—"ममद भाई।"

मैं उठकर बैठ गया। "ममद भाई" तो " तो आप ममद भाई हे—मशहूर दादा!"

मैंने यह तो कह दिया लेकिन तुरन्त मुझे अपने बैडेपन का अनुभव हुआ और मैं रुक गया। ममद भाई ने छोटी उगली से अपनी मूँछो के सख्त बाल ज़रा ऊपर किए और मुस्कराया —"हा विम्टो भाई—मै ममद हूँ—यहा का मशहूर दादा—मुझे बाहर वाले से मालूम हुआ कि तुम बीमार हो—साला यह भी कोई बात है कि तुमने मुझे खबर न की। ममद भाई का मस्तक फिर जाता है जब कोई ऐसी बात होती है।"

मैं उत्तर मे कुछ कहने वाला था कि उसने अपने साथियो मे से एक से सम्बोधित होकर कहा, "अरे—क्या नाम है तेरा—जा भागकर जा, और क्या नाम है उस डाक्टर का—समझ गये ना, उससे कह कि ममद भाई तुझे बुलाता है—एकदम जल्दी आ—एकदम—सब काम छोड दे और जल्दी आ—और देख, साले से कहना सब दवाए लेता आए।"

ममद भाई ने जिसको यह आदेश दिया था, वह एकदम चला गया। मै सोच रहा था—मैं उसको देख रहा था—वे समस्त कहानिया मेरे मस्तिष्क मे चल-फिर रही थी जो मै उसके सम्बन्ध मे लोगो से सुन चुका था—लेकिन गडमड रूप मे, क्योंकि बार-बार उसकी ओर देखने के कारण उसकी मूछे सब पर छा जाती थी—बडी भयानक लेकिन बडी सुन्दर मूछे थी—लेकिन ऐसा लगता था कि उस चेहरे को जिसके नयन-नक्श बडे कोमल हैं, केवल भयानक बनाने के लिए यह मूछे रखी गई है। मैंने सोचा कि वास्तव में यह व्यक्ति उतना भयानक नही है जितना कि उसने स्वय को बना रखा है।

खोली मे कोई कुर्सी नही थी। मैंने ममद भाई से कहा कि वह मेरी चारपाई पर बैठ जाए लेकिन उसने इन्कार कर दिया और बडे रूखे-से स्वर मे कहा, "ठीक है—हम खडे रहेगे।"

फिर उसने टहलते हुए—हालाकि उस खोली मे इस ऐश्वर्य की कोई गुजाइश नही थी—कुर्ते का दामन उठाकर पायजामे के नेफे मे एक खंजर निकाला—मै समझा चादी का है। इस प्रकार चमक रहा था कि मैं आप से

पिस्तौल का जमाना है—तुम यह खजर क्यो लिये फिरते हो ?"

ममद भाई ने अपनी कँटीली मूछो पर एक उगली फेरी और कहा—"विम्टो भाई—बन्दूक-पिस्तौल मे कोई मजा नही—उन्हे कोई बच्चा भी चल सकता है। घोडा दबाया और ठस ''इसमे क्या मजा है ? यह चीज़'''या खजर ''यह छुरी ' यह चाक ''मजा आता है ना, खुदा की कसम—यह बा है ' तुम क्या कहा करते हो ?' हाँ ' आर्ट ' इसमे आर्ट है मेरी जान जिसे चाकू या छुरी चलाने का आर्ट न आता हो, वह एकदम कडम है—पिस्तौल क्या है, खिलौना है जो नुक्सान पहुँचा सकता है, पर इसमे क्या लुत्फ आता है—कुछ भी नही—तुम यह खजर देखो—इसकी तेज धार देखो।"यह कहते हुए उसने अगूंठे पर थूक लगाया और अगूंठा उसकी धार पर फेरा, "इससे धमाका नही होता—बस, यो पेट के अन्दर दाखिल कर दो—इस सफाई से कि किसी साले को मालूम भी न हो ''बन्दूक-पिस्तौल सब बकवास है।"

ममद भाई से अब मेरी हर रोज़ किसी-न-किसी समय मुलाकात होती थी। मै उसका आभारी था लेकिन जब मैं इसका ज़िक्र करता था तो वह नाराज़ हो जाता था—कहता था कि "मैंने तुम पर कोई ऐहसान नही किया यह तो मेरा फर्ज़ था।"

जब मैंने कुछ खोज-पडताल की तो मुझे मालूम हुआ कि वह फारस रोड के इलाके का एक प्रकार का शासक था—ऐसा शासक जो प्रत्येक व्यक्ति की देख-रेख करता था। कोई बीमार हो, किसी को कोई कष्ट हो, ममद भाई उसके पास पहुँच जाता था और यह उसकी सी० आई० डी० का काम था जो उसे हर बात से सूचित रखती थी।

वह 'दादा' अर्थात् एक खतरनाक गुडा—लेकिन मेरी समझ मे अब भी नही आता कि वह किस रूप से गुडा था। मैंने तो कभी उसमे कोई गुडापन नही देखा, बस एक उसकी मूछे ज़रूर ऐसी थी जो उसे भयावह बनाए रखती थी। लेकिन उसे उनसे प्यार था। वह उनका कुछ इस प्रकार पालन करता था जैसे कोई अपने बच्चे की करे।

उसकी मूंछो का एक-एक बाल खडा था—मुझे किसी ने बताया था कि

ममद भाई हररोज़ अपनी मूँछो को बालाई खिलाता है। जब खाना खाता है तो शोरबा भरी उँगलियो से अपनी मूँछे ज़रूर मरोडता है क्योकि, बुज़ुर्गो के कथनानुसार, यो बालो मे शक्ति आती है।

मैं इससे पहले शायद कई बार कह चुका हूँ कि उसकी मूँछे बडी भयानक थी—वास्तव मे उन मूँछो का नाम ही ममद भाई था—या उस खंजर का जो उसकी तग घेरे की शलवार के नेफे मे हर समय मौजूद रहता था—मुझे इन दोनो चीज़ो से डर लगता था, न जाने क्यो।

ममद भाई यो तो उस इलाके का बहुत बडा दादा था लेकिन वह सबका शुभचिन्तक था। मालूम नही कि उसकी आय के क्या साधन थे लेकिन जिस किसी को सहायता की आवश्यकता होती थी वह अवश्य उसकी सहायता करता था। इस इलाके की समस्त वेश्याएँ उसे अपना गुरु मानती थी। चूँकि वह एक माना हुआ गुडा था इसलिए आवश्यक था कि उसका सम्बध वहाँ की किसी वेश्या से होता, लेकिन मुझे पता चला कि इस बात से उसका दूर का भी सम्बध नही रहा था।

मेरी उसकी मित्रता बहुत गहरी हो गई—वह अनपढ था लेकिन जाने क्यो वह मेरा इतना आदर करता था कि अरब गली के सब लोगो को ईर्ष्या होती थी। एक दिन सुबह-सवेरे दफ्तर जाते समय मैंने चीनी के होटल मे किसी से सुना कि ममद भाई गिरफ्तार कर लिया गया है। मुझे बहुत आश्चर्य हुआ, इसलिए कि सब थाने वाले उसके मित्र थे। फिर क्या कारण हो सकता था? मैंने उसी व्यक्ति से पूछा कि बात क्या हुई जो ममद भाई गिरफ्तार हो गया। उसने बताया कि इसी अरब गली मे एक औरत रहती है जिसका नाम शीरन बाई है। उसकी एक जवान लडकी है, जिसे कल एक व्यक्ति ने खराब कर दिया—अर्थात् उसका सतीत्व भग कर दिया। शीरनबाई रोती हुई ममद भाई के पास आई और उससे कहा—"तुम यहाँ के दादा हो—मेरी बेटी से अमुक आदमी ने यह बुरा किया—लानत है तुम पर कि तुम घर बैठे हो।" ममद भाई ने एक मोटी गाली बुढिया को दी और कहा, "तुम चाहती क्या हो?" उसने कहा, "मैं चाहती हूँ कि तुम उस हरामज़ादे का पेट फाड़ डालो।"

ममद भाई उस समय होटल मे कवाब खा रहा था। यह सुनकर उसने अपने नेफे मे से खजर निकाला। उस पर अँगूठा फेरकर उसकी धार देखी और बुढिया से कहा—"जा, तेरा काम हो जायगा।"

और उसका काम हो गया—दूसरे शब्दो मे उस आदमी का, जिसने बुढिया की बेटी का सतीत्व भग किया था, आधे घटे के भीतर-भीतर काम तमाम हो गया।

ममद भाई गिरफ्तार तो हो गया था लेकिन उसने अपना काम ऐसी चतुराई से किया था कि उसके खिलाफ कोई गवाही नही थी। इसके अतिरिक्त यदि कोई मौके का गवाह होता तब भी अदालत मे वह कभी उसके विरुद्ध बयान न देता। परिणाम यह हुआ कि उसे जमानत पर छोड दिया गया।

दो दिन हवालात मे रहा था, लेकिन वहाँ उसे कोई कष्ट न हुआ था—पुलिस के सिपाही, इन्स्पैक्टर, सब-इन्स्पैक्टर, सब उसको जानते थे लेकिन जब वह जमानत पर रिहा होकर बाहर आया तो मैंने महसूस किया कि उसे अपने जीवन का सबसे बडा धचका पहुँचा है। उसकी मूँछें जो भयावह रूप मे ऊपर को उठी हुई थी, अब कुछ झुक-सी गई थी।

चीनी के होटल मे उससे मेरी मुलाकात हुई। उसके कपडे जो हमेशा उजले होते थे, मैले थे। मैंने उससे कत्ल के सम्बध मे कोई बात न की लेकिन उसने स्वय ही कहा, "विम्टो साहब! मुझे इस बात का अफसोस है कि साला देर से मरा—छुरी मारने मे मुझसे चूक हो गई, हाथ टेढा पडा—लेकिन वह भी उन साले का कसूर था—एकदम मुड गया—इस वजह से सारा मामला कंडम हो गया—लेकिन मर गया—जरा तकलीफ के साथ, जिसका मुझे अफसोस है।"

आप स्वय सोच सकते है कि यह सुनकर मेरी प्रतिक्रिया क्या हुई होगी। अर्थात् उसे यदि अफसोस था तो केवल इस बात का कि मरने वाले को जरा तकलीफ हुई थी।

मुकदमा चलना था—और ममद भाई उससे बहुत घबराता था। उसने अपने जीवन मे कभी कचहरी की शक्ल तक न देखी थी। न जाने उसने इससे

पहले भी कत्ल किये थे या नही, लेकिन जहाँ तक मुझे पता है, वह मजिस्ट्रेट, वकील और गवाह के बारे मे कुछ नही जानता था, इसलिए कि इन लोगो से उसका कभी सरोकार नही पडा था।

वह बहुत चिंतित था—पुलिस ने जब केस पेश करना चाहा और तारीख नियत हो गई तो ममद भाई बहुत परेशान हो गया। अदालत मे मजिस्ट्रेट के सामने कैसे हाजिर हुआ जाता है, इस बारे मे उसे कुछ मालूम नहीं था। बार-बार अपनी कँटीली मूँछो पर वह उँगलियाँ फेरता था और मुझसे कहता था—"विम्टो साहब! मैं मर जाऊँगा, पर कचहरी मे नही जाऊँगा—साली मालूम नही कैसी जगह है।"

अरब गली मे उसके कई मित्र थे। उन्होने उसे ढाढस बँधाया कि मामला सगीन नही है। कोई गवाह मौजूद नही, एक केवल उसकी मूँछे हैं जो मजिस्ट्रेट के दिल मे उसके विरुद्ध कोई विरोधी भाव उत्पन्न कर सकती है।

जैसा कि मैं इससे पहले कह चुका हूँ, उसकी केवल मूँछे ही थीं जो उसको भयावह बनाती थी—यदि यह न होती तो वह किसी पहलू से भी 'दादा' दिखाई न देता।

उसने बहुत सोचा। उसकी ज़मानत थाने मे ही हो गई थी, अब उसे कचहरी मे पेश होना था। मजिस्ट्रेट से वह बहुत घबराता था। ईरानी के होटल मे जब मेरी उसकी मुलाकात हुई तो मैंने महसूस किया कि वह बहुत परेशान है। उसे अपनी मूँछो की बडी चिन्ता थी, वह सोचता था कि यदि मूँछो के साथ वह कचहरी मे पेश हुआ तो बहुत सम्भव है, उसको सजा हो जाय।

आप समझते है कि यह कहानी है, लेकिन यह वास्तविकता है कि वह बहुत परेशान था। उसके समस्त शिष्य हैरान थे—इसलिए कि वह कभी हैरान-परेशान नही हुआ था। उसे अपनी मूँछो की चिंता थी क्योंकि उसके कुछ अभिन्न मित्रो ने उससे कहा था —"ममद भाई! कचहरी मे जाना है तो इन मूँछो के साथ कभी न जाना—मजिस्ट्रेट तुमको अन्दर कर देगा।"

और वह सोचता था, हर समय सोचता था कि उसकी मूँछो ने उस आदमी को कत्ल किया है या उसने—लेकिन वह किसी परिणाम पर नहीं पहुँच पाता

था। उसने अपना खंजर, मालूम नही, जो पहली बार लहू मे डूबा था या इससे पहिले कई बार डूब चुका था, अपने नेफे से निकाला और होटल के बाहर गली मे फेंक दिया।

मैंने आश्चर्य से उससे पूछा, "ममद भाई! यह क्या?"

"कुछ नही विम्टो भाई—बहुत घोटाला हो गया है—कचहरी मे जाना है—यार-दोस्त कहते है कि तुम्हारी मूंछे देखकर वह जरूर तुम को सजा देगा—अब बोलो क्या करूँ?"

मैं क्या बोल सकता था? मैने उसकी मूंछो की ओर देखा जो सचमुच भयानक थी। मैंने उससे केवल इतना कहा, "ममद भाई, बात तो ठीक है—तुम्हारी मूँछे मजिस्ट्रेट के फैसले पर जरूर असर डालेगी—सच पूछो तो जो कुछ होगा, तुम्हारे खिलाफ नही, तुम्हारी मूंछो के खिलाफ होगा।"

"तो मैं मुंडवा दूँ?" ममद भाई ने अपनी चहेती मूँछो पर बडे प्यार से उंगली फेरी।

मैंने उससे पूछा, "तुम्हारा क्या खयाल है?"

"मेरा ख़याल जो कुछ भी है, वह तुम मत पूछो—लेकिन यहाँ हर किसी का यही ख़याल है कि मैं इन्हे मुंडवा दूँ—वह साला मजिस्ट्रेट मेहरबान हो जायगा। तो मुंडवा दूँ विम्टो भाई?"

किंचित विलम्ब के बाद मैंने उससे कहा—"हाँ, अगर तुम मुनासिब समझते हो तो मुंडवा दो—कचहरी का मामला है और तुम्हारी मूंछे सचमुच बडी भयानक हैं।"

दूसरे दिन ममद भाई ने अपनी मूंछे—अपने प्राणो से प्यारी मूंछें मुंडवा डाली क्योकि उसकी इज्जत खतरे मे थी—लेकिन केवल दूसरो के मश्वरे पर!

मिस्टर एफ० एच० टेल की कचहरी मे उसका मुकद्दमा पेश हुआ। ममद भाई मूँछो के बिना पेश हुआ। मैं भी वहाँ मौजूद था। उसके खिलाफ कोई गवाह मौजूद नही था। लेकिन मजिस्ट्रेट साहब ने उसको खतरनाक गुंडा सिद्ध कर 'तडी-पार' अर्थात् प्रांत छोड देने का दण्ड दे दिया। उसे केवल एक दिन मिला था जिसमे उसे अपना सब कुछ समेट-बटोर कर बम्बई छोड देना था।

कचहरी से निकलकर उसने मुझसे कोई बात न की। उसकी छोटी-बडी उँगलियाँ बार-बार ऊपर के होंट की ओर बढती थी लेकिन वहाँ एक बाल तक न था।

शाम को जब उसे बम्बई छोडकर कही और जाना था, मेरी उसकी मुलाकात ईरानी के होटल मे हुई। उसके दस-बीस शिष्य आस-पास की कुर्सियो पर बैठे चाय पी रहे थे। जब मैं उससे मिला तो उसने मुझ से कोई बात न की। मूँछो के बिना वह बहुत भद्र पुरुष दिखाई दे रहा था लेकिन मैंने महसूस किया कि वह बहुत दु खी है।

उसके पास कुर्सी पर बैठकर मैंने उससे कहा "क्या बात है ममद भाई ?"

उसने उत्तर मे एक बहुत बडी गाली भगवान् जाने किस को दी और कहा, "साला अब ममद भाई ही नही रहा।"

मुझे मालूम था कि उसे प्रात छोडने का दण्ड दिया जा चुका है। मैंने कहा, "कोई बात नही ममद भाई—यहाँ नही तो किसी और जगह सही।"

उसने समस्त जगहो को अनगिनत गालियाँ दी—"साला—अप्पन को यह गम नही—यहाँ रहे या किसी और जगह रहे—यह साला मूँछे क्यो मुँडवाई।" फिर उसने उन लोगो को जिन्होने उसको मूँछे मुँडवाने का मश्वरा दिया था, एक करोड गालियाँ दी और कहा, "साला अगर मुझे 'तडी-पाड' ही होना था तो मूँछो के साथ क्यो न हुआ ?"

मुझे हँसी आ गई—वह लाल भभूका हो गया—"साला, तुम कैसा आदमी है विम्टो—हम सच कहता है, खुदा की कसम—फाँसी लगा देते पर यह बेवकूफी तो हमने खुद की ··· आज तक किसी से नही डरा था · साला अपनी मूँछो से डर गया।" यह कह-कर उसने अपने मुँह पर दोहत्तड मारा और चिल्लाकर बोला, "ममद भाई, लानत है तुझ पर—साला—अपनी मूँछो से डर गया—अब जा अपनी माँ के · · ·"

और उसकी आँखो मे आँसू आ गये जो उसकी मूँछो से खाली चेहरे पर कुछ विचित्र से दिखाई देते थे।

ख़्वाजा अहमद अब्बास



जन्म पानीपत, १६१४।

शिक्षा : हाली मुस्लिम हाई स्कूल पानीपत और मुस्लिम युनिवर्सिटी, अलीगढ़।

पत्रकारी : 'बॉम्बे क्रानीकल' (१६३५ से १६४५ तक)। उस समय के बाद फ्री लान्सिंग।

पुस्तकें : लगभग एक दर्जन, उर्दू और अंग्रेजी मे।

सफर : दुनिया का सफर, १६३८।

सिद्धांत : समाजवादी (लेकिन नॉन-पार्टी)

पता : एम्प्रेस कोर्ट, फर्स्ट फ्लोर, चर्च गेट रिक्लेमेशन, बम्बई—१

ख्वाजा अहमद अब्बास मौलिक रूप से पत्रकार हैं। यही कारण है कि जिस प्रकार समाचार-पत्र के किसी पूरे समाचार को पढ़े बिना हम वास्तविकता नहीं जान पाते, उसी प्रकार अब्बास की कोई पूरी कहानी पढे बिना कहीं बीच

मे हम पर कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं होती। फिर उसकी अधिकतर कहानियों के विषय चूंकि सामयिक घटनाओ पर आधारित होते हैं इसलिए उसके यहां राजनैतिक तथा सामाजिक उलझनो के विश्लेषण के साथ-साथ आलोचना का अंश अधिक रहता है।

अब्बास संसार को उसके वास्तविक रूप देखना और दिखाना पसद करता है—ऐसा संसार जिसमे अच्छे मनुष्य भी हैं और बुरे भी, और, जे० मिल्लर के सिद्धांतानुसार, उसे बुरे लोगो मे अधिक नेकी और नेक लोगो में अधिक बुराई नजर आ जाती है। लेकिन जे० मिल्लर की तरह वह इन दोनों मे कोई विभाजन-रेखा खींचने से नहीं कतराता, बल्कि बड़ी बेबाकी से बुरे को बुरा और अच्छे को अच्छा कहता है। अपने कथा-साहित्य के सम्बन्ध में १९४२ मे अपने कहानी-संग्रह 'एक लड़की' की भूमिका मे उसने स्वयं लिखा था कि .

"ऐसे हाड़-मास के चलते-फिरते मनुष्य, जो अच्छाइयो और बुराइयो का संग्रह होते हैं। मनुष्य जो बावजूद 'पाप' करने के भी मानवता से अनभिज्ञ नहीं होते। मनुष्य जो इश्क और मुहब्बत ही के लिए जीवित नहीं रहते बल्कि खाते भी हैं, कमाते भी हैं, गाते भी हैं और रोते भी हैं। देश पर जान भी देते हैं और देश से विश्वासघात भी करते हैं। जो गिरते भी हैं, सम्भलते भी हैं और गिरतो को सम्भाला भी देते हैं। यदि ऐसे मनुष्य मेरी कहानियों मे नजर आजाएं तो मैं समझूंगा कि मेरे परिश्रम का फल मुझे मिल गया।"

आज न केवल अब्बास को अपने परिश्रम का फल मिल चुका है, बल्कि उर्दू साहित्य को एक बहुत बड़ा मानव-प्रेमी लेखक भी मिल गया है।

ख्वाजा अहमद अब्बास

अबाबील

उसका नाम तो रहीमखाँ था लेकिन उस जैसा ज़ालिम शायद ही कोई हो। गाव-भर उसके नाम से काँपता था। न आदमी पर दया करे, न जानवर पर। एक दिन रामू लुहार के बच्चे ने उसके बैल की पूँछ मे काटे बाध दिये थे तो रहीमखाँ ने बच्चे को मारते-मारते उसे अधमरा कर दिया। अगले दिन इलाके के सरकारी अफसर की घोडी उसके खेत मे घुस आई तो लाठी लेकर घोड़ी को इतना मारा कि वह लहू-लुहान हो गई। लोग कहते थे कि कम्बख्त को खुदा का खौफ़ भी तो नही है। मासूम बच्चो और बेज़बान जानवरो तक को माफ नही करता। यह ज़रूर नरक की आग मे जलेगा। लेकिन सब उसकी पीठ-पीछे कहा जाता था। सामने एक शब्द कहने का किसी मे साहस न था। एक दिन बिन्दू की जो शामत आई तो कह दिया "अरे भई रहीमखाँ, तू क्यो बच्चो को मारता है?" बस उस बेचारे की वह दुर्गत बनाई कि उस दिन से लोगो ने उससे बात करनी भी छोड दी कि न-मालूम किस बात पर बिगड पडे। कुछेक का ख्याल था कि उसका दिमाग खराब हो गया है। उसे पागलखाने भेज देना चाहिये। कोई कहता था, अब की बार किसी को मारे तो थाने मे रपट लिखवा दो, लेकिन किसकी मजाल थी कि उसके खिलाफ थाने मे गवाही देकर उससे दुश्मनी मोल लेता।

गाव-भर ने उससे बात करनी छोड दी लेकिन उस पर कुछ असर न हुआ। सुबह-सवेरे वह हल कधे पर रखे अपने खेत की ओर जाता दिखाई देता। रास्ते मे किसी से न बोलता, लेकिन खेत मे जाकर बैलो से आदमियो की तरह बातें करता। उसने दोनो के नाम रख छोडे थे—नत्थू और छिद्दू। हल चलाते हुए बोलता जाता—"क्यो बे नत्थू! तू सीधा नही चलता? यह खेत आज तेरा बाप पूरा करेगा, और अबे छिद्दू! तेरी भी शामत आई है क्या?" और फिर सचमुच उन बेचारो की शामत आ जाती—सूत की रस्सी की मार! दोनों बैलो की कमर पर घाव पड गए थे।

शाम को घर आता तो वहाँ अपने बीवी-बच्चो पर क्रोध उतारता। दाल या साग मे नमक कम या ज्यादा हुआ तो बीवी को उधेड डाला। कोई बच्चा शरारत कर रहा है, उसे उल्टा लटका कर बैलो वाली रस्सी से पीटते-पीटते बेहोश कर दिया। अर्थात् प्रतिदिन एक सकट आया रहता। आस-पास के झोपडो वाले रोज रात को रहीमखाँ की गालियो की तथा उसकी बीवी और बच्चो के मार खाने और रोने की आवाज सुनते, लेकिन बेचारे क्या कर सकते थे? अगर कोई रोकने जाय तो वह भी मार खाए। मार खाते-खाते बेचारी स्त्री तो अधमरी हो गई थी। चालीस वर्ष की आयु मे साठ की मालूम होती थी। बच्चे जब छोटे-छोटे थे तो पिटते रहे। बडा जब बारह वर्ष का हुआ तो एक दिन मार खा के जो भागा तो आज तक वापस न लौटा। पास के गाँव में एक नाते का चचा रहता था, उसने अपने पास रख लिया। स्त्री ने एक दिन डरते-डरते कहा, "हलासपुर की तरफ जाओ ज़रा तो नूरू को लेते आना।" बस, फिर क्या था? आग-बगूला हो गया—"मैं उस बदमाश को लेने जाऊँ? अब वह खुद भी आया तो टागे चीर के फेक दूँगा।"

वह बदमाश भला क्यो मौत के मुँह मे वापस आता! दो साल बाद छोटा लडका बिन्दू भी भाग गया और भाई के पास रहने लगा। रहीमखाँ को अपना क्रोध उतारने के लिए बस एक स्त्री रह गई थी, सो वह बेचारी इतनी पिट चुकी थी कि अब अभ्यस्त हो चुकी थी। लेकिन एक दिन रहीमखाँ ने उसे इतना मारा कि उससे भी न रहा गया और अवसर पाकर, जब रहीमखाँ खेत

र गया हुआ था, वह अपने भाई को बुलाकर उसके साथ अपनी माँ के घर ली गई और पडोसिन से कह गई कि आये तो कह देना कि मै कुछ दिनो के ए अपनी मा के पास रामनगर जा रही हूँ।

शाम को रहीमखा बैलो को लिए वापस आया तो पडोसिन ने डरते-डरते ताया कि उसकी स्त्री कुछ दिनो के लिए अपनी माँ के पास गई है। रहीमखा परम्परा के विपरीत चुपचाप यह बात सुनी और बैल बाँधने चला गया। उसे श्वास था कि उसकी पत्नी अब कभी वापस न आएगी।

अहाते मे बैल बाधकर जब वह झोपडे के भीतर गया तो एक बिल्ली म्याऊँ-ऊँ कर रही थी। कोई और नजर न आया तो उसी को पूँछ मे पकड र दरवाजे से बाहर फेंक दिया। चूल्हे को जाकर देखा तो ठडा पडा था। आग ला कर रोटी कौन डालता! बिना कुछ खाये-पीये ही पडकर सो रहा।

अगले दिन रहीमखा जब सोकर उठा तो दिन चढ चुका था, लेकिन आज से खेत पर जाने की जल्दी न थी। बकरियो का दूध दुहकर पिया और हुक्का रकर पलग पर बैठ गया। अब झोपडे मे धूप भर आई थी। एक कोने मे वा तो जाले लगे हुए थे। सोचा कि लाओ सफाई ही कर डालूँ। एक बास कपडा बाधकर जाले उतार रहा था कि खपरैल मे अबाबीलो का एक घोसला जर आया। दो अबाबीले कभी अन्दर जाती थी कभी बाहर आती थी। पहले सने इरादा किया कि बास से घोसला तोड डाले, फिर न जाने क्योकर एक ड़ौंची लाकर उस पर चढा और घोसले मे झाककर देखा। भीतर दो लाल टी से बच्चे पडे चूँ-चूँ कर रहे थे और उनके माता-पिता अपनी सतान की ता के लिए उसके सिर पर मडरा रहे थे। घोसले की ओर उसने हाथ बढाया था कि एक अबाबील ने, जो शायद माँ थी, अपनी चोच मे उस पर आक्र-ण कर दिया।

"अरी, आँख फोडेगी?" उसने अपना भयानक कहकहा लगाकर कहा र घड़ौंची पर से उतर आया। अबाबीलो का घोसला सलामत रहा।

अगले दिन से उसने फिर खेत पर जाना शुरु कर दिया। गाव वालो मे अब कोई उससे बात न करता था। दिन-भर हल चलाता, पानी देता या

खेती काटता, लेकिन शाम को सूरज छुपने से कुछ पहले ही घर लौट आता और हुक्का भरकर, पलग के पास लेटकर, अबाबीलो के घोसले की ओर निहारता रहता। अब दोनो बच्चे भी उडने के योग्य हो गए थे। उसने उन दोनो के नाम अपने बच्चो के नाम पर नूरु और बिन्दू रख दिये थे। अब ससार में उसके मित्र ये चार अबाबील ही रह गए थे, लेकिन लोगो को आश्चर्य था कि बहुत दिनो से किसी ने उसे अपने बैलो को पीटते नही देखा था। नत्थू और छिद्दू प्रसन्न थे। उनकी पीठो पर से घाव के निशान भी लगभग गायब हो गए थे।

रहीमखाँ एक दिन खेत से जरा सवेरे चला आ रहा था कि कुछ लड़के सडक पर कबड्डी खेलते हुए मिले। उसको देखना था कि सब अपने जूते छोड़कर भाग गए। वह कहता ही रहा—"अरे मैं कोई मारता थोडे ही हूँ।" आकाश पर बादल छाए हुए थे। वह जल्दी-जल्दी बैलो को हाँकता हुआ घर लाया। उन्हे बाँधा ही था कि बादल जोर से गरजा और वर्षा होने लगी।

भीतर आकर किवाड बन्द किये और दिया जलाकर उजाला किया। नियमानुसार बासी रोटी के टुकडे करके उन्हे अबाबीलो के घोसले के पास एक ताकचे मे डाल दिया। "अरे ओ बिन्दू! अरे ओ नूरु!!" उसने पुकारा लेकिन वे बाहर न निकले। घोसले मे जो झाँका तो चारो अपने परो मे सिर दिये सहमे बैठे थे। ठीक जिस स्थान पर छत मे घोसला था वहाँ एक छिद्र था और उसमे से वर्षा का पानी टपक रहा था। यदि कुछ देर यह पानी इसी तरह आता रहा तो घोसला तबाह हो जायगा और बेचारी अबाबीलें बेघर हो जाएगी। यह सोचकर उसने किवाड खोले और मूसलाधार वर्षा मे सीढ़ी लगाकर छत पर चढ गया। जब मिट्टी डालकर छिद्र को बन्द करके वह नीचे उतरा तो वह पानी मे बेतरह भीग चुका था। पलग पर जाकर बैठा तो कई छीकें आई लेकिन उसने परवाह न की और गीले कपडो को निचोड, चादर ओढकर सो गया। अगले दिन सुबह को उठा तो पूरे बदन मे दर्द और सख्त बुखार था। कौन हाल पूछता और कौन दवा लाता? दो दिन इसी हालत मे पड़ा रहा।

जब दो दिन उसे खेत पर जाते हुए न देखा तो गाँव वालो को परेशानी हुई। कालू जमीदार और कई किसान शाम को उसे उसके झोपडे मे देखने आए। झाँककर देखा तो वह पलग पर पडा आप-ही-आप बाते कर रहा था—"अरे बिन्दू, अरे नूरू, कहाँ मर गए! आज तुम्हे कौन खाना देगा?" कुछ अबाबीलें कमरे मे फडफडा रही थी।

"बेचारा पागल हो गया है!" कालू जमीदार ने सिर हिलाकर कहा, "सुबह अस्पताल वालो को खबर दे देगे कि इसे पागलखाने भिजवा दें।"

दूसरे दिन सुबह को जब उसके पडोसी अस्पताल वालो को लेकर आए और उसके झोपडे का दरवाजा खोला तो वह मर चुका था। उसके पाँव के निकट चार अबाबीले सिर झुकाए खामोश बैठी थी।

बलवन्तसिंह



जून १६३६ को जिला गुजरावाला मे एक छोटे-से गाँव मे पैदा हुआ। माँ-बाप का इकलौता बेटा था लेकिन मुँह मे चाँदी के चम्मच की बजाय सदा लोहे का चम्मच रहा। कद, जैसे 'दो-चार हाथ जब कि लबे बाम रह गया'। रग गोरा। शक्ल-सूरत कुछ ऐसी कि सुशील महिलाओ के विचार मे 'बुरा तो नहीं।' प्रारम्भिक शिक्षा कैम्ब्रिज प्रोप्राइटी स्कूल, ह्वाइट हाउस, देहरादून। एफ० ए० क्रिश्चियन कालेज इलाहाबाद। बी० ए० इलाहाबाद युनिवर्सिटी। एम० ए० के लिए १६४२ मे लाहौर गया लेकिन दाखला न हो सका। लाहौर मे रहकर कई साल तक तरह-तरह के पापड बेलने का हुनर सीखा—लाहौर से भागा (पाकिस्तान बनने पर) तो देहली मे उर्दू 'आजकल' के सम्पादन विभाग मे नियुक्त हो गया। १६५० मे पिता का देहात हो गया और मुझे इलाहाबाद मे अपना रिहायशी होटल सभालना पडा। फर्वरी १६५२ मे शादी-खाना बादी हो गई। जीवन-भर घर से भागता रहा, इसलिए पेट भरकर फाके किये—कुछ दिनो तक दिल ही दिल मे लाल (Red) भी रहा। समस्त 'वादो' (Isms) पर विचार किया करता हूँ अर्थात् सोचा भी करता हूँ।

चार कहानी सग्रह 'जग्गा', 'तार-ओ-पोद', 'सुनहरा देस', और 'हिन्दोस्तान हमारा' प्रकाशित हो चुके है। एक उपन्यास 'रात, चोर और चाँद' हिन्दी मे छप चुका है, लेकिन उर्दू मे छपने की अभी तक नौबत नहीं आई।

पता : इम्पीरियल होटल, चौक, इलाहाबाद।

बलवन्तसिंह ने जब कहानियाँ लिखनी शुरू कीं तो कोई खास शोर न मचा, और वह चुपचाप पंजाब के देहातो और देहातियो के बारे मे कहानियाँ लिखता रहा। लेकिन अब हालत यह है कि उसके बारे मे लगभग समस्त आलोचको की राय बहुत अच्छी है और उसकी गणना उर्दू के प्रथम श्रेणी के कहानीकारो मे होती है। वह कुछ ऐसे विषयो को अपनी रचनाओ मे लाया है कि जिनसे उर्दू कहानी अभी तक वचित थी और जो हर किसी के बस की बात भी न थी। उसकी कहानियो के अधिकतर पात्र चोर, डाकू, हत्यारे आदि अस्वस्थ पात्र हैं जो जरा-जरा-सी बात पर विपक्षी का सिर उडा देते हैं और इतने काम-ग्रस्त है कि किसी कायदे-कानून की परवा नहीं करते और बलात्कार तक करने से नही झिझकते। पजाब के देहातो के अतिरिक्त उसने शहरो का भी रुख किया है, लेकिन यहाँ भी उन्हीं पात्रों को चुना है जो ऊपर से बड़े सदाचारी, सज्जन और भद्र नजर आते हैं लेकिन उनके भीतर असाधारण मात्रा मे काम-वासना है और उसकी तृप्ति के लिए वे हर संभव-असभव कार्य कर गुजरते हैं। इस तरह से वह सआदत हसन मन्टो का अनुयायी है।

काश ! वह स्वस्थ पात्रो का भी निर्माण कर सकता।

जहाँ तक कहानी की तकनीक और शैली का सम्बन्ध है, बलवन्तसिंह अपने समकालीन कहानीकारो से किसी तरह पीछे नहीं। बल्कि मेरे खयाल मे यदि सादगी को कथा-शैली का सर्वश्रेष्ठ अंग समझ लिया जाये तो सआदत हसन मन्टो और उपेन्द्रनाथ अश्क के बाद केवल उसी का नाम लिया जा सकता है। उसकी रचनायें पढते हुए हमे किसी प्रकार की बनावट या मिलावट का अनुभव नहीं होता बल्कि ऐसा मालूम होता है जैसे वह सीधा हमसे सम्बोधित हो; और यही कारण है कि उसके अनुचित से अनुचित पात्रों से परिचित होते हुए भी हमारे माथे पर बल नहीं आता बल्कि हमारे हृदय मे उनके प्रति एक अस्पष्ट-सी सहानुभूति उत्पन्न हो जाती है।

बाबा महंगासिंह

एक हमारे मामू साहब है जो शहर मे किसी-न-किसी काम से आते रहते है। रात अक्सर मेरे यहाँ ही गुज़ारते है और जब विदा होने लगते है तो मुझे अपने साथ ले जाने का आग्रह करते है। मुझे गाँव से कोई दिलचस्पी नही है। खुली हवा, दूध, दही और सीधे-सादे भोले-भाले लोगो से मेरा क्या सम्बन्ध ? मैं दूध की बजाय चाय पीना पसद करता हूँ। खुली हवा की बजाय कॉफी-हाउस का धुआधार वातावरण मुझे अधिक अच्छा मालूम होता है। गाँव के सीधे-सादे लोगो से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने की अपेक्षा मैं आराम-कुर्सी पर बैठकर किसी मित्र के साथ उन बेचारो की परिस्थितियो पर बातचीत करना अधिक अच्छा समझता हूँ। शहर के स्वास्थ्य-नाशक वायुमडल मे चालीस वर्ष तक जीने को मैं गाँव मे अस्सी वर्ष तक जीवित रहने पर प्रधानता देता हूँ··· लेकिन मामू साहब के आग्रह से विवश होकर एक बार मुझे गाँव मे जाना ही पडा।

गाँव मे पहुँचकर मुझे बिल्कुल निराशा नही हुई, बल्कि यह प्रसन्नता हुई कि गाँव के बारे मे मेरे जो विचार थे, वे ठीक निकले। अब हर ओर खुली हवा थी, कोई अच्छा मकान नही, कोई सिनेमा नही, कोई कार नही, कोई कम्यूनिस्ट नही, बस खुली हवा है और मुझे इस बात पर खुश होने का

निमन्त्रण दिया जा रहा था। मैं मामू के मकान के बाहर वाले कमरे मे बैठा जमाहियाँ लिया करता। घर के सामने खुली जगह मे मामू साहव की भैंस खडी दुम हिलाया करती। कभी-कभी मेरी ओर देखती—कहो बेटा! दूध पियोगे—मक्खन चाटोगे—दही खाओगे? ' मैं कहता, 'मैडम! आप दूध की बजाय गरम चाय क्यो नही देती, मालूम होता है कि आप चाय के मजे से वाकिफ नही, नही तो ''।' भैंस भी आखिर देहातिन ठहरी, बात-बात पर सींग हिलाने लगती और फिर अपने अपमान पर खिन्न हो बडी उदासीनता मे पूरब की ओर देखने लगती और मैं टाई की गिरह ढीली करके पश्चिम की ओर नजर जमा देता।

दो दिन वाद ही मुझे पूरा विश्वास हो गया कि इस जगह मेरे देखने की कोई चीज नही हे, हाँ मैं गाँव वालो के देखने की चीज अवश्य हूँ। मामू साहव मुझे अपने साथ लेकर वाहर निकलते और जो जानने वाला मिलता (और गाँव मे कोई ऐसा व्यक्ति नही था जो उनका जानने वाला न हो) उससे बडे व्यौरेवार मेरी चर्चा करते। वे लोग मुझे सिर से पाँव तक आँखें फाड-फाडकर देखने लगते—उनके इस व्यवहार से मैं भूल ही गया कि मुझे भी यहाँ कुछ देखना है। ''और वे प्यारी-प्यारी देहाती लडकियाँ—जिनकी तरबूज-तरबूज भर छातियाँ, जिन्हे देहाती सचमुच छातियाँ समझते है 'और उनके वे गोबर मे सने हुए हाथ, जिन्हे फैलाकर वे ऐसे नि सकोच ढग से मेरी ओर देखती थी कि मैं अपने आपको विल्कुल मूर्ख प्रकट करने लगता। आख-बाण मारना तो एक ओर, मुस्कराने तक का साहस न होता था—और बेचारे भोले-भाले नौजवान, जिनकी मुखाकृति से मालूम होता था कि यदि मेरे साथ मेरे मामू न होते तो वे एक टके के लिए मेरी हत्या कर डालने मे सकोच न करते।

इस वातावरण मे मेरे लिए और अधिक समय तक जीवित रहना असभव हुआ जा रहा था। मुझे बडे आयोजनो से वहाँ ले जाया गया था और मैं बडे अद्वितीय ढग से वहाँ गया था, इसलिए दो दिन वाद ही वहाँ से लौट आना विल्कुल अनुचित मालूम होता था। न जाने, मैं क्या कर गुज़रता, यदि सचमुच

मेरे मनोरंजन का साधन न जुटता। अन्य चीजो के अतिरिक्त मेरे दिल मे सब से अधिक आकर्षण सरदार महंगासिंह के प्रति उत्पन्न हुआ।

एक दिन प्रात समय जबकि मामू साहब मुझे पूरा आध सेर ताजा दुहा हुआ दूध पिलाने पर उतारू थे सरदार महंगासिंह उधर से गुजरा। मामू से राम-सलाम थी। "वाहगुरु जी की फतह" कहकर आगे बढ गये। और फिर मुझे मामू जी की बातो से मालूम हुआ कि मुझे उनसे शिक्षा लेनी चाहिए। वह क्यो? अब सरदार महंगासिंह की आयु तीन कम अस्सी वर्ष की थी लेकिन इस आयु मे भी दो-चार सेर दूध एक ही सास मे पी लेना उनके लिए कोई असाधारण बात नही थी, और इधर मैं, जो नौजवान था, आध सेर दूध भी नही पी सकता, और जब सरदार महंगासिंह जवान था तो वह दूध से भरे हुए घडे को मुँह लगा दिया करता था।

"पीने के लिए?"

"और नही तो क्या?"

मैं खेतो मे गायब हो चुके महंगासिंह की ओर देखने लगा। उसका वह ऊँचा कद, लम्बी दाढी और बडे-बडे हाथ-पाँव...

"काम क्या करता है?"

"कुछ नही, अपनी ज़मीन की देख-भाल करता है। पहले डाके डालता था, अब वाहगुरु की भक्ति करता है।"

मुझे महंगासिंह के व्यक्तित्व से दिलचस्पी हो गई। वह एक समझदार व्यक्ति था। राजनीतिक, आर्थिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयो पर वह बातचीत नही कर सकता था, लेकिन एक मनुष्य के रूप मे वह निःसदेह बहुत दिलचस्प था, उनका राक्षसो-जैसा डीलडौल, गैंडे की-सी मोटी चमडी, मुरब्बे की फूली हुई हरड-सी आँखें, घने बालो से ढकी हुई छाती, छाज ऐसे कान, प्राचीन आर्य महाराजाओ की तरह बटी हुई लम्बी दाढी और मूँछें देखकर किसी को इस बात का सन्देह तक न हो सकता था कि वह कोई मजेदार बात कह सकता है, या गुदगुदी करने वाले किसी चुटकले को सुनकर कहकहा लगा सकता है।

चान्दनी रातो मे गाँव से बाहर आमतौर पर नौजवान कबड्डी खेला करते

थे लेकिन अंधेरी रातो मे अक्सर महगासिंह को घेर लेते थे। महगासिंह के जीवन मे अनगिनत दिलचस्प घटनाएँ घट चुकी थी, वह उनकी सज़ाये भुगत चुका था और जिनके प्रमाण न मिल सके थे उन्हे ससार ने क्षमा कर दिया था। अब वह वाहगुरु का जाप किया करता या गाँव के नौजवानो को कोई मज़ेदार लतीफा सुना देता।

गाँव से लगभग दो-ढाई सौ गज़ दूर 'लफ्टैन की बगीची' थी, अर्थात् लैफ्टीनैंट का बाग। उसका यह नाम क्यो पड़ा, यह जानने की मैने कभी कोशिश नही की। ख़ैर, इस बागीचे के पास एक ऊँचा टीला था। महगासिंह रात का खाना खाने के बाद उस टीले पर जा बैठता और भक्तिरस मे डूबे हुए 'शबद' (भजन) अपने बेढब स्वर मे, लेकिन अपने खयाल मे बडी दर्द-भरी लय के साथ गाया करता। कुछ लोग उसके पास आ बैठते, और दाढियो पर हाथ फेर-फेरकर शब्दो के उच्चारण तथा अर्थो की सराहना करते। कभी-कभी भक्ति-रस तथा ज्ञान-ध्यान से एकाएक विमुख हो वे औरतो की बातें करने लगते। उनके बालो, आँखो, होटो, गरदन और छातियो से होते हुए गहराइयो तक उतर जाते। सब मिलकर बडी अश्लील बाते करते और जब जी भर जाता तो एकदम सारी बातचीत का एक बहुत उच्च नैतिक परिणाम निकाल लेते और फिर सब महाज्ञानियो की तरह जीवन को कच्चे घड़े का नाम देते हुए और मोक्ष की बाते करते हुए उठकर गाँव की ओर चल देते।

मेरा भी यह नियम हो गया कि शाम का खाना खाता और बाबा जी के टीले की ओर चल देता। बाबा महगासिंह आँखे मूँदे, गुरु-चरणो मे शीश नवाए या तो कपडे की बनी हुई माला जपते या 'शबद' गाते। जिस दिन का मैं अब जिक्र कर रहा हूँ, उस दिन भी सब लोग भक्ति-रस मे रसगुल्ले बने बैठे थे। न जाने औरतो की चर्चा कैसे और कहाँ से शुरू हुई। उस दिन नारी जाति पर एक नया आरोप लगाया गया, और महगासिंह ने पहले गुरु साहब के लिखे हुए 'स्त्रीचरित्र' का हवाला दिया और फिर उसका ज़िक्र छोटकर अपने निजी अनुभवो का बखान करने लगे···

सब लोग सरककर उनके समीप हो बैठे।

तारो के मद्धम प्रकाश मे जब महगासिंह ने इस नए विषय पर बोलने के लिए मुँह खोला तो उनकी आँखो मे एक नई चमक उत्पन्न हो गई। हवा मे लहराती हुई उनकी दाढी जैसे झूम-झूमकर प्रसन्नता प्रकट करने लगी।

"स्त्रियो की चालाकी ! हा हा पुरुष अपने आपको कितना ही बुद्धिमान क्यो न समझे, लेकिन स्त्री के सामने उसकी एक नही चलती। अब मैं अपनी आपबीती सुनाता हूँ जो इतनी आश्चर्यजनक है कि शायद तुम मे से कुछ लोगो को इस पर विश्वास भी न आए' "

हम सब उसके मुँह से निकला हुआ एक-एक शब्द बडे ध्यान से सुन रहे थे। असल बातें शुरू करने से पहले उसने बताया कि उस समय उसकी आयु तीस वर्ष के लगभग थी। वह बडा हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति था। घूँसा मारकर ईंट तोड डालता था। कई कमाल के डाके डाल चुका था। इलाके भर के लोग उसका नाम सुनकर थरथर काँपने लगते थे। पुलिस तक को साहस न होता था कि···

यह भूमिका काफी लम्बी थी। वे ये बाते पहले भी इतनी बार दुहरा चुके थे कि हम इन्हे सुन-सुनकर तग आ चुके थे, लेकिन न तो उन्हे टोका जा सकता था और न ही उन बातो का खण्डन किया जा सकता था, क्योकि इस आयु मे भी वे लडने-मरने को तैयार हो जाते थे।

"·· जिस घटना का अब मैं जिक्र करने वाला हूँ उससे पहले कई दिन कोई माल हाथ न लगा था। यो तो वाहगुरु का दिया सब कुछ था। और फिर अपनी भुजाओ के बल से भी बहुत कुछ कमाया था लेकिन बदन मे जान थी, ताकत का इस्तेमाल भी तो जरूरी था ना·· हाँ भई चरणसिंह ! तुम तो लगभग मेरी ही उम्र के हो ना ? तुम्हे याद है ? कीला के गाँव के इर्दगिर्द का इलाका कितना खतरनाक समझा जाता था "

"हाँ, मुझे याद है। वहाँ बडे-बडे वृक्षो के झुण्ड और झाड़ियाँ कोसो तक चली गई थी, जगल ही जगल था "

महगासिंह ने फिर बात शुरू की—"बडा सुनसान इलाका था, वहाँ या तो भेड़िये रहते थे या डाकू छिपते थे। मुझे भी कभी-कभी वहाँ पनाह लेनी

पड़ती थीं'' एक बार काफी दिनो तक वहाँ छुपे रहने के बाद मैंने अपने घर जाने की ठानी—महीनो से घर वालो को मेरी और मुझे उनकी कोई खबर न मिली थी। मैंने दो-तीन साथियों को ताकीद कर दी कि मैं ज्यादह से ज्यादह आठ-दस दिन तक लौट आऊँगा और अगर न लौटूँ तो समझना कि गिरफ्तार हो गया हूँ, फिर मुझे जेल से छुडाने की कोशिश करना'''"

बाबा महगासिंह ने अपनी टाँगो को सहलाते हुए किंचित् विलम्ब के बाद कहा—"अपने गाँव तक चालीस कोस की बाट थी, सोचा रात को सफर किया करूँगा और दिन को कही छुप रहूँगा। जगल खत्म होते ही पहला गाँव 'कीला' था। रात आधी से ज्यादह निकल चुकी थी। मेरे हाथ मे एक लम्बा लठ और कमर से एक डेढ फुट की किरपान लटकी हुई थी। यह किरपान मैंने खालिस लोहे की बनवाई थी'''उस समय मुझे सिवाय जानवरो के और किसी का खतरा न था। कीला के लोग चूँकि बडे खतरनाक इलाके मे रहते थे इसलिए सर्दियो मे तो शाम पडते ही घरो मे घुस बैठते थे। मैं मजे से वाह-गुरु-वाहगुरु करता खेतो के बीचोबीच चला जा रहा था कि एकाएक जो मेरी नजर उठी तो मैने एक विचित्र दृश्य देखा' कीला से कई खेत इधर पेडो के झुण्ड के पीछे श्मशान और कब्रिस्तान साथ-साथ कुछ इस ढग से बने हुए थे कि अगर गाँव से एक तरफ देखा जाए तो सिवाय उन घने पेडो के और कुछ भी दिखाई नही देता था' देखता क्या हूँ कि कब्रिस्तान मे तेज रोशनी हो रही है। पहले मैंने सोचा, हो सकता है श्मशान मे कोई मुर्दा जलाया गया हो और आग अभी जल रही हो लेकिन यह रोशनी कुछ और ही तरह की थी और क्षण-प्रतिक्षण तेज हो रही थी ."

सब लोग बिना आँखे झपके महगासिंह की ओर देख रहे थे। महगासिंह ने दाढी पर हाथ फेरते हुए कहानी जारी रखी'''

"यह रोशनी देखकर मेरे मन मे कई विचार पैदा हुए। जरा सोचने की बात है कि ऐसी सुनसान जगह, अंधेरी रात, कडाके का जाडा, चारो ओर सन्नाटा और कब्रिस्तान मे बढती हुई रोशनी। पहले मैंने सोचा—हे मना, (ऐ मन) तुझे इन बातो से क्या लेना। सीधा रास्ता नापता चला जा, तुझे

मजिल तै करनी है, वाहगुरु की वाते वाहगुरु ही जाने।' लेकिन दिल को सन्तोष न हुआ और मैंने सोचा, देखूँ तो सही, आखिर मामला क्या है · · लो भाई! मैं अपना रास्ता छोडकर कब्रिस्तान की ओर हो लिया! कब्रिस्तान मुझसे काफी फासले पर था। ज्यो-ज्यो मैं करीव पहुँच रहा था, त्यो-त्यो रोशनी और साफ नजर आने लगी। कब्रिस्तान से कुछ दूर मैं रुक गया · · घनी झाडियो मे न केवल आग की रोशनी साफ-साफ दिखाई दे रही थी वल्कि वहाँ कोई जानदार चीज हिलती हुई दिखाई दी·· पहले सोचा, शायद मेरा भ्रम हो। चुपचाप खडा देखता रहा। यो मालूम हुआ, जैसे दो सीग हिल रहे हो। मै कदम नापता, पेडो की ओट लेता हुआ कुछ और निकट पहुँचा तो मुझे सिर से पाँव तक विल्कुल काली एक गाय दिखाई दी ·· · आग का एक-आध शोला झाडी के ऊपर लपकता हुआ दिखाई दे जाता था ·· वह काली गाय वीराने मे अकेली खडी हुई चुडैल का रूप मालूम होती थी। मैंने हमेशा वाहगुरु अकाल पुरख का भरोसा किया है · मै वाहगुरु का नाम लेकर और आगे वढा, फिर ठिठक गया। कुछ इस प्रकार का सदेह हो रहा था कि वहाँ कोई और जीव भी है। रात वडी अघेरी थी, पेडो के वे भाग जहाँ आग की रोशनी नही पहुँच रही थी, वडे भयानक दिखाई दे रहे थे। मैंने एक नजर अपने सिर के ऊपर डाली, टहनियो पर भी डाली कि कही वहाँ कोई छुपा न वैठा हो ''

हम लोग उसकी आवाज की गूज और शब्दो के जादू से वुत वने वैठे थे। फिर किसी की थरथराती हुई आवाज निकली—"फिर तुमने क्या देखा ·· · ·· ?"

"मैं फूँक-फूँककर कदम रख रहा था। एक पेड की ओट मे दूसरे पेड की ओट तक वडी सावधानी से चलता हुआ मैं विल्कुल निकट पहुँच गया। मैंने वडे-वडे वीरानो मे जीवन गुजारा है, जाने क्या-क्या देखा है, लेकिन जो दृश्य मैंने वहाँ देखा, वह मरते दम तक न भूलेगा · · गाय के पास ही एक कब्र के साथ वडा सा चूल्हा वना हुआ था। उसमे आग जल रही थी। कुछ वरतन पडे थे, पानी का एक कोरा मटका·· · उन सव चीजो के वीच एक औरत· ····"

"औरत ?" सबके मुँह से एकदम निकला।

"हाँ औरत ! बीस-इक्कीस साल की होगी, इतनी सुन्दर और जवान कि बता नही सकता। मैं तो उसे देखकर हक्का-बक्का रह गया। सोचा, न जाने यह परी है सचमुच की या किसी चुडैल ने परी का रूप धारा है! पेड के तने के साथ लगा हुआ मैं चुपचाप उसे देखता रहा ''' 'सोचने की बात है कि ऐसी काली रात को, आबादी से परे, वीराने बल्कि कब्रिस्तान मे किसी नौजवान और सुन्दर औरत का यह साहस कैसे हो सकता था। मैंने दिल मे कहा कि देखे, अब यह औरत क्या करती है''''''उसने मेरे देखते-देखते चूल्हे मे और लकडियाँ डाल दी। आग भभक उठी। फिर उसने सिर पर से दुपट्टा उतार दिया, उसके स्याह बाल दिखाई देने लगे। उसने लटो को खोला और फिर सारी चोटी खोलकर बाल बिखरा दिये और रुई की सदरी के बटन खोलने लगी। सदरी के नीचे एक मखमली वास्कट पहन रखी थी, उसके बटन खोलकर उसे भी उतार दिया और जब उसने कमीज के बटन भी खोलने शुरू किये तो मेरा दिल धडकने लगा '''' वाहगुरु' ' वाहगुरु ' ' बटन खोलने के बाद उल्टाकर कमीज़ को भी उतार दिया। अब उसके ऊपर के धड पर एक तार भी नही था। आप लोग मेरे आश्चर्य का अनुमान लगा सकते हैं। उस वक्त मुझे भी अपने इर्दगिर्द का कुछ होश न रहा। दिल धडक रहा था, न मालूम यह औरत क्या करने को है ? मैं एक बच्चे की-सी हैरानी के साथ उसकी ओर देखता रहा और अब जो उसने अपनी शलवार का नाडा खेंचा तो मैंने मुँह दूसरी ओर फेर लिया ' कुछ क्षणो तक मेरी हालत कुछ अजीब-सी रही। मैंने समझा कि यहाँ ज़रूर भूतो और चुडैलो का वास है। इतने मे पानी के गिरने की आवाज़े आने लगी। मैंने झिझकते हुए उस ओर नज़र डाली तो औरत ने पानी का मटका काली गाय के सिर पर सीगो मे फँसाकर रख दिया था। एक हाथ से उसने मटका थाम रखा था, दूसरे से लोटे भर-भरकर पानी अपने बदन पर डाल रही थी। नहाकर उसने एक चादर से बदन पोछा। बिना कपडे पहने उसने एक पिटारी मे से ज़ेवर निकालकर पहनने शुरु किये। अँगूठियाँ, गोखरू, चौंक, तोतीतड़ियाँ, कंठा, बाजूबन्द, बालियाँ मतलब यह कि

वह सिर से पाँव तक पीली हो गई ''

हम मे से किसी ने कहा, "ऐसी सरदी मे उसने कपडे नही पहने ?"

"नही ' यही तो हैरानी की बात है। अब उसने एक छोटी-सी मिट्टी की प्लेट पर से कपडा सरकाया। उसमे गुंधा हुआ आटा था। चूल्हे पर तवा रखा और आटे को पराठा बनाने के से ढँग मे फैलाया और तवे पर डाल दिया और उसे घी में तलने लगी 'अब मैं सोचने लगा कि मुझे क्या करना चाहिए ? मैंने सुना था कि परियो की कमर का पिछला भाग खोखला होता है यानी रीढ की हड्डी नही होती। दूसरे भूतो का साया नही होता और उस औरत का साया साफ नजर आ रहा था और फिर हर चीज़ इतनी साफ थी कि मैंने समझ लिया कि दाल मे कुछ काला है। एक तो भूतो-चुडैलो पर मेरा विश्वास नही था, दूसरे, उस औरत का मामला ऐसा अजीब था कि विश्वास न होता था कि वैसी सुन्दरी ऐसी सुनसान जगह पर आने का साहस कर सकती है। खैर ! अब मैंने कदम बढाया और उससे चन्द कदम पर खडी गाय की पीठ से टेक लगाकर खडा हो गया गाय के शरीर को छूकर मुझे पूरा विश्वास हो गया कि वह कोई असाधारण चीज नही है। अभी मैं खडा हुआ ही था कि उस औरत की नजर मेरे पाँव पर पडी और फिर एकाएक उसने नज़र उठा कर मेरी ओर देखा। सहसा उसकी शकल और से और हो गई—उसकी बाछे फैल गई, दाँत चमकने लगे, नथुने फैल गए, आँखे जैसे उबल पडी ' हाथो की उँगलियाँ अकड गई और वह बाल फैलाये—"कलेजा खालूँगी, कलेजा खालूँगी" कहती हुई मेरी ओर झपटी। उसकी आवाज सुनकर मुझे तसल्ली हो गई कि वह कोई औरत है, चुडैल नही। ज्यो ही वह मेरे निकट पहुँची, मैंने मुस्कराकर उसके दोनो हाथ पकड लिए। वह वहशियो की तरह हाथ काटने लगी। मैंने ज़ोर से उसे पीछे की तरफ ढकेल दिया। वह गिरते ही फिर उठकर मुझ मे गुत्थम-गुत्था हो गई। उस औरत मे बला की ताकत थी, लेकिन फिर भी मुझ से उसका क्या मुकाबला था। तग आकर मैंने उसके बालो को पकड लिया और खूब झझोडा और उसकी पीठ पर दो-तीन थप्प भी मारे, लेकिन कुछ इतने ज़ोर से कि उन्हे वह सह सके। फिर मैंने उसकी नाजुक गरदन को अपनी

लम्बी उँगलियो की पकड मे लेकर कहा—'देखो ! अगर ऐसी छिछोरी हरक करोगी तो मै तुम्हे जान से मार डालूंगा ' ।' वह बेचारी निढाल होकर ह रही थी । मैंने उसे परे ढकेलकर कहा, "ज़रा वहाँ खडी होकर बात क मुझ से ' ।"

" अब उसे इस बात का विश्वास हो गया कि मैं उसका सही रूप जा चुका हूँ, इसलिए बिना कुछ कहे-सुने उसने चुपचाप चादर उठाई और अप बदन पर लपेट ली और उसकी आँखे नीचे झुक गई । मैंने असल बात जान की कोशिश की । वह जमीन की ओर देखती रही और झिझक-झिझकक बाते करती रही । अब उसे मुझ से डर मालूम हो रहा था । उसकी बातो मालूम हुआ कि चार साल पहले उसकी शादी एक बडे साहूकार से हुई थ लेकिन अब तक सतान के लिए तरस रही थी और उसका पति दूसरी शाद पर तुला हुआ था । इधर वह परेशान थी । आखिर एक बूढी औरत ने उसे यह नुस्खा बताया कि काली गाय के सिर पर पानी का मटका रखकर कब्रि स्तान मे स्नान कर और वहीं से एक पराठा पकाकर ला और किसी सतान वाली औरत को खिला दे, तो उसके बच्चे मर जाएँगे और तेरे घर सतान होगी । मैंने यह सुना तो कहकहा लगाकर हँसा । उस समय आग की रोशनी मे वह गहनो से लदी हुई औरत बहुत सुन्दर दिखाई दे रही थी । मैंने आगे बढकर उसके गाल को छुआ । वह फौरन पीछे हट गई । कैसी नरम जिल्द थी उसके चेहरे की और कितनी भोली सूरत थी उसकी ! उसने कुछ क्रोध में आकर कहा 'तुम्हे मालूम होना चाहिये, मैं एक शरीफ घराने की औरत हूँ।' मैंने हँसकर कहा, मुझे मालूम है कि तू शरीफ औरत है, लेकिन ऐ शरीफ घराने की औरत ! मैं भी भले घर का आदमी हूँ । पराई स्त्री की ओर बुरी नज़र से देखना पाप समझता हूँ । गुरु का दिया खाता हूँ, बडी सख्त मजबूरी के सिवा कभी किसी पर हाथ नहीं उठाता, इसलिए तू बेफिक्र रह' ··· लेकिन यह बात सुन ले कि सतान प्राप्त करने का जो ढग तूने अपनाया है वह बहुत बडा पाप है । किसी का बुरा चाहना भले लोगो का काम नहीं । बड़े-बडे ऋषियों, गुरुओं,

नबियों, अर्थात् किसी ने भी संतान प्राप्त करने का यह ढंग नहीं बताया जो तू' '' यह कहकर मैंने कुछ दाढ़ी को सँवारा, कुछ पगड़ी को ठीक किया, अगोछे से मुँह और बालों की धूल पोंछी और भई मैं खासा कड़ियल जवान था ' ''वह मुस्करा दी ' '''।

बाबा महंगासिंह चुप हो गया। हमने कहा—"बाबा जी ! उसके बाद आपने कभी उससे मिलने की कोशिश की ?"

"हाँ, लेकिन फिर मुलाकात नहीं हुई 'मालूम होता है कि उसे मेरी कोई जरूरत ही नहीं रही होगी ' और यह भी हो सकता है कि वह मुझसे नाराज़ हो गई हो ।"

"क्या तुमने कोई नाराजगी की बात की थी ?"

"नहीं—उसे मेरी कोई हरकत नापसन्द नहीं थी, हाँ जब वह जाने लगी तो मैंने उसका कंठा पकड़ लिया । वह हैरान-सी रह गई, बोली—'तुम्हारा मतलब ?' मैंने जवाब दिया कि इससे पहले तो मेरा कोई मतलब ही नहीं था, मेरा असल मतलब यही है । उसने कहा कि 'अकेली जान कर मेरे जेवरों पर हाथ डाल रहे हो ।' मैंने जवाब दिया, 'चलो गाँव में जितने लोगों के सामने कहो तुम्हारे जेवर उतार लूँ ।' उसे मेरी यह तजवीज पसन्द न आई । उसने स्वयं ही सब जेवर मेरे हवाले कर दिए ।"

यह कहकर बाबा जी ने सिर झुका लिया और फिर जैसे ध्यान में मग्न हो गए । एक बुजुर्ग ने कहा, "देखा, ऐसी पाजी होती है औरतें "

लीजिये, मैं दिल में सोचने लगा, 'मारूँ घुटना, फूटे आँख ।' इस कहानी का कितना शानदार नैतिक परिणाम निकाला गया है । सब लोग आपस में औरतों की चालाकी और चरित्रहीनता की बातें करने लगे, लेकिन बाबा जी अधखुली आँखों से चुपचाप बैठे रहे ।

"वाहगुरु ! वाहगुरु !!" उनके होंठ हिले ।

मैंने उन्हें उदास देखकर पूछा—"बाबा जी ! आपने जो उस औरत के

जेवर उतार लिए, शायद अब आपको इस बात पर दुख हो रहा है ।"

बाबा जी के भारी पपोटे हिले और उन्होंने मेरी ओर स्नेह-भरी नजरों से देखते हुए ठडा साँस भरा और बोले—"नही, मुझे इसका दु ख नही, लेकिन दु ख इस बात का है कि पचास साल होने को आए, वाहगुरु अकाल पुरख ने मुझे वैसा मौका फिर कभी नही दिया ।"

अहमद नदीम क़ासमी



मेरा जन्म २० नवम्बर १९१६ को हुआ। मेरे गाँव का नाम 'अंगा' है जो जिला सरगोधा की एक सुन्दर वादी मे एक पहाड़ी पर आबाद है। मेरे बुज़ुर्ग इस्लाम के प्रचार का काम करते रहे हैं इसलिए लोगो ने उनके नाम के शुरू मे 'पीर' और आख़िर मे 'शाह' लगा दिए। इसीलिए मेरा नाम भी अहमद शाह रखा गया। वाद मे इस 'शाह' ने मुझे बहुत परेशान किया। और अब मैं सतुष्ट हूँ कि मुझे पीरजादा की बजाय अहमद नदीम कासमी के नाम से पुकारा जाता है।

१९३५ मे किसी तरह बी० ए० किया और कई साल तक यह उपाधि और खानदानी उपाधियो का पुलन्दा कन्धो पर रखकर नौकरी की भीख मांगता फिरा। मोहर्रिरी, क्लर्की, महकमा आबकारी और बेकारी—मैंने क्या-क्या पापड नहीं वेले।

'अदब-ए-लतीफ', 'सवेरा', 'नक़ूश' के सम्पादन के वाद आजकल लाहौर के वामपक्षी दैनिक समाचार-पत्र 'इमरोज' का सम्पादक हूँ। अब तक कविताओ के चार संग्रह और कहानियो के सात सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं।

और वरसाती नाले गरज रहे थे। किसी खोह मे एक गडरिया दुवका वैठा था। यह निकट से गुजरी तो गडरिया "चुडैल-चुडैल" पुकारता, चीखता, चिल्लाता, ककर उडाता अधेरे मे विलीन हो गया। दूसरे दिन चरवाहो ने वहुत दूर से इसे ढेरियो पर चकमाक चुनते देखा तो गडरिये के शोर मे सच्चाई की झलक दीख पडी। घरो के वाहर के दरवाजो पर तावीज़ लटकाये गये। किसानो के छप्परो के आस-पास पीरजी का 'दम' किया हुआ पानी छिडका जाने लगा और नम्वरदार ने मौलवी जी को ठीक मध्य मे विठाकर कहा कि यहाँ तीन वार कुरान-मजीद पढकर छू करो और पेट मे हवला भरो" सतासिह जो रावल-पिडी के फसादो का हाल सुनकर घर की चारदीवारी मे वन्द होकर रह गया था, वाहर निकला और मकान के ताले पर सिन्दूर छिडककर भीतर भाग गया और लाला चुन्नीलाल ने तुरन्त अडोस-पडोस के पण्डितो को एकत्रित किया और एक भजन-मण्डली स्थापित कर दी। हू-हक और राम नाम के जाप से गाँव भिडो के छत्ते की तरह सरसराने लगा। उस दिन पाठशाला भी वन्द रही क्योकि गाँव ने अपने हृदय के टुकडो को हृदय ही से लगाए रखा और पाठशाला के वरामदे मे वैठकर चुडैल की वाते करते रहे।

लेकिन कुछ ही दिनो के वाद मुराद ने गाँव-भर मे यह खवर फैला दी कि वह चुडैल नही है।

"चुडैल नही है ?" मौलवी जी ने पूछा "अरे भई, तुम्हे क्या मालूम कि सिकदर आज़म के जमाने मे काली ढेरी की चोटी पर एक हिन्दुस्तानी चुडैल ने एक यूनानी की खोपडी तोडकर उसका गूदा निगल लिया था। तव से उस ढेरी पर किसी ने कदम नही रखा और वहुधा देखा गया है, स्वय मैने देखा है, कि तूफानी रातो मे ढेरी पर दिये जलते हैं और तालिया वजती हैं और डरावने कहक़हो की आवाजे आती है—दादा से पूछ लो।"

दादा जिसे कुरान-मजीद की कई आयतो के अनुवाद से लेकर अवावीलो की चोच और गिद्ध की आँखो के मिश्रण मे एक राम-वाण सुरमे का नुस्खा तक याद था, वोला, "कौन नही जानता, कोई माँ का लाल ढेरी पर चढकर तो दिखाये। कहते हैं अकवर वादशाह दिल्ली से सिर्फ इसलिए यहाँ आया था कि उस चोटी का राज़ मालूम करे, लेकिन मारे डरके पलट गया था।"

मुराद बोला, "मेरी बात भी तो सुनो।"

"हाँ, हाँ, भई" दादा ने कहा "सचमुच, मुराद की बात भी तो सुनो, हमारे तुम्हारे जैसा नादान तो हे नही कि सुनी-सुनाई हाँक देगा। पढा-लिखा है। अग्रेज़ को उर्दू पढाता है फौज मे—कहो भई मुराद!"

और मुराद बोला "वह चुडैल नही, बडी खूबसूरत औरत है। इतने लम्बे और घने बाल हैं उसके कि मालूम होता है उसके बदन पर गाढे धुए का एक लहराता हुआ खोल-सा चढा हुआ है और रग तो इस गजब का है कि चाद की किरणो की ऐसी-तैसी। आँखे बादामी हे। पत्थर को टकटकी बाध के देखे तो चटखा के रख दे। पलके इतनी लम्बी और ऐमी शान से मुडी हुई कि तीर-कमान याद आजाये ' और दादा' •"

"कहते जाओ, कहते जाओ" दादा मुस्कराया।

मौलवी जी ने तस्बीह पर सैकडा समाप्त कर लिया था।

और मुराद बोला—"दादा, उसकी दोनो भवो के बीच एक नीली-सी बिंदिया भी है।"

"अरे" दादा जैसे सम्भलकर बैठ गया और मौलवी जी ने तस्वीह को मुट्ठी मे मरोड़कर हाथ उठाते हुए कहा

"मैं न कहता था कि वह काली ढेरी की चुडैल है जिसने यूनानी सिपाही की खोपडी का गूदा निकाला था। यह माथे की बिंदिया, हिन्दू औरत ही का तो निशान है।"

"खुदा लगती कहूँगा मुराद!" दादा बोला, "मौलवी जी की बात जँच रही है। नफल पढो शुक्राने के कि बचकर आगये हो, वरना—"

"नही, वह चुडैल नही है," मुराद के स्वर मे विश्वास था, "अगर चुडैल ऐसी ही होती है तो मैं अभी काली ढेरी पर जाने को तैयार हूँ—लेकिन दादा! मेरा दिल कहता है कि वह चुडैल नही है।"

"तो फिर कौन है वह आखिर ?" दादा ने लोगो की आँखो मे छिपे हुए प्रश्नो को मुंह से कह दिया।

"होगी कोई" मुराद बोला, "लेकिन दादा, सच कहता हूँ—ईरान भी देखा

है और इराक भी और मिसर भी। कही कश्मीरी सेव की-सी रगत थी तो कहीं चवेली की-सी, लेकिन यह गदम का-सा, नदी किनारे की रेत का-सा, सुनहरी सुनहरी रग—यह हमारे हिन्दुस्तान मे ही मिलता है।"

"हिन्दुस्तान मे और भी तो बहुत कुछ है" नम्बरदार का बेटा रहीम जो लाहौर के एक कालेज मे पढता था और बड़े दिनो की छुट्टियाँ गुजारने गाँव आया हुआ था, भारी-भारी पुस्तको की ओट से बोला—"यहाँ बगाल के गले-सडे ढाँचे भी है और बिहार के यतीम भी है और सारे हिन्दुस्तान की वे विधवाएँ भी हैं जिनकी लज्जा के रखवालो पर पूरब और पच्छिम के मैदानो मे गिद्धो, मछलियो और कीडो ने दावते उडाईं और जिनके रक्त की फुहार ने फासिज्म का फानूस बुझा दिया और जिनके लहू की गरमी ने कई और चिराग जलाये, और फिर हिन्दुस्तान मे तुम्हारे अमृतसर, रावलपिंडी और मुलतान भी तो हैं जहाँ केवल इसलिए औरतो की मान-मर्यादा नष्ट की जा रही है कि उनके माथे पर नीली-सी बिंदिया है···और जहाँ बच्चो को···"

"नही, नही भई" दादा बोला "बच्चो को नही। बच्चो को अभी तक किसी ने कुछ नही कहा।"

"बच्चे न सही" रहीम की आवाज़ काँपने लगी "मगर क्या बिंदिया वाली औरते और कडे वाले नौजवान और जनेऊ वाले बूढे मनुष्य नही हैं ? क्या वे किसी और दुनिया से टपक पडे हैं ? क्या उनकी आशाए और उमंगें मर चुकी हैं ? क्या उनकी छातियो मे दिल और दिलो मे···।"

एक नौजवान किसान ने टोका, "बात गदमी रग की हो रही थी मलिक जी !"

"और मै कह रहा था", रहीम बोला, "कि गदमी रग के अतिरिक्त और भी तो बहुत कुछ है दुनिया मे। अफ्रीका का हब्शी है। अमरीका का इण्डियन है, हिन्दुस्तान का अछूत है।"

"देखो भई रहीम !" दादा ने नर्मी से कहा, "असल मे बात हो रही थी उस चुडैल की" और दादा ने ढेरियो की ओर देखा जिन पर पच्छिमी क्षितिज पर छाई बदरियो की किरियो से सूर्यास्त की किरणें लालिमा मे नहाकर उतर

आई थी। "बात से बात यो निकलती है मलिक मेरे कि चुड़ैल का ज़िक्र आया। मुराद ने कहा, वह औरत है और औरत भी ऐसी कि देखो तो खुदा याद आ जाये और वहाँ से बात चली उसके रग की और रग तुम्हे बगाल और विहार ले गया—अच्छा बताओ, दो और दो कितने होते हैं ?"

"चार।" रहीम आश्चर्य से बोला।

"चार और चार ?"

"आठ।"

"बस ठीक है" बूढा बोला "ये है तुम पढे-लिखो की बाते। हम बेचारे गँवार, हम ये बाते क्या जाने ! हाँ तो मुराद ! तुम कहते हो चुड़ैल साँचे मे ढली हुई औरत है। अच्छा तो अब यह बताओ कि उसके बाद तुम्हारी आँख खुल गई थी ना ?"

एक कहकहा पडा और मुराद नाराज़ होकर बोला "स्वप्न की बातें नही दादा। विश्वास न आए तो कल चलो मेरे साथ, फिर से जवान न हो जाओ तो मूँछें कतर लेना मेरी·· "

"मूँछें तो खैर, तुमने पहले से कतर रखी हैं" दादा ने कहा, "लेकिन देखो अभी क्यो न चले सबके सब ?"

लेकिन मुराद ने कहा कि औरत का रात का ठिकाना उसे मालूम नही और फिर उसने बडी व्याख्या से बताया "बात यो हुई कि घास खत्म हो गई थी और इधर उत्तरी ढलान पर किसी मूर्ख ने रात की रात वह हाथ साफ किया है कि एक तिनका भी मिला हो तो कसम है। तुम जानते हो कि नौकरी से वापस आकर मैंने वारिस से एक बीघा ज़मीन खरीदी थी इन्ही पश्चिमी क्यारियो मे। सो मैंने कहा कि मेरी ही ताक मे तो होगी नही। चुपके से जाऊँगा और किसी ढलान से घास काटकर भाग निकलूँगा। दराँती के अतिरिक्त कुल्हाड़ी भी साथ लेता गया। अब करना खुदा का क्या हुआ कि मैं पगडंडी छोड़कर दबे पाँव लपका जा रहा था कि अचानक एक झाडी के पीछे से वह उठी जैसे हुक्के का कश लगाने से चिलम पर शोला उभरता है। कलेजा धक् से रह गया—वह सरपट भागी और झाडी से परे ढलान पर से उतर

गई—वह जहाँ नूरे के रेवड पर भेडिये ने हमला किया था—बस वहीं—अच्छा तो जब वह भागी है तो मैंने उसके पाँव की तरफ देखा जो बिलकुल सीधे थे, मेरी तुम्हारी तरह—और चुडैलो के पाँव उल्टे होते है ना।"

"हाँ भई चुडैलो के पाँव तो उल्टे होते है।" मौलवी जी दिलचस्पी ले रहे थे।

"और फिर दादा! उसके घने बाल यो उड़े जैसे—जैसे कोई नटखट बच्चा घनघोर घटा के एक लम्बे-से टुकडे मे धागा डालकर उसे उडाता फिरे।"

"आदमी बन, आदमी," दादा बिगड गया, "भूत-प्रेतो की बाते न कर। बादल का टुकडा उडाता फिरे! अबे सीधी तरह यो क्यो नही कहता कि—जैसे धुएँ की काली लहर या काली रेशम का ढेर।"

मौलवी जी बोल उठे "और वो माथे की बिंदिया! वह भूल गये?"

"लेकिन मौलवी जी" मुराद ने प्रार्थना-सी करते हुए कहा, "मुसलमान और ईसाई और पारसी सभी औरते बिंदिया लगाती है शहरो मे। इन आँखों से देखा है और फिर बिंदिया या कड़े या जनेऊ या मसवाक से बेचारी मानवता पर तो कोई आच नही आती। आप कैसी बातें करते हैं?"

दादा बोला, "सचमुच मौलवी जी, आपको वह मस्तमौला तो याद होगा, जिसके सिर पर ब्राह्मणो की-सी इतनी लम्बी चोटी थी और माथे पर तिलक लगाता था और कुरान मजीद का हाफिज था और कुएँ मे उतरकर खुदा को याद किया करता था।"

मौलवी जी ने कहा, "हाँ भई, वह मस्तमौला किसे याद नही? वह न होता तो उस साल इलाका अकाल की लपेट मे आ जाता। लेकिन उसने एक बार छडी उठाकर जैसे आसमान मे चुभो दी और वह बारिश हुई, वह बारिश हुई कि नदियाँ नालो मे और नाले दरियाओ में बदल गये थे।"

."कौन जाने यह भी कोई पहुँची हुई औरत हो" दादा ने कहा। तब लोगो के चेहरे गंभीर हो गये और मुराद ने स्थिति के इस नये पलटे मे लाभ उठाते हुए उठकर जाना चाहा।

"भई, पूरा किस्सा तो सुनाओ" लोगो ने माँग की।

और वह बोला, "चलो, नही सुनाते। झूठ था ना सब-कुछ, उसके बाद आँख खुल गई मेरी—बस ? अब तसल्ली हो गई होगी तुम सबको।"

दादा ने भी एकत्रित जनसमूह के बदलते हुए तेवर भाप लिये थे, बोला—"भई, बात से बात नही आई थी वरना—"

एकदम सब लोग चिल्ला उठे "अब इस किस्से को खत्म भी करो चचा—हाँ तो मुराद भैया, फिर क्या हुआ ?"

"होना क्या था ?" मुराद बनावटी रज़ामदी से बोला "बस मैं उसके पीछे-पीछे गया—और जब ढलान मे उतरा तो क्या देखता हूँ कि वह चकमाक के टुकडो की इतनी बडी ढेरी-सी लगाये बैठी है—चुपचाप, पलके तक नही झपकती उसकी ! और जब मुझे देखा तो उठ खडी हुई और फिर फूट-फूटकर रोने लगी और चिल्लाने लगी 'चले जाओ, चले जाओ, छूओ नही—मुझसे दूर रहो, चले जाओ' और वह हाथो मे मुँह छुपाकर और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। मैने अपनी पोटली खोलकर कहा, 'यह खाना रखे जा रहा हूँ तुम्हारे लिए'—और फिर मैं चला आया।"

लोग गलियो मे बिखर गये और दूसरे दिन सुबह की नमाज़ के बाद मौलवी जी ने नमाज़ियो को रोककर कहा "यह जरूरी नही कि वली और पहुँचे हुए लोग सिर्फ मर्दों मे से उठे। औरते भी तो इन्सान है। यद्यपि इस पहुँची हुई औरत के माथे पर बिंदी का निशान है लेकिन कौन जाने कि यही निशान उसकी बुज़ुर्गी का निशान हो—इस पहुँची हुई औरत को हमारे इलाके मे उतारकर अल्लाताला ने हम पर बडी कृपा की है। इसलिए भाइयो ! उसका सम्मान करो, उसकी खिदमत करो और विश्वास करो कि··" और उनका कण्ठ भर आया और स्वर घुट गया, और वह थोड़ी-सी दुआ माँगकर चादर से आँखे पोछते हुए बाहर निकल आये।

उसी दिन मौलवी जी से परामर्श करके जैलदार ने चौपाल पर पचायत बुलाई और फैसला हुआ कि बारी-बारी हर व्यक्ति उसे खाना पहुँचायेगा। तीन-चार सौ घरो का गाँव है। काफी समय के बाद दूसरी बारी आयेगी।

जब कही ऐसे लोग उतरते हैं तो मतलब यह होता है कि सभल जाओ, पुरा सब-कुछ देख रहा है।

रहीम सभल कर बोला, "लेकिन अब्बाजान ! एक औरत के लिए इतना प्रबन्ध ! हिन्दुस्तान के वे करोडो वाशिदे जिनके पास खाने को एक टुकडा नही, तन ढापने को एक धज्जी नही—उनके बारे मे क्या सोचा है आपने ?"

"क्यो बे मुराद" मौलवी जी ने रहीम की बात काट दी—"कपडे तो पहन रखे हैं ना उसने ?"

"जी हाँ," मुराद बोला, "है तो सही, लेकिन जरा—मेरा मतलब है जरा योही से है।"

"इन लोगो को लिबास की क्या परवा ?" मौलवी जी ने तस्बीह (माला) पर अपनी उगलियाँ तेज कर दी जैसे सारे नगधडग इन्सानो को ढापने निकले हो। "जिनकी लौ केवल खुदा से लगी है और जिनका बिस्तर घास और आसमान छत है और तारे चिराग है और फूल साथी हैं और ..."

"और चकमाक के टुकडे—ढेरो-ढेर" मुराद बोला।

उधर से रहीम झपटा "और आधियाँ, और तूफान, और बिजलियाँ, और झुलसाती हुई धूप और महावट की राते।"

लेकिन रहीम की ओर किसी ने ध्यान न दिया और गाँव वाले उस पहुँची हुई औरत के पास हर रोज सुबह-शाम खाना पहुँचाने की स्कीम पर ऐसे अमल करने लगे जैसे कुछ समय पहले वे थानेदार के लिए अडे और जगल के दारोगा के लिए घी और जिलेदार के लिए शहद के मर्तबान जुटाया करते थे।

नियम-विरुद्ध, अब मस्जिदे नमाजियो से भरी रहने लगी। गाँव पर एक विचित्र प्रकार का सन्नाटा छाया रहने लगा। औरते रातो को सोने से पहले रो-रोकर प्रार्थनाएँ करती—"माँ ! तुम जो वीरान ढेरियो पर रहती हो और गुलाबी चकमाक जमा करती हो और सुनसान घाटियो मे घूमती हो, तुम जिसने दुनिया पर लात मारकर केवल अपने पैदा करने वाले की ध्यान मे लौ लगा रखी है, तुम हमारे खेतो पर बारिशें बरसाओ और हमारी औलाद पर रहमते छिडको।"

कुछ ही महीनो मे पहुँची हुई औरत ने गाव वालो के दिलो मे वह स्थान प्राप्त कर लिया जो गाव की मसजिद या पनघट या पाठशाला का था। धीरे-धीरे आस-पास के गाँवो से भी लोग आने लगे और मसजिद के आगन मे खडे होकर उन ढेरियो की ओर मुँह उठाकर मागने लगे, "मेरा लडका सकुशल वापस आये।" "मेरी बेटी की बीमारियाँ दूर हो जाये!" "मेरे बैलो के खुर ठीक हो जाये!" और फिर बडे दिनो की छुट्टियो मे जब रहीम गाव आया तो बोला "यह वर क्यो नही मागते कि देश स्वतन्त्र हो जाने के बाद हम स्वतन्त्र देशो की तरह जीवित रहना सीखें और जमे हुए लहू की तहो को अपने दिलो पर से खुरच दे जिन्होने हमारी इन्सानियत को छुपा रखा है। न जाने गैरो की दासता का कलक हमारे माथे पर से कब मिटेगा! न जाने" " लेकिन दादा ने उसे हमेशा की तरह टोक दिया "भोले बच्चे! फरिश्तो ने हम लोगो को सजदा किया था। अब उन सजदो की सजा हम लोगो ही को तो भुगतनी है। बदगी हमारे भाग्य मे है बच्चे।"

"कैसी बाते करते हो दादा" रहीम का पूरा ज्ञान उसके कण्ठ मे आकर फँस गया "तुम क्या जानो कि हमने आजादी को अपने ही लहू मे भिगोकर नापाक कर दिया है और यह सब कुछ अब तक जारी है। अब तक हमारे घरो और सडक और खेतो पर लाशे बिखरी पडी है और बच्चे कुचले पडे है और औरतो के शरीरो पर लाज की एक धज्जी तक बाकी नही। तुम क्या जानो दुनिया मे क्या हो रहा है?"

दादा कब हार मानने वाला था, "वही कुछ हो रहा है जो यह पहुँची हुई औरत हमे रोज दिखाती है। चकमाक टकरा रहे है। चिगारियाँ झड़ रही है और उस वक्त तक झडती रहेगी जब तक सब चकमाक घिस नही जाते।"

"चकमाक भी घिस जाते है, दादा?" मुराद ने बच्चो की सी सरलता से पूछा।

"अबे घिसते नही तो टूटते जरूर है" दादा अपने सिद्धात के केन्द्र के गिर्द बराबर घूम रहा था।

और अचानक मुराद ने दूर भूरी पहाड़ियो पर नजरे दौडाई और वह अपने

मस्तिष्क मे कलाबाज़ी लगाकर फिर से एक चचल बालक बन गया—वह अपने साथियो के साथ चकमाक तलाश करता फिर रहा था। चोटियो से उतरकर वह ढलानो पर घूमा और वहाँ से घाटियो मे उतर आया। बरसाती नालो के गोल-गोल पत्थरो मे फसे हुए चकमाक चुनते समय उसने अनुभव किया कि ये पहाड और ये घाटियाँ अपने ज्वलत भडार लुटा चुकी है। इन गुलाबी टुकडो के अतिरिक्त जो उसकी और उसके साथियो की झोलियो मे थे, घाटियो पर दूर-दूर तक बिखरे हुए पत्थर गुलाबी और ऊदे रग से खाली है। धरती की कोख का शोला बुझ चुका है और जमा हुआ कुहरा चारो ओर से सिमटा आ रहा है, उसे जकड रहा है, उसे भीच रहा है।

"मुराद," दादा ने उसे झंझोड़ा, "काहिरा की गलियाँ तो नही याद आ रही ?"

"नही दादा," मुराद ने लम्बे-लम्बे बालो से ढके हुए सिर को झटकाया "मै सोच रहा था कि यह पहुँची हुई औरत सारा दिन चकमाक से चकमाक बजाती रहती है लेकिन इन घाटियो पर इतने चकमाक कहाँ से आ गये कि घिसे भी, टूटे भी और खत्म भी न हो।"

"सचमुच" दादा बोला "चकमाक तो खत्म हो जायेंगे।"

जैलदार ने आगे बढकर कहा, "भई सचमुच अगर चकमाक खत्म हो गये तो ?"

और जैलदार की बात कई जिह्वाओ पर से होती हुई मौलवी जी के कानो मे जा घुसी और उन्होने नमाज़ के बाद नमाज़ियो को सम्बोधित करके कहा—

"अल्लाताला अजलशाना ने हर किसी को अलग-अलग काम सौप रखे है। तुम हल चलाते हो और अनाज पैदा करते हो। यह फकीर तुम्हे परवरदिगार के अहकाम (आज्ञाएँ) सुनाता है और तुम्हे अपनी आकबत सँवारने को कहता है, और वह पहुँची हुई औरत जिसने किसी गुदाई इशारे से हमारी पहाडियो को नवाज़ा, दिन-भर चकमाक रगडती और चिगारियाँ बरसाती है। दुनियादारो के लिए उनका यह काम निरर्थक है लेकिन असल मे इन पहुँचे हुओ के प्रत्येक कार्य मे करोडो अलौकिक भेद छिपे होते है। मुझसे पूछो कि जब मै छिपा

काट रहा था तो मेरे करीब एक पहुँचे हुए बुजुर्ग बैठ गये। चालीस दिन तक बैठे रहे और जानते हो क्या करते रहे ? टीन के एक डिब्बे में ककरें बजाते रहे। दिन-रात वे उस डिब्बे को बजाते और बच्चों की तरह रोते और जिस दिन उन्होंने डिब्बे को ज़मीन पर पटख दिया तो जानते हो क्या हुआ ? सन् चौदह की लड़ाई शुरू हो गई।"

"सुबहान अल्लाह, सुबहान अल्लाह !" गाँव वालों ने पहलू बदले।

"और मेरे बुजुर्गो ! मेरे दोस्तो ! यह पहुँची हुई औरत चकमाक से चकमाक बजाती है और चिंगारियाँ बरसाता है। न जाने क्या कुछ होने वाला है ! लेकिन इससे पहले कि कुछ हो हमें कोशिश करनी चाहिये कि यह देवी हमसे निराश होकर किसी और तरफ न निकल जाए। तुम जानते हो कि हमारी पहाड़ियों पर इक्का-दुक्का ही चकमाक नजर आते हैं, और ये खत्म हो जायेंगे और इस तरह रहमत की बारिश खत्म हो जायगी—और मेरे भाइयो ! यह औरत तो खुदा का खास करम है वरना हम पापी किस योग्य हैं—हम बदबख्त जो जानते हैं कि मसजिद के तेल का कनस्तर परसों खत्म हो चुका है—लेकिन' "

मौलवी जी तेल के कनस्तर के बारे में बहुत-सी बातें करते रहे लेकिन सब लोगों के दिलों में चकमाक जमा करने की धुन समा चुकी थी और यह बात गाँव-गाँव घूम गई कि पहुँची हुई औरत को चकमाक के ढेर चाहिए और फिर कुछ ही दिनों के बाद इलाके-भर के लोग सिरों पर चकमाक भरी टोकरियाँ रखे, गधों पर चकमाक के बोरे लादे उस गाँव में आ निकले और जब मसजिद के आँगन के एक कोने में चकमाक की एक पहाड़ी-सी उभर आई तो पंचायत ने मिलकर फैसला किया कि कल इन पत्थरों को ऊँटों पर लाद कर चुपके से घाटी में फेंक आना चाहिये।

"तुम लोग" रहीम ने तेज-तेज चलते हुए दादा और मुराद को गली के मोड़ पर रोक लिया "तुम उजड्ड लोग—"

दादा ने भड़ककर कहा "और तुम्हारा अब्बा महा उजड्ड हुआ कि गाँव-भर का सरदार है—नाराज़ न होना भई ! गरीबी उजड्डपना नहीं, गरीबों को

उजड्ड न कहा करो, समझे ? अगर मै पढा-लिखा होता तो सच कहता हूँ, सूबे की लाटसाहवी तो कही नही गई थी ।"

"सुनो तो दादा" रहीम बोला, "तुम्हे तो हमेशा मज़ाक की सूझती है, तुम—तुम सादा-मिजाज लोग हो। तुम अब तक खान बहादुरो और नव्वाबजादो के लिए खून के बैंक हो—तुम अब तक—"

"भई कुछ कहना है तो कह भी चुको" दादा झल्ला गया "कैसी काटी-कुतरी बाते करने लगे हो अँग्रेज़ी पढकर—"

"मुराद" रहीम ने रुख बदला "मैं तुम से बाते कर रहा हूँ, मैं यह कहना चाहता हूँ कि तुम पर विदेशी शासक के कारिंदो ने इतने जुल्म ढाये है कि अगर तुम्हे जरा-सी भी पनाह मिल जाये तो यह समझते हो कि स्वर्ग की खिडकियाँ खुल गईं—तुम आयु-भर रईसो और सेठो की सजाई हुई नुमायशगाहो मे बिकाऊ पडे रहे हो और हजार-हज़ार बार बिकते रहे हो और जब तुम्हे कही से एक तावीज मिलता है तो यो समझते हो जैसे भाग्य की नकेल तुम्हारे हाथ मे आ गई।"

"भई रहीम" मुराद बेचैन हो उठा "दादा और मै सारवानो (ऊँट चलाने वालो) के यहाँ जा रहे है, साथ ही चावलो का प्रबन्ध करना है, ताकि लोग चकमाक पहुँचा कर आये तो गाँव की तरफ से उनकी दावत हो जाये, समझे ? हम ज़रा जल्दी मे है, तुम लाहौर कब जा रहे हो ?"

रहीम ने त्योरी चढाकर कहा, "यह पागल औरत तुम्हे कही का न रखेगी—"

"पागल औरत ?"—दादा और मुराद रहीम की बात खत्म होने से पहले ही पलटकर मसजिद की महराब को चूम रहे थे ।

दूसरे दिन सुबह-सवेरे ऊँटो की एक पंक्ति को मसजिद की गली मे लाया गया। ऊँटो के घुटनो पर बँधे हुए घुँघरुओ और गले मे लटकती हुई घंटियो की झनझनाहटो से सारा गाँव चौंक उठा। मौलवी जी ने तुरन्त घुघरू और घंटियाँ उतार लेने का आदेश दिया और कहा—"मेरे भाइयो ! एक तो घुंघरु घंटियो से पहुँची हुई औरत को तकलीफ होगी, दूसरे हम नुमायश को नही जा

रहे हैं। यह चकमाक तो मामूली चीज है। न जाने आगे चलकर हमें क्या-क्या कुर्बानियाँ देनी पड़े।"

तुरन्त घुँघरू और घंटियाँ उतार ली गई और यह काफला चुपचाप ढेरियो की ओर चला। दादा और मुराद पथप्रदर्शको की तरह आगे-आगे चल रहे थे और बाते कर रहे थे।

"दादा, मै तो कहता हूँ कि अगर उस पहुँची हुई औरत ने यही ठिकाना कर लिया तो हमारा गाँव अच्छा-खासा कस्बा बन जायेगा और चहल-पहल हो जायेगी।"

"धीरे-धीरे" दादा ने धीरे से कहा "किसी ने सुन लिया तो बात चल निकलेगी और कोई मनचला गीरीनियाँ जमा करने यही किसी ढेरी पर अड्डा जमा लेगा।"

"ठीक है दादा" मुराद बोला "लेकिन कभी यह भी सोचा है कि यह औरत आई कहाँ से है ?"

"अल्ला ने भेजी है।"

"अल्ला ने तो भेजी लेकिन भेजी कहाँ से है ?"

"कही से भी भेजी हो। हमे इससे क्या ? हमे आम खाने से मतलब है या पेड गिनने से ?"

और मुराद ने चुप साध ली।

जब काफला ढेरियो के कदमो मे पहुँचा तो सूरज अपना सारा सोना लुटा चुका था। जमीन को जाडा जकडने लगा था और झाडियो के पत्ते ठिठुर कर गोल-मोल होने लगे थे। ढेरियाँ जैसे ऊँघ रही थी और ऐसा मालूम होता था जैसे धरती की इन जड छातियो से सारी आत्मा निचुड चुकी है।

"उफ, कैसा हौल सा आने लगा है" दादा बोला "तुम यहाँ कैसे आते रहे हो मुराद ?"

और मुराद ने पलटकर गौरव से सारवानो की ओर देखा जिनके मुँह खुले थे और जिनके कानो की मुदरे जैसे प्रभु की स्तुति मे झूम रही थी और उनके कदम ऐसे आदर मे उठ रहे थे जैसे काच के फर्श पर चल रहे हैं।

मुराद ने कई ऊबड-खावड हिरते-फिरते रास्तो से काफले का नेतृत्व किया और फिर एक बरसाती नाले के ठीक बीच मे चकमाक का एक शोला भडका। सबके सब चुपके से पलटे। दूर से दादा ने आवाज़ दी "चलो भई मुराद।"

और मुराद ने पुकारा "आया दादा, आया।" और वह चट्टानो के ऊबड-खावड मोडो पर उगी हुई झाडियो पर बैठे हुए सब्ज रग के टिड्डो को चौंकाता हुआ पहुँची हुई औरत की तलाश करने लगा। गहरे गड्ढो मे झाँका। बरसाती नालो के चक्करो मे भटकता फिरा और जब चारो ओर जुगनू चमकने लगे, और कही दूर से एक टटीरी अन्धेरे मे बिलबिलाई तो उसने चकमाक के ढेर के पास आकर पूरे जोर से पुकारा—"खातून !"

उसकी आवाज़ चारो ओर तालियाँ पीटती, अन्धेरे मे गरजती, पहाडियो से टकराती खाइयो मे गिर गई और उत्तर मे उसे बहुत-से गीदडो की आवाजे सुनाई दी जो शायद उसकी आवाज़ से चौक उठे थे—"खातून !" उसने फिर पुकारा और पहाडियो ने उसकी आवाज को हवा मे उछाल दिया। देर तक वातावरण झनझनाता रहा। गीदडो की चीखें तेज़तर हो गई और आस-पास के टिड्डे मौन हो गए।

हैरान और निराश होकर वह गाँव को पलटा। उस समय चौपाल पर एक जन-समूह जुटा था। अलाव का शोला नाच रहा था और किसानो के गम्भीर चेहरो पर भय और आदर के मिले-जुले भाव धरना जमाये हुए थे। मुराद ने चौपाल मे कदम रखा तो लोग चौके। अलाव का शोला कमान की तरह लचक गया और दादा ने पुकारा, "कैसे अजीब लडके हो तुम ! हम तो सोच रहे थे कि तुम्हारी तलाश मे कुछ जवानो को भेजेंगे लेकिन काली ढेरी सब के दिमागो पर सवार है। रहीम मिया की हिम्मत भी जवाब दे गई है। तुम कहाँ थे अब तक ?"

"वह चली गई है कही" मुराद ने ये शब्द फेंक से दिये, जैसे वे देर से उसके होटो से लटक रहे थे।

"कौन ?" दादा का मुँह खुले का खुला रह गया।

"खातून !"

"चली गई ?"

सब पुकार उठे "कहाँ ?"

"न जाने कहाँ ?"

"तुमने उसे पुकारा ?"

"कई बार।"

"कहाँ-कहाँ ढूँढा ?"

"कहाँ-कहाँ नही ढूँढा ?"

"चली गई !" दादा निर्जीव-सा होकर दीवार से लग गया।

चौपाल के दरवाजे पर खडा एक लडका तीर की तरह लपका और मसजिद के आँगन मे जाकर पुकार उठा—"खातून चली गई।"

"चली गई !" नमाजी पुकार उठे।

और फिर कुछ ही क्षणो मे सारा गाँव जमा हो गया। मसजिद के दीपो की चमक से उडे हुए चेहरो पर पीलिमा पुती हुई थी। देर तक खुसर-पुसर होती रही। अन्त मे सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि कल सुवह की नमाज के वाद सब गाँव वाले ढेरियों पर जाये। एक-एक चट्टान, एक-एक झाडी को छान मारें और अगर खातून न मिले तो दूर तक उसकी खोज लगायें, उसका पीछा करें, उसे वापस ले आयें। "वरना यकीन कर लो कि कोई ऐसी भयकर आपत्ति टूटेगी कि सदियो तक कोई इस गाँव के खण्डहरो मे कदम न रखेगा।"

उस रात हर घर मे दिए जलते रहे। औरतें मालायें जपती रही और पुरुष देर तक मसजिद मे वैठे खुदा को याद करते रहे। चौपाल के हुक्के ठण्डे पड गये और किसान गठरियो की तरह खटोलो और पयाल पर सिमटे-सिकुडे वैठे रहे और जव सुवह हुई तो मौलवी जी मसजिद से वाहर आये। गाँव भर ने वडे दया-प्रार्थी ढग से दुआ के लिए हाथ उठाये और दादा और मुराद के नेतृत्व मे एक भीड ढेरियो की ओर वढी। औरतें छतो पर चढ आई थी। नन्हे वच्चे गलियो मे अवाक् से खडे थे। मौलवी जी जगह-जगह पलट-पलट कर कहते गये "अल्लाह को याद करो और दुआयें माँगो कि पहुँची हुई औरत हमे मिल जाये। वह न मिली तो एक ऐसा ज़लज़ला आएगा कि समुन्दर धरती

प चढ दौडेगे और ये ढेरियाँ टापू वन जायेगी। इसलिए अल्लाह को याद करो और दुआये माँगो कि पहुँची हुई औरत हमे मिल जाये। अल्लाह की राह मे कुर्बानियाँ दो और अल्लाह के घर मे शाम के वाद अन्धेरा न रहने दो। परसो से—"

ढेरियो के कदमो पर पहुँचकर भीड दादा और मुराद के परामर्श के अनुसार टोलियो मे वँट गई। विखरते हुए लोगो को दोनो देर तक आदेश देते रहे और फिर उस घाटी की ओर चल खडे हुए जहाँ एक दिन पहले उन्होंने चकमाक की एक पहाडी-सी उभार दी थी। यह पहाडी उसी हालत मे थी और गुलावी पत्थरो पर प्रतीक्षा की-सी स्थिति छाई हुई थी।

"वह जा चुकी है दादा।" मुराद ने चकमाक के ढेर के पास रुककर कहा, "वह जा चुकी है, अव वह यहाँ नही आएगी।"

"लेकिन तुमने काली ढेरी को भी देखा ?" दादा ने वनावनी-सी ऊँची पहाडी की ओर हाथ उठाया।

"देखा नही, लेकिन पुकारा ज़रूर था," मुराद बोला, "और दादा, मेरी पुकार कोरी पुकार नही थी। उसमे मेरी रूह रची हुई थी।"

दादा चौंका "रूह रची हुई थी ?" वह मुराद को और घूरने लगा।

"हाँ, दादा" मुराद ने एक चकमाक उठाकर मुट्ठी मे वद कर लिया।

"अव जवकि वह चला गई है, तुम्हे वता ही दूँ कि मैंने उसे—मैंने उसे" ... 'मुराद की आवाज भर्रा गई। पलट कर वह कही दूर देखने लगा और फिर चकमाक को ढेर पर गिराकर वोला "दादा, तुम हैरान हो गये ?"

दादा कुछ देर ख़ामोश रहा। फिर वोला, "मेरे ख़याल मे अव लौट चलें तो अच्छा है। वह जा चुकी है। उसे चले जाना चाहिए था।"

मुराद ने आश्चर्य मे दादा की ओर देखा—"क्या मोहव्वत करना गुनाह है दादा ?"

दादा निचले होंटो को दाँतो तले दवाकर कुछ सोचता रहा।

"दादा" मुराद ने पुकारा और वूढे को चुप पाकर आगे वढ गया।

"मुराद" वहुत देर के वाद दादा ने उसे आवाज़ दी, लेकिन मुराद काली ढेरी

का काफी भाग पार कर चुका था।

"मुराद!" दादा भयभीत-सा होकर मुराद की ओर भागा, "देखो मुराद, सिकन्दर के जमाने से लेकर अब तक इस ढेरी पर कोई नही गया। चुड़ैल की रूह हमारी खोपडी का गूदा तक नोच लेगी। वह वहाँ मौजूद है। वह सैकडो सदियो से वहाँ मौजूद है—मुराद! मुराद!"

लेकिन मुराद बराबर लपका चला गया और दादा उसे पुकारता रहा और पहाडियाँ गूँजती रही। आस-पास बिखरे हुए लोग दादा की ओर भागे और जब एक हजूम काली ढेरियो के कदमो मे जमा हो गया तो दादा बोला "अब वह नही आयेगा। खातून ने हमसे यह पहली कुर्बानी ली है—लेकिन दोस्तो! कितनी बडी कुर्बानी—मुराद की कुर्बानी!" वह अचानक बच्चो की तरह रोने लगा और फिर जली-बुझी चट्टानो का रुख करके बिलबिलाया "मुराद—ओ मुराद!"

"अब वह नही आयेगा" मौलवी जी बोले, "अभी उसकी खोपडी चटखने की आवाज आयेगी, और—"

"मौलवी!" दादा यो गरजा जैसे उसने मौलवी जी को कोई जबर्दस्त गाली देदी है। भीड अवाक्-सी रह गई। अब दादा फिर से कहने लगा "वह आयेगा—मुराद आयेगा।" आँखे फेरकर उसने काली भुजग चट्टानो की ओर देखा और फिर सिर झटक कर बोला, "नही, वह अब नही आयेगा।"

काफी देर तक लोग दादा को समझाते रहे क्योकि उस पर पागलपन-सा सवार था। उसकी आँखे उजड-सी गई थी और उसके होट कुछ इस प्रकार खुले थे, जैसे वह वर्षों का प्यासा है। मौलवी जी ने तस्बीह को बेतहाशा घुमाते हुए दादा के शरीर पर कई बार फूँके मारी और बिखरे हुए लोग एकत्रित होते रहे और परामर्श होते रहे कि मुराद को काली ढेरी मे किस तरह नीचे उतारा जाए।

"कैसे उतारा जाये!" रहीम ने भीड में से पुकारा, "दादा को अगर मुराद से इतनी ही मोहब्बत है तो हिम्मत करे। हम तो भई कोई अच्छी सी मौत मरेंगे। कौम की खातिर जान देंगे। सिकन्दर के जमाने की चुड़ैल के हाथो मे

अपनी खोपडी को गेद क्यो वनने दे ?"

"तुममे से खुदा की जात पर किसको विश्वास है ?" दादा ने किसी ऐसे भाव के वशीभूत हो पुकारा कि उसकी गर्दन की नसे फूल गई और दाढी के वाल अकड गए।

"हम सवको अल्ला-ताला की जात पर विश्वास है।" मौलवी जी ने तस्वीह को मुट्ठी मे समेटकर सारे गाँव का प्रतिनिधित्व किया।

"खुदा की जात वडी कि चुडैल की ?" दादा जैसे लोगो की परीक्षा ले रहा था।

मौलवी जी क्रोध और व्यग से हँसे "यह कुफ्र का कलमा है दादा ! सभल कर वोलो। यह भी कोई पूछने की वात है ? खुदावन्द ताला सवसे वडे हैं।"

"तो फिर चलो" उसने सेनापतियो की तरह वाहे हवा मे लहराई और वह काली ढेरी पर चढते हुए वोला, "खुदा की जात पर भरोसा है तो चलो मेरे साथ।"

"अरे !" मौलवी जी ने तस्वीह को सरपट दौडाना शुरु कर दिया।

"दिमाग चल गया है।" रहीम पीछे हटते हुए वोला। गाँव वाले क्षणभर के लिए मौन रहे और फिर एक साथ कह उठे—"दादा !"

लेकिन दादा आगे वढता चला गया।

"दादा !" गाँव वालो की पुकार ऊँची से ऊँची होती गई। और दादा चट्टानो के किनारो को जकडता सूखी-सडी झाडियो को थामता लपका चला गया।

और फिर अचानक भीड के कदमो तले ककर चीख उठे। लोग ढेरी की ओर लपके। "दादा," वे चिल्लाये, "हम भी आ रहे है दादा"—दादा ने पलट कर देखा। भीड उसकी ओर वढ रही थी, केवल मौलवी जी सिर झुकाये अकेले खडे थे और भीड को खोखली नजरो से घूर रहे थे और तस्वीह जोर से चल रही थी—और रहीम मौलवी जी और भीड़ के वीच ढेरी पर चढने की कोशिश यो कर रहा था जैसे जीवन मे पहली वार उसके कदमो ने ककरो का स्पर्ष अनुभव किया हो।

भीड दादा के पास पहुँची ही थी कि चोटी पर से आवाज आई—"दादा !"

यह आवाज शून्य मे चकराती हुई चारो ओर गूंज गई और मौलवी साहब एक बच्चे की तरह हुमक कर एक चट्टान पर चढ गये और रहीम ने तय किया हुआ मार्ग उल्टे कदमो से फिर से तय कर डाला।

"दादा !" जैसे काली ढेरी की चोटी पुकारी।

और दादा ने बडी मुश्किल से उत्तर दिया "मुराद बेटा !"

"वह नही गई—वह यही है।" आवाज आई।

और भीड यह सुनकर इस तेजी से चोटी की ओर भागी कि लुढकते हुए पत्थरो से बचने के लिए मौलवी जी बरसाती नाले के किनारे तक हट गये और रहीम इस तेजी से चोटी की ओर बढा जैसे चट्टानो और झाडियो पर से तैरता हुआ जा रहा हो।

कुछ ही क्षणो मे भीड चोटी पर जा पहुँची और फिर इस तरह थम गई जैसे उसके सामने एकाएक एक दीवार उभर आई हो। सबकी आँखें पथरा गई और चेहरो का रग उड गया।

सामने मुराद एक रोते हुए नवजात बच्चे को अपनी बाहो पर उठाए खडा था और कह रहा था "तुम हैरान हो रहे हो दादा ! पर इसमे हैरानी की क्या बात है ? यह तो एक नया इन्सान है ! पिछले चैत की हैवानियत ने इसे जन्म दिया है। यह तो मनो बहे हुए लहू का जौहर है। तुम एक दूसरे को मुबारकबाद क्यो नही देते ? दीवानी इन्सानियत की कोख से निकले हुए इस नये इन्सान को तुम हाथो-हाथ क्यो नही लेते ? और तुम यहाँ मेरे पास आकर और इस चोटी पर खडे होकर सारी दुनिया को यह क्यो नही बताते कि धरती की उजडी हुई माँग का सेंदूर फिर से चमक उठा है—दादा—दादा !"

"लेकिन उस औरत के माथे पर तो बिंदिया का निशान था," नीचे से मौलवी जी ने एक आपत्ति उछाली और मुराद ने पुकारा, "मगर बच्चे का माथा तो चाँद का टुकडा है।"

"चुडैलो के बच्चे ऐसे ही होते हैं।" मौलवी जी ने जैसे सारी दुनिया को

चेतावनी दी। हजूम एकदम दादा के नेतृत्व मे रहीम समेत नीचे की ओर पलटा और मुराद ने इनसानियत की नई-नवेली अमानत को अपने हाथो मे ऊपर उठा कर पुकारा—"क्या तुम मे एक इन्सान भी ऐसा नही है जो इस नये इन्सान को अपनी धरती के स्वर्ग मे वसा ले ? अगर नही तो याद रखो कि स्वर्ग से निकाला हुआ इन्सान अपनी एक नई धरती और एक नया स्वर्ग वसा सकता है और यह स्वर्ग तुम्हारे स्वर्ग के खडहरो पर उभरेगा—सुनते हो—अरे सुनते हो ?"

उत्तर मे चट्टानें तालियाँ पीटती रह गई।

हाजरा मसरूर



१७ जनवरी १९२९ को लखनऊ मे एक मध्य-वर्ग घराने मे मेरा जन्म हुआ। १९४२ मे अपनी बडी बहन खदीजा मस्तूर (जो स्वयं भी एक अच्छी कहानी-लेखिका हैं) की शरारत से मैने कहानियाँ लिखनी शुरू की और अब तक बराबर लिख रही हूँ। पाकिस्तान बनने पर लाहौर चली आई। यहाँ कुछ समय तक अहमद नदीम कासमी के साथ मासिक पत्रिका 'नकूश' का सम्पादन किया। १९४९ मे 'पाकिस्तान टाइम्स' के सहायक-सम्पादक अहमदअली से मेरा विवाह हुआ ; लेकिन इससे मेरे साहित्यिक जीवन मे कोई अन्तर नहीं आया। अब तक मेरे चार कहानी-सग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—'हाय अल्ला', 'छुपे चोरी,' 'चरके' और 'अँधेरे उजाले'।

इन दिनों ३२, जेल रोड पर लाहौर मे रहती हूँ।

एक वैद्य ने रोगी को दवा की गोलियाँ देते हुए कहा, "ये गोलियाँ काफी कड़वी है लेकिन यदि तुम इन्हे खा गये तो दूसरे दिन ही तुम्हारा रोग जाता रहेगा।"

रोगी का रोग दूर होने की अपेक्षा दूसरे दिन और भी बढ गया क्योंकि बहुत प्रयत्न करने पर भी वह उन गोलियो को कंठ से नीचे न उतार सका और उसे कै हो गई।

हाजरा मसरूर उन वैद्यो, जर्राहो मे से है जो रोगी के प्रति बडा स्नेह रखते हैं। कड़वी से कड़वी गोलियाँ देते है, लेकिन उन पर शक्कर चढाकर। तेज से तेज़ नश्तर चभोते हैं लेकिन रोगी के सामने मरहम की डिबिया रखना नहीं भूलते। यही कारण है कि हाजरा मसरूर की कहानियाँ पढकर पाठक मुँह बिगाड़ने या कै करने की बजाय यह सोचने पर विवश हो जाता है कि लेखिका ने स्वयं उसी की किसी दुखती रग पर उँगली रख दी है, उसकी सात पर्दों मे छुपी हुई उलझनों को बेपर्दा कर दिया है और यदि उसकी घोषणा या चिकित्सा के लिए किसी दूसरे के पास न जाकर वह स्वयं ही अपना तथा अपने समाज का विश्लेषण करे तो उसका मनोरथ सिद्ध हो सकता है।

एक सचेत कहानीकार की तरह हाजरा मसरूर ने अपने सामाजिक अनुभवों से वह बोध पा लिया है जिसके बिना आधुनिक समाज की कष्टप्रद समस्याएँ किसी प्रकार नही सुलझ सकती। उसकी कहानियो के पात्र जीते-जागते पात्र हैं जो अच्छे भी हैं और बुरे भी। उन अच्छे-बुरे पात्रो की मनोवैज्ञानिक दशा समझकर उनसे अपने विशेष ढँग से और अपने उद्देश्यानुसार काम लेने मे ही हाजरा मसरूर की विशेपता का भेद निहित है।

हाजरा मसरूर

पुराना मसीहा[1]

शयनगृह का वातावरण शाम ही से ऊँघ रहा था। जब कोई प्रोग्राम न हो तो ऐसा हो जाना कोई विचित्र बात नही। शरद् ऋतु की कोहरा-भरी रातो मे वाहर जाने का प्रोग्राम वनाते सभी का दिल भीतर ही भीतर कसमसाने लगता है। शायद यही कारण था कि कोई मित्र-परिचित भी न आया था, अन्यथा ड्राइग रूम मे अँगीठी के सामने वैठकर ससार-भर की समस्याओं पर ज़रा शान से वार्तालाप करने, कॉफी पीने और सूखे मेवे चवाने मे कुछ समय तो कट ही जाता और यह लम्वी-सी थरथराती रात ज़रा तो सिमट जाती। आज खाना भी जल्दी हो गया था। भूख खुलकर न लगी हो और ऊपर से ठोसना पड जाये तो मन यो भी वोझल हो जाता है—शयनगृह मे आकर उसके पति ने कुछ सावारण-सी वाते की और जाडे का भय दिलाकर उसे लिहाफ मे घुस आने का निमत्रण दिया। लेकिन जब वह उसे खाली-खाली नज़रो से देखने लगी तो उसने नग्नता आन्दोलन (Nudism) की एक सचित्र पत्रिका उठाली और लेटे-लेटे एक-एक पक्ति, एक-एक चित्र मे गहरी डुवकियाँ लगाने लगा—और तव से वह वडी वेचैनी से अँगीठी के पास एक स्टूल पर

१ जीवनदाता (हज़रत मसीह की उपाधि, जिनके वारे मे कहा जाता है कि मुर्दो को जीवित कर देते थे।)

लेकिन जो कडवी वेल एकदम मस्तिष्क मे बढी और चढी थी, वह सूखकर भी कही अलग न जा सकी बल्कि गीली मिट्टी मे सदा के लिए ऐसी खाद बन गई कि इधर कोई बीज पडा और उधर फूटा।

स्वभाव कुछ विचित्र-सा होकर रह गया था। जैसे पूरे ससार के दु ख-दद दूर करने की जिम्मेदारी उसी पर आ पडी हो। इसके लिए वह प्रार्थनायें करती, भिखारियो मे पैसे और खाना बाँटती, हस्पतालो मे निराश्रय लोगो को फल भिजवाती और अपने सम्बन्धियो, जाननेवालो तथा अपरिचितो तक के लिए कपडे सीती, स्वैटर बुनती, उनकी सेवा करती और उनके घरो के सुधार मे आगे-आगे रहती। अपने पति के मित्रो से मिलती तो उनके छोटे-छोटे रोमाटिक कष्ट सुनने और उन्हे दूर करने मे पूरा-पूरा योग देती। कोई सहेली उसके सामने अपने बच्चे को डाटती या पीटती तो वह दुखित होकर बच्चे को यो छाती से लगा लेती कि बच्चे की माँ लज्जित हो जाती। बस यो समझिये कि सारे जहाँ का दर्द उसके दिल मे था और यह दर्द, यह अनुभव-शक्ति उसके मस्तिष्क मे जाने कितने बीज बोती, पौधे लहलहाती और उसका अस्तित्व एक तुच्छ कीडे की तरह परेशानी मे डाल-डाल पात-पात घूमता और लिपटता फिरता '

लेकिन आज तो वह सदैव के विपरीत यह प्रयत्न कर रही थी कि अपने आपको नन्हे-से हेरान कीडे मे परिवर्तित न होने दे बल्कि इस नये लहलहाते हुए पौधे की ओर से बिलकुल निश्चिंत हो जाए। अनुभूति की रत्तीभर नमी भी उसकी जड़ो मे न जाने दे और इसीलिए वह इतनी देर से बैठी टाँगे हिला रही थी। बस जैसे वह अपने पूरे अस्तित्व को इस व्यर्थ-सी क्रिया मे व्यस्त रखकर थका देना चाहती हो और फिर गर्म-गर्म बिस्तर पर हर चीज़ से, यहाँ तक कि अपने पति से भी, निश्चिन्त होकर सो जाना चाहती थी। लेकिन इस प्रयास के बावजूद मस्तक से तो जैसे कोई वस्तु टप-टप करके ठीक दिल पर टपके जा रही थी, और यह अनुभव कितना कष्टप्रद था—जैसे जाड़े की रात मे झमाझम वर्षा हो और किसी गुदडी वाले की छत टपकने लगे—टप—टप—टप !

उसने घबराकर स्टूल को अगीठी के और निकट घसीट लिया और अपने ठडे हाथ शोलो के ऊपर ले गई, और अगीठी के शोलो को हाथो से

इस तरह काटने लगी जैसे कोई तलवार-बाज शत्रुओ के सिर काट रहा हो। वचपन मे उसे जाडो का यह खेल वहुत पसन्द था, लेकिन इस समय न जाने क्यो अनिच्छा से वह यही खेल खेलने लगी। श्वेत हाथ सुर्खी मे नहाते महराव तले पारे की रेखाओ की तरह नाचने लगे—नाचते रहे, यहाँ तक कि जमे हुए से शरीर मे ऊष्णता की लहरे दोडने लगी और कँधो मे थकन से मीठी-मीठी टीसे उठने लगी। आखिर उसने अपने गर्म-गर्म हाथ जोडकर जघाओ मे दवा लिए और फिर अपनी वच्चो जैसी हरकत के विचार से मुस्करा दी। वही अवोध सी विशेप मुस्कराहट जिसमे उसकी दयालु आँखो का प्रतिविम्व थरथराता था। मानो उसकी आत्मा की समस्त कोमलताये, समस्त आमुओ की लहरे उसके श्वेत समतल दातो से टकराती।

उसने सोचा इतनी वडी हो गई हूँ और ये हरकते—कोई देखे तो यही कहे कि इतरा रही है—लज्जित-सी होकर उसने अपने पति की ओर देखा, जिसके सुर्ख रग को गुलावी शेड मे से छनता हुआ प्रकाश और भी गहरा वनाये हुए था—हाथो मे वही पत्रिका थी जिसके एक पूरे पृष्ठ पर एक नगी स्त्री वाहे फैलाये जैसे आकाश मे उड जाना चाहती थी। उसे लगा जैसे उसका पति भट्टी से जवानी की गर्मी माँग रहा है—साथ ही एक वोझल-सी लहर की तरह यह विचार भी मस्तिष्क मे आ गया कि यदि उसका कोई वच्चा होता तो शोलो को काटने का यह खेल देखकर कैसी हैरान सी प्रसन्नता प्रकट करता—वच्चे की दवी हुई कामना ने उभरकर उसका कलेजा मसोस दिया और वह अभिलापायुक्त विवशता से इधर-उधर देखने लगी—कमरे की प्रत्येक वस्तु की ओर!—गुलावी प्रकाश मे शयन-गृह पके हुए फोडे की तरह तपता हुआ लग रहा था। उसने अपनी नजरे सख्ती से स्टैंड पर जमा दी, जिससे जरा दूरी पर उसके पति का गहरा लाल चेहरा नजर आ रहा था। स्टैंड से प्रकाश गर्म आह की तरह फूट रहा था और स्टैंड पर वनी हुई तितलियाँ और फूल वुझे-वुझे से थे—

"मेरा वच्चा, यदि मेरा कोई वच्चा होता तो कैसा होता, हा, तो वह कैसा होता ?" उसके मस्तिष्क मे एक प्रश्न उभरा और उसने उत्तर सोचना चाहा : शेड से फूटते हुए प्रकाश की तरह गुलावी, तितलियो की सी तेज और फूलो

जैसा खिला हुआ—लेकिन जाने कैसे उधड-फुदड कर बहुत से काले-कलूटे नकबहते रोगी बच्चे, पीप मे सने हुए उसकी सुन्दर उपमा पर ढह पडे—ढेर के ढेर—वही मज़दूर-बस्ती के बच्चे—जेठ-बैसाख की गर्मी मे कीचड मे लेटकर हापते हुए मरियल कुत्तो की सी आँखो वाले—और उनके पीछे अधेरे मे चमकती हुई दो आँखे, घृणा-भरी आँखे और वह आँखे उसके दिल पर यो चटखी जैसे आग पर पडा हुआ मक्की का दाना—और फिर एक सन्नाटा—जैसे भूतो के वासस्थान मे सहसा एक ताली गूज जाए—उसके बाद और भी गहरा सन्नाटा, और भी गहरा—वह अवाक्-सी बैठी रह गई। मन डूबने लगा और मस्तक की गीली मिट्टी मे जडे रेंग-रेंगकर लिपटने लगी और लहराता हुआ कटीला पैदा उन्मत्त हो झूमने लगा, झूमने लगा। उफ! स्वय को कितना घसीटा, कितना बहलाया लेकिन फिर वही—

"हाय भई मैं क्यो गई थी? क्यो गई थी वहाँ मरने?" पहली बार सारे उलझन के उसे अपने ऊपर कचकचाहट आ गई। यह कम्बख्त ड्राइग रूम की बातें भी कभी-कभी दुखती आत्मा पर दोहत्तड की तरह पडती है—अपने पति के मित्र चौधरी साहब के बारे मे पहले ही उनका यह ख़याल था कि वह एक बड़ी मिल के मालिक सही लेकिन दिल उनका बडा छोटा है, इतना छोटा कि उनके मुँह से जो बात भी निकलती हे सुनने वाले के गले मे फाँसी का फँदा बन जाती है। ससार की बडी-से-बडी बात हो रही हो, वह दबादबू कर कुछ इस प्रकार प्रस्तुत करते कि बैंक-बैलेंस के अतिरिक्त कुछ सुझाई न देता। उदाहरणत. शहर मे तो मलेरिया और हैज़ा फैल रहा है। चौधरी साहब आये ऐसी चिन्तित मुद्रा बनाये जैसे उन पर मलेरिया का आक्रमण होनेवाला हो—बात चली तो कहने लगे "जाने क्या बात है कि शहर मे कोई भी बीमारी फैले मज़दूर साले सब से पहले मरने लगते है—मैने एक औषधालय भी खुलवा रखा है, इस पर भी मज़दूर महीनो बीमार रहते है और मेरी सैकडो की हानि होती है।" चौधरी साहब का ढग उसे निचोडने लगा। वह नर्मी मे टोकने ही वाली थी कि उनका पति अचानक बोल उठा, "चौधरी साहब! आपके मिल मे कोई कम्यूनिस्ट तो नही?" और चौधरी साहब ने उत्तर दिया "नही! मेरे

यहाँ एक ऐसा हरामजादा घुसा तो था लेकिन मेरी सी० आई० डी० से कैसे बच पाता ? मैंने उसे एक झूठे दोष मे जेल भिजवा दिया—मुझे विश्वास है कि मेरे मजदूरो पर लाली-वाली का कोई असर नही।"

यह उत्तर सुनकर उसका पति कनपटी पर उगली बजा-बजाकर बडबडाने लगा—"तो फिर आखिर क्या कारण है कि आपके मजदूर महीनो बीमार रहते है !"

चौधरी साहब भी उसके पति के साथ सोच मे डूब गये लेकिन वह क्रोध मे भरी हुई बिल्ली की तरह फूली हुई भीतर ही भीतर गुर्रा रही थी कि ये चौधरी साहब कितने कमीने और बुद्धू है और उसका पति भी तो कुछ ऐसा ही है। निर्दयी कही के ! आराम से बैठे मजदूरो को गालियाँ देते है। यह नही होता कि उन्हे स्वास्थ्य-रक्षा के नियमो से जानकारी करायें। वह बडी देर तक अपने छोटे-से भावुक ससार मे बेचैन होती रही और दिल ही दिल मे महामारियो के दूर होने की प्रार्थना करती रही।

दूसरे ही दिन वह साधारण वस्त्रो मे मजदूर-बस्ती पहुँची। कीचड, पानी, कूडे के ढेर ! चप्पल धरती से चिपक-चिपक जाती। श्वेत कपडो की सरसराहट से कूडे के ढेरो पर से मक्खियाँ जैसे नशे मे गाती हुई उडती और उसके गिर्द नाचने लगती। नाके सुडसुडाते गदे बच्चे उसके पीछे लग रहे थे। नौजवान लडकियाँ उसे देख-देखकर झपाक-झपाक कोठरियो मे घुसकर किवाडो की आड से झाकती। स्त्रियाँ कोठरियो से निकल-निकल कर उसे आश्चर्य से देखती और लडके उसे देखकर नगे-नगे इशारे करते। वह यह सब देख रही थी और उसे लग रहा था कि वह चकराकर गिर पडेगी—आखिर वह यहाँ क्यो आई ? यह कौन-सी जगह है ? ये कैसे लोग है और उसकी शानदार आरामदेह कुर्सी यहाँ से कितनी दूर है ? ये प्रश्न घुटलाये हुए से उसके मस्तिष्क मे चकरा रहे थे और धरती उसके पाँव पकडे ले रही थी। वह बेबस होकर खडी हो गई। आखिर एक स्त्री ने डरते-डरते उसके निकट आकर धीमे स्वर मे पूछा, "मेम साहब, रास्ता भूल गई हो ?"

चक्कर मे कमी आ गई। उसने देखा प्रश्न करने वाली स्त्री की आँखें

चु धी है और उसकी गोद का वच्चा मुँह से अगूठा लगाये हँस रहा है—व कोई उत्तर न दे सकी।

"ईसाई वनाने वाली हो, मेम साहव ?" दूर से एक बूढी स्त्री ने ज़मी पर वलगम पटखकर पूछा।

और उसने घवराकर नकार मे सिर हिला दिया और कठिनतापूर्वक म हुए स्वर मे चु धी स्त्री से कहा, "वहन, मैं तुम से वाते करने आई हूँ।"

स्त्री ज़रा देर के लिए हैरान रह गई "मुझ से ?" वह वोली और फिर उसकी राह मे जैसे विछती हुई उसे अपनी कोठरी मे ले गई।

जल्दी से खाट पर से गुदड़ी उल्टी और उससे हाथ जोडकर पधारने को कहा और वच्चे को ज़मीन पर विठाकर अपना आचल ठीक करने लगी। वह झिझकी हुई भीतर आकर खाट पर वैठ गई। कोठरी मे हर ओर नज़र डाली। जाले लटक रहे थे, चूल्हे मे राख अटी हुई थी और जमीन मारे सीलन के चिपचिपा रही थी। वच्चे की ओर देखा। वह सीली ज़मीन पर गुड्डे की तरह वैठा अगूठा चूस रहा था और नन्हे-से पाव की फुडियो से पीप रिस रही थी। स्त्री गौरव से मुस्करा रही थी और कोठरी के दरवाज़े पर स्त्रियो के समूह मे म अधिकतर स्त्रियाँ उसे सदेह-भरी नजरो से देख रही थी और कुछ हँस रही थी। और उस ठट के पीछे उन नौजवान लडकियो की सख्या धीरे-धीरे वढ रही थी—जिनके चेहरे अभी-अभी धुले थे और जो अपने आचलो को वडे ही ठस्से मे वार-वार सभालती थी। वह यह सब कुछ देख रही थी और घवरा रही थी, लेकिन इसके वावजूद दिल मे तो जैसे सहानुभूति की कूक भरी हुई थी। वह कहती ही गई, वडे कोमल स्वर मे पलके झपका-झपकाकर—वहनो! अमीरी-गरीवी तो भगवान् की देन है लेकिन यह ज़रूरी नही कि गरीव जरूर गदे रहे। गरीव स्त्रिया चाहे तो अपने घरो को और स्वय को साफ-सुथरा रख सकती हैं और प्रतिदिन के रोगो का मुकाविला कर सकती हैं। अर्थात् उसने स्वास्थ्य-रक्षा के सारे मोटे-मोटे पुस्तकीय नियम समझा दिये। वच्चो वाली स्त्रियो को दिलचस्पी हुई और कई अपने वचो को गोद मे उठाये उगली पकडाये कोठरी के भीतर खिसक आई, लेकिन एक वुढिया मुँह फुलाये दहलीज़ पर वैठी रह-रहकर वुद-

बुडाती रही, "जिसने पैदा किया है, वही जिंदा भी रखता है। मक्खी कूडे पर बैठकर भी जीती है और हलवे पर भी"—चु धी स्त्री और दूसरी माये बुढिया की ओर क्रोधभरी नजरो से देखने लगी तो वह चुप हो गई। फिर स्त्रियाँ खाट की ओर दत्तचित हो गई जहा वह स्वास्थ्य तथा सफाई की मूर्ति वनी बैठी थी।

"मेम साहव ! मेरे वच्चे को खासी नही छोडती—कोई दवा वताओ।"

"मेम साहव ! मेरे वच्चे का सारा वदन फुडियो से भरा हुआ है।"

"मेम साहव ! मेरे वच्चे की आँखें हमेशा दुखती रहती है।"

"मेम साहव ! मुझे खुजली नही छोडती।"

एक स्त्री ने तो धीमे से उससे अपनी यौन सम्वन्धी रोगो की दवाये भी पूछ डाली और वह वडे विश्वास के साथ प्रत्येक रोग की दवा, घर और कपडो की सफाई और प्रतिदिन का स्नान वताती रही। कई स्त्रियाँ निराश होकर चुप हो गईं और कई बुढिया की पक्षपाती वन गईं और जव वह वहाँ से विदा होने लगी तो पूरी वस्ती मे केवल एक नौजवान शर्मीली लडकी और एक चु धी स्त्री उसकी आभारी थी। उन दोनो ने विश्वास दिलाया कि स्वास्थ्य-रक्षा के उन दो-तीन नियमो को कभी नही भूलेंगी और सदा व्यवहार मे लाती रहेंगी।

यह उसकी पहली विजय थी। उस रात उसने अपने 'ट्यूटर' को सपने मे मुस्कराते पाया।

उसके वाद वहुत दिन गुज़ार कर वह दोवारा गई तो उसका स्वागत केवल चु धी स्त्री ने किया और जल्दी-जल्दी वताया कि उसकी पक्षपाती नौजवान शर्मीली लडकी कपडे धोने के सावुन से मुँह धोकर ऐसी वाचाल हुई कि सिपी के साथ भाग गई।

और आज वह तीसरी वार मजदूर-वस्ती से अपनी एकमात्र मानने वाली से मिलकर आई थी और आई भी तो यो जैसे स्वय को वही खो आई हो।

वह घवराकर खड़ी हो गई। उसकी समझ मे नही आया, क्या करे ? उसका पति पूर्ववत् सचित्र पत्रिका मे डूवा हुआ था और प्रकाश वैसे ही टापक रहा था। उलझन मे उसने कंधे झटके और फिर शृंगार-मेज पर कुछ चीज़ें

उलट-पलट करने लगी। लेकिन हर प्रकार के सेंटो, क्रीमो और तेलो की मिली-जुली बू तीर की तरह मस्तक मे पहुँची—वही बू जिससे दिन में दो-चार बार सरोकार पडता था। यहाँ भी चैन न मिला तो लपककर कपडो की अलमारी खोल ली। रेशमी कपडो की तहे उजाड दी और न जाने उनमे क्या ढूंढने लगी—लेकिन जब उलटे-पलटे कपडो की पुरानी-पुरानी-सी बू नाक मे घुसी तो सारा निवारण धरा रह गया और फिर लाख बचाव के बावजूद जैसे वह ढलान पर लोटती उस बस्ती मे बेसुध होकर जा गिरी जहाँ की जमीन, दीवारो, कपडो और इन्सानो से एक पुरानेपन की बू उठती थी। जैसे वह पूरी बस्ती हवा और धूप से वंचित एक ढक्कने तले बन्द रही हो और वह ढक्कना अब उठ रहा हो, और पुरानेपन की बू फैल रही हो···

"उफ—उफ !" पाँव पटख-पटखकर कोई चीज छाती के भीतर ठुनकने और उलझने लगी। और वह फिर पागलो की तरह अगीठी के निकट स्टूल पर बैठकर पूरी शक्ति से टाँगे हिलाने लगी, लेकिन पुरानेपन की बू मस्तक मे यो बस चुकी थी कि उसे कमरे मे हर ओर से यही बू उठती महसूस होने लगी। वह बेबस जमी हुई बैठी थी और मस्तक के किसी छिद्र मे जैसे यह पुरानेपन की बू एक मोटी-सी धारा की तरह ठीक दिल पर गिर रही थी—गिरे जा रही थी—दिल डूब रहा था और आत्मा पर विषादपूर्ण अन्धकार उतरता आ रहा था ··

हाय, यह अन्धकार उसे चबा लेगा ! हाय, प्रकाश की कोई किरन ! ताजा हवा का कोई झोका। "ओह !" वह बेचैन होकर कराह उठी।

"क्यो क्या बात है डार्लिङ्ग ?" उसके पति ने पत्रिका छाती पर रख ली।

"मैं—मैं गई थी ना—"उसने मानो बन्द खिडकियो पर मुक्के मारने शुरु कर दिये।

"कहाँ ?" पति ने छत की ओर देखते हुए बेपरवाही मे पूछा।

"मजदूर-बस्ती !" उसने उत्तर दिया।

"हाँ, अच्छा, वह चौधरी साहब के मजदूरो के यहाँ ? तुमने बताया था कि दो एक स्त्रियो ने तुमसे साफ-सुथरा रहने का वायदा किया है। सासकर

वह तुम्हारी चुँधी स्त्री है ना ?" वह पत्रिका के चिकने कागज़ पर उंगलियाँ फेरने लगा।

"हाँ, लेकिन जब मैं दूसरी बार गई तो वह चुँधी स्त्री अपने बच्चे समेत वैसी ही मैली-कुचैली थी—समझे !"

"हाँ, इन लोगो की प्रवृत्ति ही ऐसी होती है डार्लिङ्ग।" पति ने जमाही लेकर उत्तर दिया।

"लेकिन मैं तो ऐसा नही समझती थी। इसलिए मैंने कारण पूछा तो उसने बताया कि मैं दो दिन पानी गर्म करके स्वय भी नहाई और बच्चे को भी नहलाया। लेकिन मेरा घरवाला मुझ पर बरसा कि रोज-रोज पानी गर्म करने को तेरे बाप के घर से लकडियाँ-उपले आयेंगे—फिर बताओ मेम साहब, तुम्हारी आज्ञा पर कैसे चले—वह उसी घबराए हुए स्वर मे बोलती गई।"

"ठीक कहा बेचारी के घरवाले ने—हा, आ ! बेचारे गरीब—अच्छा तो फिर बात क्या हुई ?" पति ने ठण्डा श्वास भरकर कहा।

"फिर मैंने उसे समझाया कि नहाने के लिए ताजा पानी अधिक अच्छा है। डाक्टरी की पुस्तको मे लिखा है। वह थोडी-सी किचकिचाहट के बाद मान गई। लेकिन—" वह कहते-कहते रुक गई और उसका पति बोलने लगा, "हाँ, सच डार्लिङ्ग ! ताजा पानी से नहाने के बहुत लाभ हैं—एक अमरीकन डाक्टर कहता है कि ' "

वह शून्य मे आँखें जमाए एकदम बात काटकर बोलने लगी। उसकी आवाज काप रही थी "और मैं आज भी वहाँ गई थी लेकिन चुँधी स्त्री और उसका बच्चा उसी प्रकार गन्दा था। मैंने पूछा तो कहने लगी, 'मेरे घर वाले ने बच्चे को ठण्डे पानी से नहलाते देख लिया और चूल्हे से जलती लकडी निकालकर मुझे पीटा कि बच्चे को सर्दी हो गई तो इलाज के लिए पैसे कहाँ से आयेंगे ? दवाखाने का रगदार पानी पीकर न भी मरना हुआ तो भी मर जायेगा।' यह कहकर उसने मुझे अपना जला हुआ बाजू दिखाया था—" यह कहते-कहते उसकी आवाज भर्रा गई।

"ये कम्बख्त गवार जानवर ही तो होते हैं, आओ लेट जाओ अब, तुम तो

बस फफोल बनकर रह गई हो। तुम्हे अपनी पोजीशन का खयाल रखते हुए ऐसी जगह जाना ही नही चाहिये था। ऐसी ही गरीबो से सहानुभूति है तो अनाथालय मे चन्दा दे दिया करो—आओ, अब सो जाओ"—पति ने कोमल स्वर मे कहा और उसकी ओर हाथ फैला दिये।

लेकिन उसकी आत्मा मे तो अभी सबसे बडा काटा खटक ही रहा था। वह बिलबिला कर कहने लगी, "सुनो तो, उसके बाद क्या हुआ था ?"

"क्या हुआ था ?" पति ने बेमजा-सा होकर अपने हाथ समेट लिये।

"जब वह अधी स्त्री अपना जला हुआ बाजू मुझे दिखा रही थी तो अचानक शेर की तरह गुर्राता हुआ उसका पति कोठरी से निकला और उसकी चोटी पकड कर घसीटता हुआ उसे कोठरी मे फैंक आया। उस अत्याचारी ने मेरे सामने बेचारी को बडी निर्दयता से पीटा और कहा, "मेम से मेरी शिकायत करती है हरामजादी—मेम से यह क्यो नही कहती कि इस बस्ती मे रहकर हम जितनी तनख्वाह मे गुजारा करो तो फिर पूछे हम—" उसकी थरथराती हुई आवाज आँसुओ मे बह गई।

"अच्छा !" पति एकदम पलग पर बैठ गया। तुमने मुझे पहले क्यो नही बताया ? मैं अभी चौधरी साहब को फोन करता हूँ—वह मजदूर नि सन्देह कम्यूनिस्ट है। तुम रो मत, लेट जाओ।" पति यह कहकर तेजी से दूसरे कमरे मे टेलीफोन करने चला गया।

और वह उसी प्रकार अगीठी के निकट स्टूल पर बैठी सिसकियाँ भरती रही। कमरा गुलाबी प्रकाश मे अब भी तपता हुआ मालूम हो रहा था और चारो ओर से पुरानेपन की बू अब भी उठती महसूस हो रही थी।

"हा, आ ! उपकार का कुछ मूल्य नही—हाय, यह दुनिया कितनी बुरी जगह है, कितनी पुरानी और कितनी बुरी—"वह अपने छोटे-से भावुक दायरे मे सिकुडा-सिमटी सिसक-सिसककर सोचती रही और उसका मन चाहता रहा कि वह नगी स्त्री के चित्र की तरह बाहे फैलाकर उड जाये, उडती जाये, यहाँ तक कि नीला, शात, रहस्यपूर्ण और ऊँचा आकाश उसे अपनी बाहो मे भीच ले।



प्रकाश पण्डित



मै १८५७ के विद्रोह-काल या १५ अगस्त के हंगाने मे उत्पन्न हो सकता था लेकिन बडी दयानतदारी के साथ मैंने ७ अक्तूबर १९२४ को चुपचाप उत्पन्न होना पसद किया। मेरे स्वर्गीय पिता का खयाल था कि मै निरोबी (अफ्रीका) मे उत्पन्न हुआ हूँ, लेकिन मेरा अपना खयाल यह है कि मै लायलपुर (पश्चिमी पंजाब) मे उत्पन्न हुआ हूँ। माता जीवित हैं लेकिन इसकी पुष्टि करके मैं स्वर्गीय पिता की आत्मा को और अपनी हठधर्मी को ठेस नहीं पहुँचाना चाहता। अत इन दोनो में से कोई बात भी सही हो सकती है।

बाल्यकाल, जिसके बारे मे सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास करना पडता है, तहसील हाफिजाबाद के एक नहर के 'बंगले' मे, लायलपुर तथा मजीठा, जिला अमृतसर, में (जहां का ईख और सरदार सुन्दरसिंह मजीठिया बहुत मशहूर हैं), और फिर अमृतसर मे व्यतीत हुआ।

लिखने का प्रारम्भ १९३९ मे हुआ जब मैं नवीं श्रेणी मे पढता था और कक्षा की पाठ्य-पुस्तकों के स्थान पर छुप-छुप कर बहराम डाकू के कारनामे पढ़ा करता था और पकड़े जाने पर माता और दादा के हाथो बेतरह पिटता था। लिखने की बाकायदा शुरुआत १९४४ में हुई जब किसी तरह मेरी एक कहानी उस समय की एक प्रसिद्ध पत्रिका में प्रकाशित हुई और मेरे ख़याल में पसंद भी की गई; और मैंने घटिया श्रेणी के साप्ताहिक फिल्मी पत्रों में

लिखने और फूले न समाने की बजाय कम लिखने और ज्यादा सोचने की आदत डाली। उस समय से अब तक पच्चास-एक कहानियां लिखी हैं (इनमें उससे पहले की लिखी हुई पच्चासो कहानिया शामिल नही हैं)। आजकल सम्पादको के तकाजो और आलोचको की प्रशसा के बावजूद साल में बस एक-आध कहानी लिखता हूँ जो उस साल के "बेहतरीन अदब" में इसलिए शामिल हो जाती है क्योंकि मै स्वयं इस पुस्तक प्रणाली के सम्पादको में से हूँ। एक समय से एक उपन्यास शुरू कर रखा है लेकिन न तो कोई ऐसा दिल वाला प्रकाशक मिलता है जो पाण्डुलिपि देखे बिना पेशगी रायल्टी दे दे और न मेरी परिस्थिति आज्ञा देती है कि पाण्डुलिपि तैयार करके किसी प्रकाशक से बात करूँ।

१९४७ के बाद लाहौर से देहली आना पड़ा। यहां पांच वर्ष तक 'शाह-राह' और 'प्रीत-लडी' (उर्दू की दो प्रसिद्ध प्रगतिशील मासिक पत्रिकायें) का सम्पादन करता रहा। आजकल 'फनकार' द्विमासिक और 'प्रीत-लड़ी' का सम्पादक हूँ और लोगो का कहना है कि बुरा सम्पादक नही। अब तक हिन्दी-उर्दू की लगभग ढाई दर्जन पुस्तको पर मेरा नाम लेखक, सम्पादक एव अनुवादक के रूप में प्रकाशित हो चुका है और मेरे एक कहानी-संग्रह 'सीरास' को आल-इण्डिया जर्नलिस्ट एसोसियेशन मैसूर १९५१ का सर्वोत्तम उर्दू कहानी-संग्रह नियत कर मुझे प्रथम पुरस्कार दे चुकी है। लेकिन मै सन्तुष्ट नहीं—काश कोई प्रकाशक मेरे उपन्यास को पूरा करने में मेरी सहायता करे, तीन वर्ष में जिसके मै केवल तीन परिच्छेद लिख पाया हूँ।

० ० ०

प्रत्यक्ष है कि अपनी कहानियो पर मैं स्वय आलोचना नही करना चाहता या नही कर सकता। यदि आप पसद करें और आपके पास फालतू पैसा और समय हो तो उर्दू सीखिये और मेरे कहानी-सग्रह पढिये या हिन्दी की वे पत्रिकायें ढूँढिये जिनमे मेरी कहानियाँ छपी है—इससे अधिक कुछ लिखूंगा तो मेरे प्रकाशक महोदय इसे मेरे परिचय की बजाय उर्दू भाषा का और मेरी पुस्तको का विज्ञापन समझ बैठेंगे—जो मैं चाहता तो हूँ लेकिन नही चाहता।

प्रकाश पण्डित

धनुक

आज भी अटकती-मटकती और मुस्कराहटें बखेरती हुई जब वह बाजार मे से गुज़र गई तो दुकानदार अर्थपूर्ण नज़रो से एक-दूसरे की ओर देख-देखकर आपस मे चेमेगोइयाँ करने लगे।

पिछले कई दिनो से वह कस्बे के प्रत्येक व्यक्ति के लिए एक पहेली-सी बनी हुई थी। जब कभी वह बाज़ार मे निकलती लोगो की नज़रें कुछ इस प्रकार उसकी ओर उठ जाती, मानो जीवन मे पहली बार उन्होंने किसी औरत को देखा हो और वे टकटकी बाँधे उस समय तक उसे देखते रहते, जब तक कि वह नज़रों से ओझल न हो जाती।

उस छोटे से कस्बे मे कुल दो-ढाई सौ घर थे और ले-देकर वही एक बाज़ार। उस बाज़ार मे भी इनी-गिनी दुकानें थी जिनमे साधारण आवश्यकता की सामग्री के अतिरिक्त किसी अन्य वस्तु की झलक तक न मिलती थी। एक सिरे से दूसरे सिरे तक उदासी, अपूर्णता और अव्यवस्था ही मुंह चिढा रही थी। प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे से कुछ इस प्रकार का रूखापन टपकता था मानो उसमे जीवन की किसी चेष्टा, उत्सुकता तथा अधीरता का आभास तक न हो। एक विशेष प्रकार की लालसा के वशीभूत जैसे न वे रो सकते हो न हँस सकते हो। रोने तथा हँसने के बीच अटके हुए निराश और अन्यमनस्क से वे अपना

जीवन बिता रहे थे। कुछ ऐसा प्रतीत होता था जैसे वहाँ के प्रत्येक प्राणी से कोई घोर अपराध हो चुका है और वह प्रायश्चित स्वरूप अपने जीवन को बुरी तरह हीन तथा उदास बना लेने पर विवश हो गया है।

दो सब्ज़ी बेचने वाले थे जो घटिया किस्म के आलू, सूखे सडे करेले, लुसलुसे बैंगन, पकी हुई तोरियाँ और कुछ इसी प्रकार की दूसरी चीज़े सुबह की गाहकी मे बेच-बट कर साँझ होने तक ऊँघते रहते।

एक हलवाई था जो दिन भर तेल की पकौडियाँ और जलेबियाँ तलता रहता। तेल की सडाँद आठो पहर वातावरण मे पैरती रहती। उसके कपडो, उसके शरीर बल्कि उसकी आत्मा मे भी तेल की दुर्गन्ध बस चुकी थी, जिससे शायद वह कभी मुक्त न हो सकता था।

एक नाई था जो सुबह लोगो के बाल छाँट चुकने के बाद दिनभर अपने अधे आइने मे झाँक-झाँक कर मोचने से चेहरे के फालतू बाल उडाता रहता या अपनी मोटी-मोटी मूछो पर ताव देता हुआ जाने क्या सोचकर अपने पडोसी अर्ज़ीनवीस की ओर घूरने लग जाता था।

अर्ज़ीनवीस आठो पहर गुमसुम बैठा शून्य मे निहारता रहता। उसके मरियल से शरीर पर चुस्त और धुले हुए वस्त्र उसका मजाक-सा उडाते नजर आते और नाक के बासे पर की ऐनक तो प्राय. लुढक-लुढककर अनुचित स्थान पर यो ही अटके रहने के विरुद्ध विद्रोह करती हुई दिखाई देती। कदाचित् शून्य मे भी सैंकडो प्रकार के धब्बे उसके साफ श्वेत वस्त्रो पर फब्तियाँ कसते हुए कह रहे होते थे—ज़रा अपने पडोसी की ओर तो देखो, मनुष्य के लिए उजले या सुन्दर वस्त्रो का होना इतना आवश्यक नही, जितना मूछो का, और वे भी कुछ ऐसी घनी कि उन पर अच्छी तरह ताव दिया जा सके।

अर्ज़ीनवीस के इधर एक पनवाडी था जो चुपचाप बैठा या तो पान की पीक निगलता रहता या सरोते से छालिया काटने मे निमग्न। कभी-कभी मीठे सोडे की रग-बिरगी बोतलो पर पानी भी छिडकता, जिससे दूकान के सामने बहुत-सा फुसफुसा कीचड जमा हो गया था। कभी-कभार उसकी आँखें उस कीचड मे भी धस कर रह जाती और कुछ देर के लिए उसके हाथ रुक जाते, लेकिन

फिर दूसरे ही क्षण मे वह कत्था चूना पान के पत्तो पर लथेड़ने लगता। उस श्वेत तथा लाल रग के सम्मिश्रण मे न जाने उसे क्या कुछ नज़र आ जाता कि पीक निगलने के साथ-साथ वह चुस्किया भी लेने लगता। शायद अपनी दूकान के आधे से अधिक पान वह स्वय ही खा जाता था।

बाये हाथ एक वैद्य का औपधालय था, जिसमे मटमैली चादर बिछी रहती। बिना शीशे की अलमारियो मे धूल से अटी तरह-तरह की छोटी-बडी शीशियाँ इस बात की गवाही देती मालूम होती कि महीनो से उन्हे छूने तक की आवश्यकता अनुभव नही की गई। एक गाव-तकिये के सहारे वैद्य बैठा दिन-भर बेकार लोगो से गप्पे हाँकता रहता।

सामने कपडे और आटे-दाने की एक साझी दूकान थी, जिसमे एक ओर खद्दर खाशा, लुधियाना और छींट के खुले-लिपटे थान इधर-उधर लुढकते रहते, और दूसरी ओर गुड तेल पर मक्खियाँ भनभनाती।

ऐसी ही अन्य दूकाने थी, जिनमे मनियार, रगसाज, बढई, लोहार, सुनार आदि शामिल थे।

कस्बे मे स्त्रियाँ बहुत ही कम नजर आती थी। कभी-कभार लम्बे-लम्बे घूँघटो मे चेहरा छिपाये सिमटी-सिमटायी कोई मूरत नज़र भी आती तो उनके युवा अथवा अधेड होने की पहचान कर सकना असम्भव हो जाता। जो भी दुल्हन कस्बे मे ब्याह कर लाई जाती, वहाँ की परम्पराओ के आगे सिर झुका देती। ऐसा लगता था जैसे पुरुषो ने अपनी स्त्रियो तक को अच्छी तरह न देखा था और स्वय स्त्रियाँ भी उनके चेहरे-मुहरे से अपरिचित थी। हर किसी की आत्मा भूखी थी और शरीर निढाल होते चले जा रहे थे।

लेकिन अब उस ईसाई उस्तानी के आ जाने से जैसे हर किसी ने अमृत पी लिया था। उनकी आत्मा का अणु-अणु शताब्दियो की गहरी नींद से एकदम जाग उठा और जैसे किसी असाधारण शक्ति ने उनके दिलो के दरवाजे एकदम चौपट खोल दिये। उनका ससार सुन्दर रगो से भर गया। जब भी वह अपनी रग-बिरगी पोशाक मे सुसज्जित, अधरो पर मुस्कान थामे उनके सामने से

गुज़रती तो हर कोई कुछ ऐसा अनुभव करने लगता मानो आकाश पर इन्द्रधनुष के सातो रंग निखर आये हो।

इस असाधारण परिवर्तन की तह मे तो शायद वे न पहुँच सके, परन्तु हर व्यक्ति किसी अज्ञात भावना द्वारा स्वय को प्रसन्न-चित्त तथा आह्लादित अनुभव करने लगा। हर कोई एक-दूसरे से वाजी मार ले जाना चाहता। हर दुकानदार अपनी दूकान चमकाने लगा।

सब्ज़ी-फरोश शहर से बेहतरीन सब्जियाँ मँगवाने लगा। हलवाई ने जीवन मे पहली बार तेल के पकौडे और जलेबियाँ तलने की बजाय वनस्पति घी के शक्करपारे, बेसनी कलाकद, बूँदी के लड्डू आदि स्वादु मिठाइयाँ तैयार करनी शुरू की। उन पर वह चाँदी के वर्क चिपकाकर और थालो मे चुनकर पक्ति-दर-पक्ति ऊपर नीचे इस तरतीव से सजाता और यो इतराकर चौकी पर बैठता कि मालूम होता, उसका जीवन भी उन मिठाइयो की तरह सुस्वादु तथा सुगधित हो गया है।

हज्जाम महोदय के कीलकाटे साफ-सुथरे और तेज़ हो गये। अब लोगो के सिर घोटने की बजाय विलायती कट तराशने लगा। दाढ़िया बनाते समय पहले वह मुंह पर केवल पानी चुपडता था, अब देसी साबुन घिसने लगा। अंधे आइने मे भी नई चमक आ गई।

अर्ज़ीनवीस ने शून्य मे घूरना छोड दिया था और अब हज्जाम से उस उस्तानी के बारे मे पूछताछ करनी शुरू कर दी थी, हालांकि स्वय हज्जाम उससे अधिक कोई परिचय न रखता था। अब वह उसकी मोटी-मोटी मूछो की ओर तीखी कडी नजरो से देखता हुआ यो मुस्करा उठता जैसे कह रहा हो—यह सरासर बेहूदगी है! भला केवल मूछे ही पौरुष का एक-मात्र लक्षण कैसे हो सकती है! यदि ऐसा होता तो अब तुम हर तीसरे-चौथे बावली पर अपने कपडे फटकने न जाते ...

पनवाडी शहर से दो बडे-बडे कैलडर ले आया था जिनमे चीनी स्त्रियो के चेहरे किसी बहुत बडी विजय का प्रतिबिम्ब लिए हुए थे। अर्ज़ीनवीस प्राय उन कैलडरो की ओर गर्हित दृष्टि से देखता हुआ कह उठता—"हुंह! ये

औरते क्या खाकर हमारी उस्तानी का मुकावला करेगी ! ऊह ! क्या चपटे नाक है—" पनवाडी की दूकान के सामने का कीचड अव गायव हो चुका था और उसका स्थान लकडी के एक वैच और लोहे की एक कुर्सी ने ले लिया था। पहर-रात तक लोग उस वैच और कुर्सी पर वैठे इधर-उधर की गप्पें हांकते रहते। वहुधा उस्तानी ही के सम्बन्ध मे वाते होती। अव पान भी खूब विकने लगे थे और कभी-कभी तो उसे अपने लिए लगाकर अलग रखा हुआ करारा पान भी ग्राहक के आग्रह पर दे देना पडता।

वैद्यराज के औपधालय मे भी कोरी चादर विछ गई। तकिये पर नया गिलाफ चढ गया। उधर शीशियो पर का धूल-धमक्कड भी झड चुका था। अव सिर दर्द और पेट दर्द के रोगी भी दवा-दारू के लिए आने-जाने लगे हालाकि पहले क्षय रोग के रोगी भी इधर का रुख न करते थे, मानो वहाँ का हर व्यक्ति नाजुक-मिजाज और सभ्य हो गया था और पेट दर्द के लिए घर मे अजवायन आदि फाकना उसे प्राचीन काल की वाते मालूम होती थी।

वूढे वजाज की दूकान पर अव खद्दर खाशे के साथ-साथ लट्ठे मलमल की झलक भी दिखाई देने लगी और गुड-शक्कर को मक्खियो के आक्रमण से वचाने के लिए वह कही से लोहे की जाली भी ले आया। उसके अपने अन्दर भी एक असाधारण परिवर्तन आ चुका था। फटी-पुरानी गाटे की कुर्तो की वजाय अव वह पूरी वाहो का साफ-सुथरा कुर्ता पहनने लगा था और घुटनो से ऊपर की कच्छ ने अधिया धोती का रूप धार लिया था। जाने क्यो अव वह अपनी आँखो मे काजल भी भर लाता और कीकर या फुलाह की दातुन करने की वजाय होठो पर मिस्सी घिस लाता, हालांकि उनकी आयु की मांग तो यह थी कि वह अपने वचे-खुचे दात भी निकलवादे।

प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे पर कुछ ऐसा सन्तोष तथा उल्लास नजर आने लगा जैसे उनकी स्त्रियां सुवह हँस-हँसकर उन्हे विदा करते हुए शाम को जल्दी घर लौट आने पर जोर दे चुकी हो और अव शाम की मुलाकात की कल्पना-मात्र से ही वे विशेष प्रकार का उन्माद अनुभव कर रहे हो; जैसे उनकी दुल्हिनो की

वाहो मे हाथी-दाँत का चूडा अभी तक मौजूद हो और माथे पर चाँद का टीका भी।

जहाँ कभी यह हाल था कि पहाड़-सा दिन काटे न कटता था, अब मालूम ही न होता कि समय के पख कहाँ से निकल आये है। दिये जलते ही वे घरो की तैयारी करते और तरह-तरह की चीजें—आम, खरबूजे, दही-बडे आदि—जो अत्यधिक मात्रा मे मिलने लगे थे, ले जाते। उनके जीवन का सुनहला युग आरभ हुआ। कई मनचले तो सायकाल के समय दूर के खेतो मे टहलने के विचार से अपनी पत्नियो को भी साथ ले जाने लगे। वहाँ खुली हवा खिलाने के वहाने वे उनके घूंघट उठवा देते और उनके चलने के ढग को यो सूक्ष्मता से देखते जैसे उस उस्तानी के साथ उनकी तुलना कर रहे हो।

उनकी दूकानो पर ग्राहको का ताता वधने लगा। मानो इससे पहले वहाँ किसी चीज की आवश्यकता ही न थी। दर्जी नये-नये डिज़ाइन के कुर्ते-शलवारें सीने लगा। मनियारी वाले ने आँवले का तेल और सुगन्धित सावुन शहर से मँगवाना शुरू कर दिया। अन्य दूकानो की तरह उस्तानी कभी-कभी उसकी दूकान पर भी अपनी ज़रूरत की चीजें लेने आ जाती थी। पहले-पहल वूरदार तौलिये, वढिया किस्म का सावुन आदि वह उसी की फर्माइश से शहर मे लाया था, लेकिन अव अन्य लोग भी इन चीजो का इस्तेमाल करने लगे थे। खरीदते समय वे वडी शान से कहते कि जो सावुन मेम साहव खरीदती हैं वही उन्हें दिया जाय। भला उनकी पत्नियाँ किसी मेम साहव से कम है ? या फिर कभी-कभी जव वह पनवाडी की दूकान पर कुछ क्षणो के लिए रुक जाती और सोडे की वोतलें सिग्रेट आदि घर भिजवाने का आदेश देती तो उसके चले जाने या पनवाडी के उस घर से लौट आने पर वहाँ चौकडी जम जाती और उससे कहा जाता कि वह विस्तारपूर्वक उसकी हर वात उन्हे सुनाये। एक वात उन सवके लिए वडे अचम्भे की थी कि वह सदैव मुँह-माँगे दाम देती थी।

कस्वे मे लडको के लिए तो वर्षो से एक प्राइमरी स्कूल चला आ रहा था लेकिन अव लडकियो के लिए ईसाइयो ने एक पाठशाला खोलने का प्रवन्ध किया था और उसी नई पाठशाला की अध्यापिका के रूप मे वह वहाँ आई

थी। शुरू-शुरू मे बाइस्कोप द्वारा उसके सहचर एक बूढे मिशनरी ने लडकियो की शिक्षा-दीक्षा के लाभ-गुण समझाये। स्वय उसने भी इस सम्बन्ध मे बहुत कुछ कहा, फलस्वरूप कुछ लोगो ने अपनी लडकियो को पाठशाला मे भरती करवा दिया।

नन्ही-नन्ही लडकियाँ जब घर आकर उस्तानी की सिखाई हुई सदा सच बोलने, साफ-सुथरा रहने तथा अपने से बडो का आदर करने की बातें अपनी माताओ को सुनाती तो उनका हृदय गद्गद् हो उठता। इसमे पूर्व तो उन्हे कभी अपनी सन्तान को साफ-सुथरा रखने का खयाल ही न आया था, लेकिन अब जैसे उन्हे अपने बच्चो के मैले-कुचैले वस्त्रो से घिन आने लगी। हर माँ यही चाहती कि उसके बच्चे दूसरो की अपेक्षा अधिक सुन्दर और प्यारे दिखाई दें। वे बडे चाव से उन्हे नहला-धुलाकर उजले वस्त्र पहनाती और कघी-चोटी करके पाठशाला को रवाना करती। घर मे जब कभी बच्चियाँ बड़ो की-सी बातें करने लगती तो मातायें कुछ इस शान से सिर ऊँचा उठाकर अपने पतियो की ओर देखती, मानो कहना चाहती हो—यह सब हमारी जाति ही के चमत्कार हैं। अन्यथा आप लोगो से तो दूकान मे आसन जमाकर ग्राहको की प्रतीक्षा के अतिरिक्त कोई और क्या सीख सकता है!

लेकिन जब पुरुष उस्तानी का जिक्र करते हुए उसकी हर बात दोहराने मे आनन्द अनुभव करने तो उन स्त्रियो के मन मे उस उस्तानी के प्रति कई प्रकार की शकायें उत्पन्न होने लगती और वे अपने पतियो की ओर सन्देह भरे नेत्रो से देखने लग जाती। तीन महीने बाद बजाज की स्त्री ने तो अपनी लडकी का पाठशाला जाना ही छुडा दिया। यो तो वह यही कहती थी कि उसे अपनी बेटी को मेम साहब नही बनाना, वह जैसी भी है अच्छी है, लेकिन वास्तव मे इस फैसले का आधार पति का काजल और मिस्सी थी। वह अपने अतीत के नीरव-नीरस जीवन मे पलट आना पसद कर सकती थी लेकिन यह बात उसके लिए असह्य थी कि उसका पति किसी अन्य स्त्री मे दिलचस्पी लेने लगे।

होते-होते अन्य स्त्रियो ने भी किसी-न-किसी बहाने अपनी बेटियो को पाठशाला भेजना बन्द कर दिया। अपने भीतर सुलग रही ज्वाला को वे इसके

अतिरिक्त किसी और रूप मे प्रकट न कर सकती थी। परिणाम यह हुआ कि पाठशाला मे लडकियो की सख्या उत्तरोत्तर घटती गई और एक दिन पाठशाला बिल्कुल ही सूनी हो गई।

बूढे मिशनरी ने बाइस्कोप द्वारा और वैसे ज़बानी भी बहुतेरा सिर पटका लेकिन अब जैसे लोग उसके दार्शनिकता-पूर्ण प्रस्ताव समझ ही न सकते थे। अर्ज़ीनवीस का खयाल था कि यदि उस बूढे खूसट की बजाय उस्तानी स्वय एक बार वही बातें दुहरा जाए तो नि.सन्देह हर बात की उपेक्षा करके सभी उसकी हाँ मे हाँ मिला देगे। स्वय उसकी तो कोई सतान न थी, लेकिन यदि वह उसकी ओर भी इस आशय से अपने मुस्कराते हुए नेत्रो से देख ले तो वह स्वय चोली-घागरा पहनकर उसका शिष्य बन जायगा।

वैद्यराज का कहना था कि ये ईसाई लोग बडी ढीठ प्रकृति के लोग होते है कोई लडकी जाय न जाय, एक बार जो पाठशाला खुली है तो अब कयामत तक खुली रहेगी। लेकिन पनवाडी इससे सहमत न था। वह यही कहता—"यह कैसे सभव है ? पान के पत्ते मे छालिया-इलायची कुछ न हो तो खाली पत्ता कोई कब तक चबाता रहेगा ?" शायद उस्तानी ने किसी समय इस प्रकार की कोई बात उससे कही होगी, क्योकि यही हुआ। डेढ महीने तक तो जैसे-तैसे पाठशाला के दरवाज़े पर बोर्ड लटकता रहा, उसके बाद एक दिन एक लारी शहर से आई और पाठशाला के बेंचो और मेज़-कुर्सियो के साथ बूढे मिशनरी और उस्तानी को भी लाद ले गई।

कस्बे के रग दिनोदिन फीके पडते चले गये, यहाँ तक कि हर चीज़ अपने पुराने ढर्रे पर आ गई।